सिरि अन्तगडदसाओ

(मूल, संस्कृत छाया, हिन्दी शब्दार्थ एवं भावार्थ सहित)

अनुवादक

जैनाचार्य श्री हस्तीमलजी महाराज

सम्पादक

गजसिंह राठौड़

चांदमल कर्णावट

प्रेमराज बोगावत

प्रकाशक

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, जयपुर-३

प्रकाशक :
सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल
बापू बाजार, जयपुर 302003

●

द्वितीय परिवर्तित एवं
परिवर्द्धित संस्करण :
1100

●

आंशिक द्रव्य सहायतादाता :
स्व० श्री भूरालालजी पाडलेचा
निवासी धनोप

●

मूल्य : १० ०० रु० मात्र

वीर सम्वत् २५०३
विक्रम सम्वत् २०३५
ईस्वी सन् १९७९

●

मुद्रक :
पॉपुलर प्रिन्टर्स
नवाब हवेली
त्रिपोलिया बाजार
जयपुर-२

प्रकाशकीय

श्री अन्तगडदशांग सूत्र का प्रथम संस्करण मण्डल के द्वारा कुछ वर्षों पूर्व प्रकाशित हुआ। थोड़े समय में ही उसकी प्रतियां समाप्त हो गई।

इसके बाद द्वितीय संस्करण शीघ्र ही प्रकाशित करने का निर्णय मंडल ने लिया। उस समय मण्डल के समक्ष एक सुझाव आया कि प्रथम संस्करण में जहां मूल सूत्रपाठ एवं उसका सरल हिन्दी अर्थ ही लिया गया वहां इस संस्करण में संस्कृत छाया एवं सरल हिन्दी भावार्थ भी और जोड़ दिया जाय तो स्वाध्याय संघ के भाइयों को एवं अन्य स्वाध्याय रसिकों को इस आगम सूत्र के अर्थ बोध में और भी सुगमता होगी।

हमें सुझाव पसन्द आया। इसके लिये आचार्य गुरुदेव से प्रार्थना की गई। गुरुदेव ने कृपा की। उनके मार्ग-दर्शन में यह परिवर्द्धित संस्करण तैयार हुआ। श्री गजसिंहजी राठौड़ श्री चांदमल जी कर्णावट एवं श्री प्रेमराज जी बोगावत जैसे जैनागम-ज्ञाता विद्वानों का सम्पादन सहयोग इसमें हमें मिला। इसकी हमें प्रसन्नता है। हम इन सम्पादक बन्धुओं के प्रति अपना हार्दिक आभार प्रकट करते हैं। पूज्य गुरुदेव के आशीर्वाद का तो यह सुफल है ही। उनका यह मण्डल चिरऋणी रहेगा।

इसका अंग्रेजी अनुवाद भी इसके साथ देने की हमारी भावना थी पर कई व्यावहारिक कठिनाइयों के कारण इसे फिलहाल हमें स्थगित रखना पड़ा। आशा और विश्वास है कि स्वाध्याय रसिक साधक वृन्द इस ग्रन्थ के इस परिवर्द्धित रूप को अधिक पसन्द करेंगे एवं इससे अधिक से अधिक लाभ उठाकर अपनी स्वाध्याय प्रवृत्ति को बढ़ाएंगे तो हम अपने श्रम को सार्थक समझेंगे।

सोहननाथ मोदी
अध्यक्ष

चन्द्रराज सिंघवी
मंत्री

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल

उद्गार

(आचार्य श्री हस्तिमल जी महाराज सा)

धर्म शास्त्र की महिमा

शास्त्र किसे कहते हैं ? इसकी अगर शाब्दिक परिभाषा की जाय तो भाषा शास्त्र के अनुसार 'शासन करने वाले' या 'मानव मन को अनुशासित बनाने वाले' ग्रन्थ को 'शास्त्र' कहते हैं जो तद् तद् विषयानुकूल अनेक प्रकार के होते हैं—जैसे अर्थ शास्त्र, काम शास्त्र, भाषा शास्त्र, समाज शास्त्र, व्याकरण शास्त्र, वास्तु शास्त्र, रसायन शास्त्र, नीति शास्त्र, और धर्म शास्त्र आदि आदि। उपर्युक्त अन्य शास्त्र जहा मनुष्य की भौतिक इच्छा, शाब्दिक ऊहा पोह, रत्न परिविज्ञान एवं कामादि लालसा को जागृत कर उसे स्वार्थ परायण और संघर्षशील बनाते हैं, वहाँ 'धर्म शास्त्र' मानव को भौतिक प्रपंच से मोड़कर कर्त्तव्य-परायण, आत्माभिमुखी और विश्व हितैषी बनाता है। वह मानव की पापानुबंधी बहिर्मुखी कलुषित मनोवृत्ति को दबाकर उसे पुण्यानुबंधी अन्तर्मुखी बनने की प्रेरणा देता है। जैसे पारस का सम्पर्क लोह को बहुमूल्य सुवर्ण बना देता है, वैसे ही धर्म शास्त्र भी आत्म परायण नर को नारायण बना देता है, इसलिए किसी विद्वान् ने ठीक ही कहा है कि—

> श्लोको वर परम तत्त्व-पथ प्रकाशी,
> न ग्रन्थ-कोटि-पठनं जन रंजनाय।
> संजीवनीति वरमौषधमेकमेव,
> व्यर्थ श्रमस्य जननी न तु मूल-भार॥

अर्थात् परम तत्व के मार्ग को बताने वाला एक श्लोक भी अच्छा किन्तु जन रंजन के लिए करोडों ग्रन्थों का पढ़ना भी श्रेष्ठ नहीं। संजीवनी जडी का एक टुकडा भी अच्छा किन्तु श्रम में भार वहन कराने वाला मूले का भार हितकर नहीं।

धर्म शास्त्र की इस महिमा के कारण ही महर्षियों ने इसकी श्रुति तक को दुर्लभ बताया है। जैसा कि कहा है—

"सुई धम्मस्स दुल्लहा" धर्म का सुनना दुर्लभ है। वस्तुत तो संसार को सन्मार्ग पर ले चलने का सारा श्रेय धर्म शास्त्र को ही है।

धर्मशास्त्र और द्वादशांगी

महिमाशाली होकर भी साधारण धर्म शास्त्र मानव जगत का उतना कल्याण नहीं कर पाते जितना कि उनसे अपेक्षित है। जिनके गायक या रचयिता स्वयं ही सरागी, भोगी एवं अज्ञान युक्त हैं, वे ग्रन्थ भला मानव का अभिलपित उपकार कहां तक कर सकते हैं? अतः वीतराग, आप्त पुरुषों की वाणी या तदनुकुल सत्पुरुषो की वाणी ही मानव-कल्याण में समर्थ मानी गई है।

अनादिकाल की नियत मर्यादा है कि तीर्थंकर भगवान को जब केवलज्ञान की प्राप्ति हो जाती है तब वे श्रुत धर्म और चारित्र धर्म की देशना देकर चतुर्विध संघ की स्थापना करते हैं। उस समय उनके परम प्रमुख शिष्य गणधर प्रत्यक्षदर्शी तीर्थंकरों की अर्थ रूपी वाणी को ग्रहण कर उसे सूत्र रूप में गूंथते हैं जैसे चतुर माली लता से गिरे हुए फूलों को एकत्र कर हार बनाता है और उससे मानव का मनोरंजन करता है।

गणधरों द्वारा गूंथे गये (रचे गये) वे प्रमुख सूत्र-शास्त्र ही द्वादशांगी के नाम से कहे जाते हैं। जैसे कि कहा है—

अत्थं भासइ अरहा, सुत्तं गंथंति गणहरा निउणं।
सासणस्स हियट्ठाए तओ सुत्तं पवत्तइ ॥

अर्थात् तीर्थंकर भगवान अर्थ रूप वाणी बोलते हैं और गणधर उसको ग्रहण कर शासन हित के लिए निपुणता पूर्वक सूत्र की रचना करते हैं तब सूत्र की प्रवृत्ति होती है। शब्दरूप से सादि सान्त होकर भी यह द्वादशांगी श्रुत अर्थ रूप से नित्य एव अनादि अनन्त कहा गया है। जैसा कि नन्दी सूत्र मे उल्लेख है—

"से जहा नामए पंच अत्थि काया न कयाइ नासी न कयाइ न भवइ, न कयाइ न भविस्सइ, भुविं य, भवइ य, भविस्सइ य, धुवे नियए सासए अक्खए अव्वए अवट्ठिए णिच्चे एवमेव दुवालसंगे गणिपिडगे न कयाइनासी।"

अर्थात् पंचास्तिकाय की तरह कोई भी ऐसा समय नही था, नहीं है, और नहीं होगा जबकि द्वादशांगी श्रुत नही था, नही है या नही रहेगा। अतः यह द्वादशांगी नित्य है। जैसाकि पहले कह गए हैं कि शब्द रूप से द्वादशांगी सादि सान्त है। प्रत्येक तीर्थंकर के समय गणधरो द्वारा इसकी रचना होती है। फिर भी अर्थरूप से यह नित्य है। इस प्रकार महर्षियों ने शास्त्र की अपौरुपेयता का भी समाधान कर दिया है। उन्होने अर्थरूप से शास्त्र ज्ञान को नित्य अपौरुपेय एवं शब्द रूप से सादि पौरुपेय कहा है।

श्वेताम्बर परम्परा के अनुसार अब भी द्वादशांगी के ग्यारह अंग शास्त्र विद्यमान हैं और सुधर्मा स्वामी की वाचना प्रस्तुत होने से इनके रचनाकार भी सुधर्मा स्वामी माने

गए हैं। आचारांग १, सूत्रकृतांग २, स्थानांग ३, समवायांग ४, विवाह प्रज्ञप्ति ५, ज्ञाता-धर्म कथा ६, उपासक दशा ७, अंतकृत दशा ८, अनुत्तरौपपातिक दशा ९, प्रश्न व्याकरण १०, और विपाक सूत्र ११। इनमें अन्तकृत दशा का आठवां स्थान है। उपांग, मूल, छेद और प्रकीर्ण सूत्रों की अपेक्षा प्रधान होने से इनको अंग शास्त्र माना गया है।

नाम और महत्व

प्रस्तुत शास्त्र "अंतगडदसा" के नाम की सार्थकता स्वयं इसके अध्ययन से विदित हो जाती है। यद्यपि मोक्षगामी पुरुषों की गौरव गाथा तो अन्य शास्त्रों में भी प्राप्त होती है, पर इस शास्त्र में केवल उन्हीं संत सतियों के जीवन परिचय हैं, जिन्होंने इसी भव से जन्म-जरा-मरण रूप भवचक्र का अंत कर दिया अथवा अष्ट विध कर्मों का अन्त कर जो सिद्ध-बुद्ध-मुक्त हो गए। सदा के लिए संसार लीला का अंत करने वाले 'अंतगड' जीवों की साधना दशा का वर्णन करने से ही इसका 'अंतगडदसाओ' नाम रक्खा गया है।

इसके पठन पाठन और मनन से हर भव्य जीव को अंत क्रिया की प्रेरणा मिलती है, अतः यह परम कल्याणकारी ग्रन्थ है। उपासक दशा में एक भव से मोक्ष जाने वाले श्रमणोपासकों का वर्णन है, किन्तु इस आठवें अंग 'अन्तकृत दशा' में उसी जन्म में सिद्ध गति प्राप्त करने वाले उत्तम श्रमणों का वर्णन है। अतः परम-मंगलमय है और इसी लिये लोक जीवन में इसका महत्वपूर्ण स्थान है।

वर्णन शैली

ग्रन्थों की रोचकता को उनकी वर्णन शैली से भी आंकने की प्रथा है। अच्छी से अच्छी बातें भी अरोचक ढंग से कहने पर उतना असर नहीं डालतीं जितना कि एक साधारण बात भी सुन्दर व व्यवस्थित ढंग से कहने पर श्रोतृ चित्त को आकृष्ट कर लेती है। प्रस्तुत ग्रन्थ की वर्णन शैली भी व्यवस्थित है। इसमें प्रत्येक साधक के नगर, उद्यान, चैत्य-व्यंतरायतन, राजा, माता पिता, धर्माचार्य, धर्मकथा, इहलोक एवं परलोक की ऋद्धि, पाणिग्रहण और दाति प्रीतिदान, भोगों का परित्याग प्रव्रज्या, दीक्षाकाल, श्रुतग्रहण, तपोपधान, संलेखना और अन्त क्रिया स्थान का उल्लेख किया गया है।

'अंतगडदसा' में वर्णित साधक पात्रों के परिचय से प्रकट होता है कि श्रमण भगवान महावीर के शासन में विभिन्न जाति एवं श्रेणी के व्यक्तियों को साधना में समान अधिकार प्राप्त था। एक ओर जहां क्षत्रिय राजपुत्र राजरानी और गाथापति साधना-पथ में चरण से चरण मिला कर चल रहे हैं, दूसरी ओर वहीं कतिपय उपेक्षित वर्ग वाले और मनुष्य घाती तक भी ससम्मान इस साधना क्षेत्र में आकर समान रूप से आगे बढ़ रहे हैं। कर्मक्षय कर सिद्ध-बुद्ध एवं मुक्त होने में किसी को कोई रुकावट नहीं बाधा नहीं। 'हरि को भजे सो हरि को होई' वाली लौकिक उक्ति अक्षरशः चरितार्थ हुई है। कितनी

समानता-समता और आत्मीयता भरी थी उन सूत्रकारो के मन मे ? वय की दृष्टि से अतिमुक्त जैसे बाल मुनि और गज सुकुमार जैसे राजप्रासाद के दुलारे गिने जाने वाले भी इस क्षेत्र में उतर कर सिद्धि प्राप्त कर गये। शास्त्रकार की वह रचना शैली विश्व के मानव मात्र को कल्याण साधना में पूर्णरूप से प्रेरित एवं उत्साहित करती है।

परिचय

समवायांग में "अन्तगडदसा" का परिचय इस प्रकार मिलता है-अन्तगडदशा में अन्तकृत आत्माओ के नगर, उद्यान, चैत्य-व्यंतरालय, वनखंड, राजा, माता पिता, समवसरण, धर्माचार्य, धर्मकथा, लौकिक और पारलौकिक ऋद्धि, भोग, परित्याग, प्रव्रज्या, श्रुतग्रहण, उपधान-तप, प्रतिमा, बहुत प्रकार की क्षमा, आर्जव, मार्दव, शौच और सत्य सहित १७ प्रकार का संयम, उत्तम ब्रह्मचर्य, अकिंचनता, तपः क्रिया और समिति गुप्ति तथा अप्रमाद योग, उत्तम संयम प्राप्त पुरुषो के स्वाध्याय-ध्यान का लक्षण, चार प्रकार के कर्म क्षय करने पर केवल ज्ञान की प्राप्ति, जिन्होंने संयम का पालन किया-पादोपगमन सथारा और जहा जितने भक्त का छेदन करना था वह करके अन्तकृत मुनिवर अज्ञान रूप अन्धकार से मुक्त हो सर्व श्रेष्ठ मुक्तिपद प्राप्त कर गये, ऐसे अन्यान्य वर्णन भी इसमें विस्तार के साथ कहे गए हैं।

अन्तकृतदशा सूत्र की परिमित वाचना एवं संख्येय अनुयोग द्वार हैं, यावत् संख्येय संग्रहणी है। अंग की अपेक्षा यह आठवां अंग है इसके एक श्रुत स्कन्ध-दश अध्ययन और सात वर्ग हैं। दश उद्देशन काल और दश ही समुद्देशन काल बतलाए हैं। (सम०पृ० २५१ हैदराबाद वाला)

नन्दी सूत्र-गत परिचय से समवायांग के इस परिचय में यह विशेषता है कि यहां क्षमा, आर्जव, मार्दव, शौच आदि यति धर्म का स्वरूप बताने के साथ स्वाध्याय और ध्यान का लक्षण भी बताया गया है। सम्भव है आज का 'अन्तगडदशा' कोई भिन्न वाचना का हो। इसमें स्त्री पुरुष, बालक और वृद्ध साधकों की कठोर साधना गायी गई है। महामुनि गज सुकुमाल के आत्मध्यान का भी वर्णन है। पर उसमें ध्यान की विशेष परिपाटी या लक्षण का पृथक कोई उल्लेख नही मिलता। कदाचित् सक्षेपीकरण के समय देवर्द्धिगणी ने कम कर दिया हो, अथवा प्राप्त वाचना मे इसी प्रकार का पाठ हो।

अध्ययन और वर्ग का परिचय भी समवायांग सूत्र में भिन्न प्रकार से है। नन्दीकार जहां "अन्तगडदसा" का एक श्रुत स्कन्ध, आठ वर्ग और आठ ही उद्देशन काल बताते हैं, वहा समवायांग मे एक श्रुत स्कन्ध, दश अध्याय तथा ७ वर्ग बतलाए हैं। आचार्य श्री अमोलक ऋषिजी म०ने दश अध्याय का एक वर्ग और सात वर्ग यों आठ वर्ग लिखे हैं। पर उद्देशन काल दश कहे हैं, जबकि नन्दी सूत्र में आठ उद्देशन काल बतलाए हैं।

इससे प्रमाणित होता है कि समवायांग सूत्र निर्दिष्ट 'अन्तगडदसा' वर्तमान 'अन्तगडदसा' से कोई भिन्न था। वर्तमान में उपलब्ध सूत्र ही नन्दी सूत्र में निर्दिष्ट अन्तगडदसा है।

अंतगडदसा की तप साधना

अन्तकृद्दशा सूत्र के वर्णनों पर गहराई से चिंतन किया जाय तो साधना क्षेत्र की विविध सामग्रियाँ उपलब्ध होती हैं।

सामान्य तौर से संयम और तप की विमल साधना से मुक्ति की प्राप्ति मानी गयी है। संयम का साधन ज्ञानपूर्वक ही होता है, अतः उसके लिए जीवाजीवादि का तत्व ज्ञान आवश्यक माना गया है। विषय कषाय को जीतने के लिए ज्ञान या ध्यान का बल पुष्ट साधन है और तप, ज्ञान ध्यान का साधन है, अथवा ज्ञान ध्यान स्वयं भी एक प्रकार का तप है। फिर भी व्यवहार दृष्टि से यह जिज्ञासा हो सकती है कि ज्ञान साधना से मुक्ति होती है ? या ध्यान से अथवा कठोर तप साधन से या उपशम से ?

अन्तगडदसा सूत्र के मनन से ज्ञात होता है कि गौतम आदि, १८ मुनियों के समान १२ भिक्षु प्रतिमा एवं गुणरत्न-संवत्सर तप की साधना से भी साधक कर्म क्षय कर मुक्ति मिला लेता है। अनीक सेनादि मुनि १४ पूर्व के ज्ञान में रमण करते हुए सामान्य बेले २ की तपस्या से कर्म क्षय कर मुक्ति के अधिकारी बन गए। अर्जुनमाली ने उपशमभाव-क्षमा की प्रधानता से केवल छह मास बेले २ की तपस्या कर सिद्धि मिलाली। दूसरी ओर अतिमुक्त कुमार ने ज्ञान-पूर्वक गुण रत्न-तप की साधना से सिद्धि मिलाई और गज सुकुमाल ने बिना शास्त्र पढ़े और लम्बे समय तक साधना एवं तपस्या किए बिना ही केवल एक शुद्ध ध्यान के बल से ही सिद्धि प्राप्त करली। इससे प्रकट होता है कि ध्यान भी एक बड़ा तप है। काली आदि रानियों ने संयम लेकर कठोर साधना की और लम्बे समय से सिद्धि मिलाई। इस प्रकार कोई सामान्य तप से, कोई कठोर तप से, कोई क्षमा की प्रधानता से तो कोई अन्य केवल आत्म ध्यान की अग्नि में कर्मों को झोंक कर सिद्धि के अधिकारी बन गए।

अभिप्राय यह है कि शास्त्रों का गम्भीर अभ्यास और लम्बे काल का कठोर तप चाहे हो या न हो यदि कर्म हल्के हैं और आत्मध्यान में मन अडोल है तो अल्प काल में भी मुक्ति हो सकती है।

विविध प्रकार के तप

अन्तगडदसा सूत्र में ध्यान की साधना का तो स्पष्ट रूप नहीं मिलता, पर तपस्या के अनेकों प्रकार उपलब्ध होते हैं। सर्व प्रथम १२ भिक्षु प्रतिमाओं का वर्णन है, जिनका

विस्तृत उल्लेख दशाश्रुत स्कंध में मिलता है। दूसरा गुण रत्न संवत्सर तप है जो गौतमकुमार आदि मुनियों के द्वारा साधा गया है। इसके लिए सैलाना से प्रकाशित अन्तगडदसा के टिप्पण मे ऐसा लिखा है कि प्राचीन धारणा के अनुसार इसका आराधना काल ऋतुवद्ध याने ८ मास है; परन्तु भगवती सूत्र शतक २ उद्देश १ में खंदक मुनि के अधिकार में इसका रूप इस प्रकार उपलब्ध होता है। जैसे–पहले महीने एकांतर उपवास का पारणा करना, दूसरे महीने में दो दो उपवास का पारणा करना, तीसरे महीने तीन तीन उपवास का पारणा करना, चौथे महीने ४-४ उपवास का पारणा, पांचवें महीने में ५–५ का–छठे महीने में ६–६ का–इस प्रकार वढ़ते हुए १६वें महीने में १६।१६ उपवास का पारणा करना, दिन को उत्कट आसन से आतापना लेना और रात में वीरासन से खुले वदन डांस आदि के परिषह सहना। यह इस तप का स्वरूप वताया गया है।

तीसरा तप है रत्नावली—इसमें एक उपवास से लेकर ऊंचे १६ तक की तपस्या चढ़ाव उतार से की जाती है। मध्य मे वेले और आदि अन्त मे उपवास, वेला तेला की तपस्या की जाती है। चारो परिपाटियों में चार वर्ष ३ मास और ६ दिन तप के और ३५२ पारणा के दिन होते हैं।

चौथा तप है कनकावली—रत्नावली के समान ही इसमें भी उपवास से १६ तक तप का चढ़ाव उतार होता है। अन्तर केवल इतना है कि इसमे ३ स्थान पर रत्नावली के षष्ठ तप के वदले अष्टम तप किया जाता है। चारों परिपाटी में ४ वर्ष ६ मास और २६ दिन का तप और ३५२ पारणे होते हैं। एक परिपाटी में १ वर्ष दो मास और १४ दिन का तप तथा ८८ पारणे होते हैं।

पांचवां तप है लघुसिंह निष्क्रीड़ित—इसमें जैसे शेर आगे पीछे कदम रखता है, वैसे ही उपवास से लेकर ५ तक की तपस्या में आगे वढ़ना और पीछे हटना। इस प्रकार ४ परिपाटियाँ की जाती हैं। एक में ५ मास और ४ दिन के तप एवं ३३ पारणे होते हैं। चार के १ वर्ष ८ मास १६ दिन के तप और १३२ पारणे होते हैं।

छठा तप महासिंह निष्क्रीडित—इसमें ऊचे से ऊचे १६ तक का तप होता है। साधना काल ६ वर्ष २ मास और १२ दिन मे ५ वर्ष ६ मास और ८ दिन तप के तथा २४४ पारणे होते हैं।

सातवां तप सप्त सप्तमिका भिक्षु प्रतिमा, आठवां अष्ट अष्टमिका भिक्षु प्रतिमा नवमा नव नवमिका भिक्षु प्रतिमा और दशवां दश दशमिका भिक्षु प्रतिमा है।

ये चारों तप साधुओं की अपेक्षा से कहे गए हैं। इन चारों प्रतिमाओं में भोजन की दाती की अपेक्षा तप का आराधन किया जाता है। सप्त सप्तमिका मे प्रथम सप्ताह में एक दत्ति भोजन की व एक दत्ति जल की, दूसरे सप्ताह में दो दो, यावत् सातवें सप्ताह में सात दत्ति भोजन की, और सात ही जल की ग्रहण की जाती है। इसके तप दिन ४६ होते-

हैं। ऐसे अष्ट अष्टमिका के ६४ दिन, नव नवमिका के ८१ दिन और दश दशमिका के १०० दिन होते हैं। दिन के प्रमाण से प्रथम अष्टक में १ दत्ति और आठवें में आठ दत्ति इस प्रकार नव नवमिका में नव दिन और दशमिका में दश दिन से एक एक दत्ति बढ़ानी चाहिए।

ग्यारहवां तप लघु सर्वतोभद्र प्रतिमा है इसमें अनानुपूर्वी क्रम से १ उपवास से ६ उपवास तक ५ लाइन की जाती है। एक परिपाटी में ७५ दिन का तप और २५ पारणे होते हैं। इस प्रकार चार परिपाटी में तप की पूर्ण आराधना की जाती है।

बारहवां महासर्वतोभद्र तप है, इसमें एक उपवास से ७ उपवास तक पूर्व कथित प्रकार से किये जाते हैं। एक परिपाटी में १९६ दिन तप और ४९ पारणे होते हैं।

तेरहवीं भद्रोत्तर प्रतिमा है इस तप में ५।६।७।८।९ इस प्रकार अनानुपूर्वी से पांच पंक्ति में तपस्या की एक परिपाटी पूर्ण होती है। जिसमें ६ मास २० दिन का समय लगता है। तप के दिन १७५ और २५ पारणे होते हैं।

चौदहवां आयंबिल वर्धमान तप है। इसमें १ से १०० तक आयंबिल बढाये जाते हैं। पारणा के बिच बीच में उपवास किया जाता है। आयंबिल के कुल दिन ५०५० और १०० दिन के उपवास होते हैं। साधारण सा दिखने पर भी यह तप बड़ा महत्वशाली और कठिन है।

पन्द्रहवां मुक्तावली तप है। इसमें ऊंचे से ऊंचा १६ तक का तप होता है। एक परिपाटी में २८५ दिन का तप और ६० पारणे होते हैं। चारों परिपाटियां ३ वर्ष और १० मास में पूर्ण की जाती हैं।

पर्युषण में अन्तगड का वाचन

बहुत बार यह जिज्ञासा होती है कि पर्युषण में अन्तगड का वाचन आवश्यक क्यों माना जाता है? अन्य किसी सूत्र का वाचन क्यों नहीं किया जाता? बात ठीक है, शास्त्र सभी मांगलिक हैं और उनका पर्व दिनों में वाचन भी हो सकता है, कोई दोष की बात नहीं है। विचार केवल इतना ही है कि पर्वाधिराज के इन अल्प दिनों में वैसे सूत्र का वाचन होना चाहिये जो आठ ही दिनों में पूरा हो सके और आत्म साधना की प्रेरणा देने में भी पर्याप्त हो, अंग या उपांग शास्त्रों में ऐसा कोई अंग सूत्र नहीं जो इस मर्यादित काल में पूरा हो सके। अनुत्तरोपपातिक दशा है तो वह अति लघु होने के साथ इतनी प्रेरक सामग्री प्रस्तुत नहीं करता। फिर उसमें वर्णित साधक अनुत्तर विमान के ही अधिकारी होते हैं मोक्ष के नहीं। परन्तु अन्तकृतदशा में ये दोनों बातें हैं वह अति लघु या महत् आकार में नहीं है, साथ ही उसमें ऐसे ही साधकों की जीवन गाथा है जो तप संयम से कर्म क्षय कर पूर्णानंद के भागी बन चुके हैं। अन्तकृतदशा के उद्देश समुद्देश का काल भी ८ दिन

का है और पर्यू पण का अष्टान्हिक पर्व भी अष्टगुणों की प्राप्ति एवं अष्ट कर्मों की क्षीणता के लिये है। अतः पर्यू पण मे इसी का वाचन उपयुक्त है। प्रस्तुत सूत्र मे छोटे वड़े ऐसे साधकों की जीवन गाथा वताई है जिनसे आवाल वृद्ध सव नर नारी प्रेरणा ले सकें और अपनी योग्यता के अनुसार साधना कर आत्मा का विकास कर सके। यही खास कारण है कि पूर्वाचार्यो ने पर्यू पण के अष्टान्हिक पर्व में आठ वर्ग वाले इस मंगलमय शास्त्र का वोधप्रद वाचन निश्चित किया।

जैसे मंगल हेतु एवं ऐतिहासिक परिचय प्रदान करने को कल्पसूत्र में महावीरादि के पंच कल्याण और पट्टावली का वाचन आवश्यक माना गया है, वैसे ही लगता है कि आत्म साधना मे प्रेरणा प्रदान करने के लिए अन्तकृतदशा का वाचन भी आरम्भ किया गया हो। वीर निर्वाण ९९३ के समय कल्प सूत्र का सामूहिक वाचन होने लगा था सभव है उस समय साधना प्रेमी सतों ने यह सोचकर कि कल्पसूत्र मे केवल तीर्थकर भगवान् की गुण गाथा है। चतुर्विध संघ को साधना के लिये वैसी प्रेरणा दायक सामग्री नही है अतः इसका वाचन आवश्यक माना हो, अथवा तो समाज मे आडम्वर और जन्म महोत्सव की भक्ति आदि की ओर वढते मोड को वदलने के लिये अन्तकृतदशा का वाचन चालू किया हो। इतना सुनिश्चित है कि पर्वाधिराज में अन्तगडदशा का वाचन सहेतुक एवं उपयोगी है।

प्राप्त टीका और प्रकाशन

अन्तगडदशा पर कुछ टीका ग्रथ है, जैसे-अभयदेवसूरि कृत संस्कृत टीका, प्राचीन टव्वा, पडित रत्न श्री घासीलालजी महाराज कृत सस्कृत टीका। हिन्दी, गुजराती, अनुवाद भी प्राप्त होते हैं। इस सूत्र के अनेक स्थानो से मूल टीका और अनुवाद के प्रकाशन हो चुके हैं। उनमे—

१–सर्वप्रथम राय धनपतसिह वहादुर का टीका और गुजराती टव्वा सहित अतिशुद्ध नही होने पर भी इसका वडा उपयोग हुआ, कागज साधारण होने से वह अधिक स्थिर नही रह सका।

२–आगमोदय समिति सूरत से सशोधित, संयुक्त प्रकाशन–अन्तकृतदशा और अनुत्तरोपपातिक सटीक।

३–पूज्य अमोलखऋषि जी महाराज कृत हिन्दी अनुवाद, लाला ज्वाला प्रसाद जी की ओर से, हैदरावाद का प्रकाशन।

४–पडित रत्न श्री घासीलाल जी महाराज कृत संस्कृत टीका और हिन्दी गुजराती अनुवाद सहित, अहमदावाद।

५–उपाध्याय श्री प्यारचन्द जी महाराज कृत हिन्दी भाषा अनुवाद सहित।

६–पंडित घेवरचन्द जी बांठिया द्वारा अनुदित मूल अनुवाद, सैलाना। यह पुस्तकाकार एव सरल है।

७–सुत्तागम समिति 'गुडगाव' और अमोल जैन ज्ञानालय धूलिया से प्रकाशित मूल। धूलिया की प्रति प्राय शुद्ध एव सुवाच्य होने के साथ विशिष्ट शब्द कोष सहित है। इसके अतिरिक्त एक दो गुजराती सस्करण भी होंगे।

उपरोक्त प्रकाशनों से मूल और सस्कृत-भाषी विद्वानों की जिज्ञासा की तो पूर्ति हो जाती है, किन्तु शुद्ध मूल के साथ शब्दानुलक्षी अर्थ की जिज्ञासा रखने वाले पाठकों की आवश्यकता पूर्ण नही होती। इधर पर्यूषण के दिनों में प्राय सर्वत्र इसका वाचन होता है। इसी आवश्यकता को पूर्ण करने के लिये सूत्र का मूल सशोधन के साथ भाषानुवाद भी तैयार करना आवश्यक हुआ। अब तक के अनुवादों की अपेक्षा इसमें यह खास ध्यान रखा गया है कि अनुवादों में कोई खास शब्द छूटने नही पाये, सरलता के लिए अर्थ भी सामने पेज पर इसीलिए दिया है कि पाठक मूल की ओर ध्यान रख कर पढे तो सहज में बोध प्राप्त कर सकें। इसके अतिरिक्त परिशिष्ट में शब्द कोश देकर उसमें विशिष्ट पदों का सरल हिन्दी अर्थ करने का प्रयास किया गया है। समास युक्त और सम्बन्धित पदों को एक साथ देकर लिखा है। करीब २ सम्पूर्ण शब्दों को लेने का प्रयास किया गया है, फिर भी समय की अल्पता और कार्य की गुरुता से सम्भव है कोई पद छूट गया हो अथवा अर्थ में कहीं स्खलना हो तो सुज्ञ पाठक ध्यान से पढकर उसे सुधार लें। अर्थ और पाठ शुद्धि में निम्न पुस्तकों का उपयोग किया है–१ उपाध्याय श्री प्यारचन्द जी महाराज द्वारा अनूदित पत्राकार प्रति, २ सैलाना से प्रकाशित पुस्तक ३ प्राचीन हस्तलिखित प्रति, ४ आगमोदय समिति से प्रकाशित सटीक अन्तकृतदशा और ५ भगवती सूत्र का स्कधक प्रकरण।

मूल की पाण्डुलिपि तैयार करने में जैन रत्न विद्यालय के मास्टर जगदीशचन्द्र और विद्यालय के स्नातक श्री रतनलाल बाफणा ने पूरा सहयोग दिया, और शब्द कोष का चयन करने मे मास्टर चांदमलजी कर्णावट और पारसमल जी 'प्रसून' का सहयोग भुलाने योग्य नही है। विद्यालय के स्नातक चांदमलचन्द जी ओस्तवाल तथा दो विद्यार्थियों का लेखन में हार्दिक सहयोग भी अवश्य स्मरणीय है। विद्यालय के मास्टर और इन विद्यार्थियों ने श्रुत सेवा के इस पुनीत कार्य में योगदान देकर अवश्य श्रुत सेवा के साथ अपने लिए पुण्य लाभ उपार्जन किया है। शब्द कोष मे कई पद पुनरावृत्त भी हो गये है।

उपयोग पूर्वक कार्य करने पर भी वीतराग-वाणी से कही विपरीत लिखा हो, तो हार्दिक पश्चात्ताप के साथ मैं अपने उद्गार समाप्त करता हू।

श्रावण पूर्णिमा
स २०२०
पीपाड शहर

उपाध्याय गजेन्द्र मुनि

(सन् १९६४ में प्रकाशित प्रथम सस्करण से उद्धृत)

(इस द्वितीय संस्करण के सम्बन्ध मे)

यह संस्करण जैसा भी है पाठको के हाथो मे है । इसमे प्रयास किया गया है कि पाठको को और भी सरलता मे मूल पाठ का अर्थ ज्ञात हो जाय । कालम प्रणाली को अपनाने के पीछे भी यही भावना निहित है यद्यपि इसमे सस्कृत छाया भी दे दी गई है। इन सब कारणो से प्रथम आवृत्ति की तरह इसमे शब्दकोप के लिये अतिरिक्त परिशिप्ट देने की आवश्यकता नही रही ।

परिशिष्ट मे उन उन शब्दो का टिप्पण के तौर पर विस्तृत अर्थ भी दे दिया गया है जिन को मूल पुस्तक मे अंकित किया गया है ।

सामान्य जानकारी रखने वाले संस्कृतज्ञ को भी सरलता से शब्द का अर्थ ज्ञात हो सके इस दृष्टि से व्याकरण सम्बन्धी कुछ सामान्य नियमो जैसे विसर्ग सधियो आदि की छूट रखदी गई है । आशा है विद्वज्जन इसे इसी भावना से लेंगे ।

प्रस्तुत सस्करण मे कालम पद्धति अपनाने के कारण पुस्तक का कलेवर वढा है एवं साथ ही कागज का खर्च भी । फिर भी अगर इस पद्धति से जिज्ञासुओ को सरलता अनुभव हुई तो हम अपने श्रम को सार्थक समझेंगे ।

आशा है जिज्ञासु विद्वज्जनो को यह परिवर्तित एवं परिवर्द्धित सस्करण विशेप रुचिकर, सरल एवं सुवोध लगेगा ।

५. पंचम वर्ग (१०)

६ षष्ठम वर्ग (१६)

७ सप्तम वर्ग (१३)

८ अष्टम वर्ग (१०)

सिरि अन्तगडदसाओ

(श्री अन्तकृद्दशांगसूत्रम्)

(श्री अन्तगडदशांग सूत्र)

श्रीमद् गणधर सुधर्मस्वामि-वाचनानुगतम्

निग्गंठपवयणेसु अट्ठमंगसूयाणं

सिरि अन्तगडदसाओ

(श्री अन्तकृद्दशाङ्गसूत्रम्)

(अष्टममङ्गम्)

(मूल, संस्कृत-हिन्दी छाया, हिन्दी अर्थ सहित)

उत्थानिका

सूत्र १

[मूल सूत्र पाठ]	[संस्कृत छाया]
तेणं कालेणं तेणं समएणं	तस्मिन् काले तस्मिन् समये
चम्पा णामं णयरी होत्था,	चम्पा नाम नगरी अभवत्,[1]
वण्णओ ।	वर्ण्यः ।[2]
तत्थ णं चम्पाए णयरीए	तत्र चम्पायां नगर्यां
उत्तर-पुरत्थिमे दिसिभाए	उत्तरपौरस्त्ये दिग्भागे
एत्थ णं पुण्णभद्दे णामं चेइए होत्था ।	अत्र पूर्णभद्रं नाम चैत्यमभवत् ।
वणखंडे वण्णओ ।	वनखण्डः वर्ण्यः ।
तीसे णं चम्पाए णयरीए	तस्यां चम्पायां नगर्यां
कोणिए णामं राया होत्था ।	कोणिको नाम राजा अभवत् ।
महया हिमवंत, वण्णओ ।	महत्तया हिमवन्तः, वर्णकः ।

श्री अन्तगडदशांग सूत्र

(आठवां [illegible])

उत्थानिका (पूर्व-पीठिका)

सूत्र १

[हिन्दी छाया]

उस काल उस समय[1]
चम्पा नामकी नगरी थी,
(जो) वर्णनीय[2] थी।
वहां चम्पा नगरी में
उत्तर पूर्व दिशा भाग में[3]
यहां पूर्णभद्र नाम का चैत्य था।
(यहां) वन खण्ड (भी) वर्णनीय था।
उस चम्पा नगरी में
कौणिक नाम का राजा था।
(जो) महा हिमवान् पर्वत
के समान[4] वर्णनीय था।

[हिन्दी पद्य]

उस काल उस समय अर्थात् इसी अवसर्पिणी काल के चतुर्थ आरक के अन्तिम समय में, जबकि भ० महावीर विचर रहे थे, वर्णन करने योग्य नगरियों[4] में आदर्श एवं प्रतीक स्वरूप चम्पा नाम की नगरी थी। उस चम्पानगरी के ईशान कोणमें पूर्णभद्र नामक चैत्य था। वहां का वनखण्ड वर्णनीय अर्थात् मन को प्रफुल्लित कर देने वाला, नयनाभिगम और बड़ा रम्य था। उस चम्पा नगरी में कौणिक नामक राजा[5] था, जो क्षेत्र की मर्यादाओं को बनाये रखने वाले महाहिमवान् पर्वत[6] के समान सुरम्य मानव समाज की मर्यादाओं का संरक्षक और वर्णन करने योग्य एवं सुशासक के सभी गुणों से सम्पन्न था।

सूत्र २

[मूल सूत्र पाठ]	[संस्कृत छाया]
तेणं कालेणं तेणं समएणं	तस्मिन् काले तस्मिन् समये
अज्ज सुहम्मे थेरे जाव	आर्य सुधर्मा स्थविरः यावत्
पंचहिं अणगार-सएहिं सद्धिं	पंचभिः अणगार-शतैः सार्द्धं
संपरिवुडे	संपरिवृत्तः
पुव्वाणुपुव्विं चरमाणे	पूर्वानुपूर्व्याः चरन्
गामाणुगामं दूइज्जमाणे	ग्रामानुग्रामं द्रवन्
सुहंसुहेणं विहरमाणे	सुखं सुखेन विहरमाणः
जेणेव चम्पा णयरी	यत्रैव चम्पा नगरी
जेणेव पुण्णभद्दे चेइए	यत्रैव पूर्णभद्रः चैत्यः
तेणेव समोसरिए।	तत्रैव समवसृतः।
परिसा णिग्गया[10]	परिषद् निर्गता
जाव परिसा पडिगया।[11]	यावत् परिषद् प्रतिगता।
तेणं कालेणं तेणं समएणं	तस्मिन् काले तस्मिन् समये
अज्ज सुहम्मस्स अंतेवासी	आर्य-सुधर्मणः अन्तेवासी
अज्ज जंबू जाव	आर्य जम्बू यावत्
पज्जुवासमाणे	पर्युपासीनः
एवं वयासी—	एवं अवादीत्-
जइ णं भंते !	यदि खलु भदन्त !
समणेणं भगवया महावीरेणं	श्रमणेन भगवता महावीरेण
आइगरेणं जाव	आदिकरेण यावत्
संपत्तेणं	(सिद्धगतिनामधेयं स्थानं) संप्राप्तेन
सत्तमस्स अंगस्स उवासगदसाणं	सप्तमस्य अंगस्य उपासकदशानां
अयमट्ठे पण्णत्ते	अयं अर्थः प्रज्ञप्तः
अट्ठमस्स णं भंते! अंगस्स	अष्टमस्य खलु भदन्त ! अंगस्य
अंतगडदसाणं समणेणं	अन्तकृद्दशानां श्रमणेन

[हिन्दी छाया]

उस काल उस समय
आर्य सुधर्मा स्थविर यावत्
पांच सौ साधुओं के साथ
घिरे हुए,
पूर्व परम्परानुसार विचरते हुए,
ग्रामानुग्राम चलते हुए,
सुखपूर्वक विहार करते हुए,
जहां चम्पा नगरी थी,
जहां पूर्णभद्र चैत्य था,
वहीं पधारे।
परिषद् आई,
यावत् परिषद् लौट गई।

[हिन्दी अर्थ]

उस काल उस समय में अर्थात् इस अवसर्पिणी के चतुर्थ आरक के अन्तिम समय में स्थविर आर्य सुधर्मा स्वामी पांच सौ साधुओं[13] के परिवार सहित पूर्व परम्परा अर्थात् तीर्थंकर परम्परा के अनुसार विचरते तथा एक ग्राम से दूसरे ग्राम में सुखपूर्वक विहार करते हुए, उस चम्पानगरी के पूर्णभद्र नामक उद्यान में पधारे। नागरिकों के समूह आर्य सुधर्मा की सेवा में उपस्थित हुए। दर्शन, वन्दन के पश्चात् वे सभा के रूप में बैठे। परिषद् ने आर्य सुधर्मा का उपदेश सुना। उपदेश सुनकर जन समूह अपने-अपने स्थान को लौट गया।

उस काल उस समय
आर्य सुधर्मा स्वामी के अन्तेवासी शिष्य
आर्य जम्बू स्वामी यावत्
सेवा उपासना करते हुए
इस प्रकार बोले—
"हे पूज्य! यदि
श्रमण भगवान् महावीर
(धर्म की) आदि करने वाले यावत्[12]
(सिद्धगति नाम स्थान को) प्राप्त (प्रभु)
ने सातवें अंग शास्त्र उपासकदशा का
यह भाव प्रतिपादित किया है (तो)
हे भगवन्! आठवें अंग शास्त्र
अन्तगडदशा का (उन) श्रमण ने

उस काल उस समय में आर्य सुधर्मा स्वामी के अन्तेवासी शिष्य आर्य जम्बू स्वामी ने अपने गुरु को सविधि सविनय वन्दन-नमन के पश्चात् उनकी पर्युपासना करते हुए इस प्रकार पूछा—'हे भवभयहारी भगवन्! यदि धर्म की आदि करने वाले विशेषण से लेकर सिद्धगति नामक स्थान को प्राप्त विशेषण से अलंकृत श्रमण, भगवान् महावीर ने सातवें अंग शास्त्र उपासक-दशा का यह अर्थ निरूपित किया है, तो हे पूज्यवर! अब आप मुझे यह बताने की कृपा कीजिये कि संसार से मुक्त हुए उन श्रमण भगवान् महावीर ने

[मूल सूत्र पाठ]	[संस्कृत छाया]
१. गोयम २. समुद्द ३. सागर	१. गौतमः २. समुद्रः ३. सागरः
४. गंभीरे चेव ५. होइ थिमिए य	४. गम्भीरश्चैव ५. भवति स्तिमितश्च
६. अयले ७. कंपिल्ले ८. खलु	६. अचलः ७. काम्पिल्यः ८. खलु
अक्खोभ ९. पसेणई १०. विण्हू	अक्षोभः ९. प्रसेनजितः १०. विष्णुः

सूत्र ४

जइणं भन्ते !	यदि खलु भदन्त !
समणेणं जाव संपत्तेणं	श्रमणेन यावत् सिद्धगति संप्राप्तेन
अट्ठमस्स अंगस्स अंतगड़दसाणं	अष्टमस्य अंगस्य अन्तकृद्दशानां
पढमस्स वग्गस्स	प्रथमस्य वर्गस्य
दस अज्झयणा पण्णत्ता	दश अध्ययनानि प्रज्ञप्तानि
तं जहा—	तद्यथा—
गोयम जाव विण्हू	गौतमः यावत् विष्णुः
पढमस्स णं भंते !	प्रथमस्य हे भदन्त !
अज्झयणस्स अंतगडदसाणं	अध्ययनस्य अन्तकृद्दशानां
समणेणं जाव संपत्तेणं	श्रमणेन यावत् सिद्धगति संप्राप्तेन
के अट्ठे पण्णत्ते ?	कोऽर्थः प्रज्ञप्तः ?
एवं खलु जंबू !	एवं खलु जम्बू !
तेणं कालेणं तेणं समएणं	तस्मिन् काले तस्मिन् समये
वारवई णामं णयरी होत्था ।	द्वारवती नाम नगरी अभवत् ।
दुवालस जोयणायामा	द्वादश योजन-आयामा
णव जोयण वित्थिण्णा	नव योजन-विस्तीर्णा
धणवइमइ—णिम्मिया	धनपतिमति-निर्मिता
चामीगरपागारा णाणा मणि	चामीकरप्राकारा नाना मणि
पञ्चवण्ण कवि-सीसग-परिमण्डिया	पंचवर्ण-कपिशीर्षकैः परिमण्डिता

[हिन्दी छाया]

१ गौतम, २ समुद्र, ३ सागर, ४ गम्भीर भी, ५ स्तिमित भी हुए, ६ अचल, ७ काम्पिल्य, ८ निश्चयही अक्षोभ ९ प्रसेनजित, १० विष्णु।

[हिन्दी अर्थ]

१ गौतम कुमार, २ समुद्र कुमार, ३ सागर कुमार, ४ गम्भीर कुमार और ५ स्तिमित कुमार, ६ अचल कुमार, ७ काम्पिल्य कुमार, ८ अक्षोभ कुमार, ९ प्रसेन जित और १० विष्णु कुमार।

सूत्र ४

यदि निश्चय ही हे भदन्त !
श्रमण यावत् मोक्षप्राप्त (प्रभु) ने
आठवें अंग अन्तगडदसा के
प्रथम वर्ग के
दस अध्ययन कहे हैं,
जो इस प्रकार हैं—
"गौतम से लेकर विष्णुकुमार तक"
(तो) हे भदन्त ! प्रथम का
अन्तगडदसांग के अध्ययन का
श्रमण यावत् मोक्षप्राप्त (प्रभु) ने
क्या भाव प्रतिपादित किया है ?

आर्य जम्बू—'हे पूज्य ! यदि श्रमण भगवान् महावीर ने आठवें अंग शास्त्र अन्तगडदशा के प्रथम वर्ग के दस अध्ययन कहे हैं जैसे गौतम आदि, तो हे भगवन् अन्तगडदशांग सूत्र के प्रथम अध्ययन का श्रमण यावत् मुक्ति प्राप्त प्रभु ने क्या भाव कहा है ? कृपा करके बतलाए।"

इस प्रकार निश्चय करके हे जम्बू !
उस काल उस समय
द्वारिका नाम की नगरी थी।
(वह) १२ योजना लम्बी (और)
नौ योजन विस्तीर्ण (यानि चौड़ी)
(स्वय) धन कुबेर की बुद्धि से निर्मित
स्वर्ण प्राकार से युक्त, अनेकों मणियों
पांच वर्ण [१४] की से मंडित कंगूरोंवाली

आर्य सुधर्मा—"इस प्रकार हे जम्बू ! उस काल उस समय में द्वारिका नाम की एक नगरी थी। वह बारह योजन लम्बी, नौ योजन चौड़ी, स्वय कुबेर के कौशल से निर्मित, स्वर्ण के कोट से घिरी हुई और अनेक प्रकार के पांच वर्ण की (इन्द्र, नील, वैडूर्य, पद्म, रागादि) मणियों से जटित, कंगूरों वाली शोभनीय एव अत्यन्त रमणीय थी। नगरियों में वह अलकापुरी की नगरी के समान, प्रमुदित एव क्रीडायुक्त होने से प्रत्यक्ष देव

[मूल सूत्र पाठ]	[संस्कृत छाया]
सुरम्मा ।	सुरम्याः ।
अलकापुरी–संकासा	अलकापुरी–संकाशा
पमुइय–पक्कीलिया	प्रमुदिता प्रकीड़िता
पच्चक्खं देवलोगभूया	प्रत्यक्षं देवलोकभूता
पासाइया दरिसणिज्जा	प्रासादीया दर्शनीया
अभिरूवा पडिरूवा ।	अभिरूपा प्रतिरूपा ।

सूत्र ५

तीसे णं वारवईए णयरीए	तस्याः द्वारावत्याः नगर्याः
वहिया उत्तर–पुरत्थिमे दिसिभाए	वहिरुत्तरपौरस्त्ये दिग्भागे
एत्थ णं रेवयए णामं पव्वए होत्था	अत्र खलु रैवतको नाम पर्वतोऽभूत्
वण्णओ	वर्णकः
तत्थ णं रेवयए पव्वए	तत्र खलु रैवतके पर्वते
णंदणवणे णामं उज्जाणे होत्था ।	नन्दनवनं नाम उद्यानमासीत् ।
वण्णओ, सुरप्पिएणामं	वर्णकः, सुरप्रियनामं
जक्खाययणे होत्था	यक्षायतनमभवत् ।
पोराणे से णं एगेणं	पुरातने तत् खलु एकेन
वणखंडेण परिक्खित्ते	वनखंडेन परिक्षिप्तः
असोभवर पायवे	अशोकवर पादपः
तत्थ णं वारवईए णयरीए	तत्र खलु द्वारावत्यां नगर्यां
कण्हे णामं वासुदेवे	कृष्णो नाम वासुदेवः
राया परिवसइ	राजा परिवसति
महया हिमवन्त–राय वण्णओ	महता हिमवन्तराजवर्णकः ।
से णं तत्थ समुद्दविजय पामोक्खाणं	स : खलु तत्र समुद्रविजय प्रमुखानां
दसण्हं दसाराणं	दशानां दशार्हाणाम्
बलदेव पामोक्खाणं	बलदेव प्रमुखानाम्

[हिन्दी छाया]

सुरम्य
कुबेर की नगरी के सदृश
प्रमुदित और प्रकीड़ित
साक्षात् देवलोक तुल्य
प्रमोदजनक, दर्शनीय
नित नई सर्वोत्तम थी।

[हिन्दी गद्य]

लोक के समान एवं मन को प्रफुल्लित करने वाली थी। उसकी दीवारों पर राजहंस, चक्रवाक, सारस, हाथी, घोड़े, मयूर, मृग, मगर, आदि पशु-पक्षियों एवं अन्य अनेक प्राणियों के चित्र बने हुए थे। विशिष्ट असाधारण सौन्दर्य से युक्त होने से वह अभिरूपा थी और जिसके स्फटिक निर्मित दीवारों पर प्रतिबिम्ब सर्वदा प्रतिफलित होते रहने से, जो प्रतिरूपा भी थी।

सूत्र ५

उस द्वारिका नगरी के
बाहर ईशान कोण में
यहां रैवतक नाम का पर्वत था,
जो वर्णन करने योग्य था।
उस रैवतक पर्वत पर
नन्दनवन नामक उद्यान था।
जो वर्णनीय था, जिसमें सुरप्रिय नाम का
यक्षायतन था,
जो प्राचीन था, जो एक
वनखण्ड से घिरा हुआ था।
(उसमें एक) श्रेष्ठ अशोक वृक्ष था।
वहां निश्चय करके (उस) द्वारिका में
कृष्ण नाम के वासुदेव
राजा रहते थे।
वे महान् हिमवन्त पर्वत की
तरह मर्यादापालक थे ॥
यहा द्वारिका में समुद्र विजय प्रमुख
दस दशार्ह अर्थात् पूज्यनीय पुरुष,
बलदेव प्रमुख,

"ऐसी उस द्वारिकानगरी के बाहिर ईशान कोण में रैवतक नाम का एक पर्वत था, जो वर्णन करने योग्य था। उस रैवतक पर्वत पर नन्दनवन नामक एक उद्यान था, जो भी वर्णनीय था। उस उद्यान में सुरप्रिय नाम का एक यक्षायतन था, जो प्राचीन था। वह उद्यान चारों ओर एक वन खण्ड से घिरा हुआ था और उसमें एक श्रेष्ठ जाति का अशोक का वृक्ष था। उस द्वारिका नगरी में श्रीकृष्ण नाम के वासुदेव राज्य करते थे, जो हिमवान पर्वत की भांति मर्यादा पुरुषोत्तम थे। उनके राज्य का वर्णन कौणिक के राज्य के वर्णन की भांति समझना चाहिये।" (नगरियों एवं राज्यों के वर्णन को विस्तार पूर्वक समझने की जिज्ञासा वालों को औपपातिक सूत्र का अवलोकन करना चाहिए।)

"ऐसी द्वारिका नगरी में समुद्र विजयजी आदि दस दशार्ह अर्थात् पूज्य पुरुष निवास करते थे। महावीर कहे जाने वाले बलदेव

[मूल सूत्र पाठ]	[संस्कृत छाया]
पंचण्हं महावीराणं	पंचानां महावीराणां
पज्जुण्ण पामोक्खाणं	प्रद्युम्न प्रमुखानां
अद्धुट्ठाणं कुमार कोडीणं	अर्द्धचतुष्काणां कुमार कोटीनां
संव पामोक्खाणं	शाम्ब प्रमुखानां
सट्ठीए दुद्दंत साहस्सीणं	षष्ट्या दुर्दान्त साहस्रीणाम्
महासेण पामोक्खाणं	महासेन प्रमुखानां
छप्पण्णाए बलवग्गसाहस्सीणं	षट्पञ्चाशत बलवर्गसाहस्रीणाम्
वीरसेण पामोक्खाणं	वीरसेन प्रमुखानाम्
एगवीसाए वीरसाहस्सीणं	एकविंशति वीरसाहस्रीणाम्
उग्गसेण पामोक्खाणं	उग्रसेन प्रमुखानां
सोलसण्हं रायसाहस्सीणं	षोडशानाम् राज साहस्रीणाम्
रूप्पिणी पामोक्खाणं	रुक्मिणी प्रमुखानाम्
सोलसण्हं देवीसाहस्सीणं	षोडशानाम् देवीसाहस्रीणाम्
अणंगसेणा पामोक्खाणं	अनंगसेना प्रमुखानां
अणेगाणं गणियासाहस्सीणं	अनेकासाम् गणिकासाहस्रीणाम्
अण्णेसिं च बहूणं	अन्येषां च बहूनाम्
ईसर जाव सत्थवाहाणं	ईश्वर यावत् सार्थवाहानाम्
बारवईए णयरीए	द्वारावत्याः नगर्याः
अद्धभरहस्स य सम्मत्तस्स य	अर्धभरतस्य च समस्तस्य च
आहेवच्चं जाव विहरई।	आधिपत्यं यावत् विहरति।

सूत्र ६

तत्थ णं बारवईए णयरीए	तत्र खलु द्वारावत्यां नगर्याम्
अंधगवण्ही णामं राया परिवसइ	अन्धकवृष्णि नाम राजा परिवसति
महया हिमवन्त वण्णओ।	महता हिमवान् वर्णकः
तस्स णं अंधगवण्हिहस्स रण्णो	तस्य खलु अन्धकवृष्णेः राज्ञः
धारिणी णामं देवी होत्था, वण्णओ	धारिणीनामा देवी अभवत्, वर्णकः

[हिन्दी छाया]

पाच महावीर (और)
प्रद्युम्नकुमार आदि
साढे तीन करोड कुमार,
शाम्ब प्रमुख
साठ हजार दुर्दान्त वीर, तथा
महासेन प्रमुख
छप्पन हजार बलवर्ग सैनिक,
वीरसेन आदि
इक्कीस हजार वीर योद्धा
उग्रसेन प्रमुख
सोलह हजार राजा एव
रुक्मिणी प्रमुख
सोलह हजार रानियां
अनगसेना आदि
अनेक हजार गणिकाए
एव अन्य बहुत से
ईश्वर पदधारी से लेकर
सार्थवाहों से'' सम्पन्न
द्वारिका नगरी के (तथा)
समस्त अर्द्ध भरत यानि ३ खण्ड के
अधिपतित्व को धारण करते हुए यावत्
(श्री कृष्ण) विचरते थे।

[हिन्दी अर्थ]

आदि पाच श्रेष्ठ नागरिक और प्रद्युम्न प्रमुख साढे तीन करोड कुमार भी वहां रहते थे। वहीं शाम्ब, जिनमें प्रमुख गिने जाते थे, ऐसे साठ हजार दुर्दान्त वीर, महासेन आदि छप्पन हजार बलवर्ग सैनिक भी थे। वीरसेन आदि इक्कीस हजार वीर योद्धा, उग्रसेन प्रमुख सोलह हजार राजा एव रुक्मिणी प्रमुख १६ हजार रानियां अनगसेना आदि हजारों गणिकाए तथा अन्य बहुत से ईश्वर पदधारी नागरिकों से लेकर अनेक सार्थवाह भी उस नगरी के निवासी थे।"

"इस प्रकार सब प्रकार के वैभव एव शक्तिशाली नागरिकों से सम्पन्न उस द्वारिका नगरी के तथा समस्त अर्द्ध-भरत के अर्थात् इस जम्बू द्वीप के तीन खण्डों के अधिपतित्व को धारण करते हुए यावत् श्रीकृष्ण विचरण करते थे।"

सूत्र ६

उस द्वारिका नगरी में
अन्धकवृष्णि नाम के राजा रहते थे।
जो महा हिमवान्''की भांति वर्णनीय थे।
उस अधकवृष्णि राजा के
धारिणी नामकी वर्णन योग्य रानी थी,

"उस द्वारिका नगरी म अधकवृष्णि नाम के एक राजा भी रहते थे, जो महान् हिमालय पर्वत की भांति शक्तिशाली एव मर्यादापालक थे। उनकी धारिणी नाम की रानी थी, जो वर्णन करने योग्य थी। वह धारिणी रानी किसी दिन पुण्यशालिनी

[मूल सूत्र पाठ]	[संस्कृत छाया]
तए णं सा धारिणी देवी अण्णया कयाइं	ततः सा धारिणी देवी अन्यदा कदाचिद्
तंसि तारिसगंसि	तस्मिन् तादृशके (कृतपुण्योपसेव्ये)
सयणिज्जंसि एवं जहा महाबले —	शयनीये एवं यथा महाबलः—
सुमिणदंसण-कहणा	स्वप्नदर्शनं कथनम्
जम्मं बालत्तणं कलाओ य	जन्म बालत्वं कलाश्च
जोव्वण-पाणिग्गहणं	यौवनं पाणिग्रहणम्
कंता पासाय भोगा य	कान्ता प्रासाद भोगाश्च
णवरं गोयमो णामेणं	विशेषः गौतमो नाम्ना
अट्ठण्हं रायवर कन्नाणं	अष्टानां राजवर कन्यानाम्
एगदिवसेणं पाणिं	एकस्मिन् दिवसे पाणिं
गिण्हावेंति, अट्ठओ दाओ ।	ग्राहयन्ति, अष्टौ अष्टौ दाय ।

सूत्र ७

तेणं कालेणं तेणं समयेणं	तस्मिन् काले तस्मिन् समये
अरहा अरिट्ठणेमी आइगरे	अर्हन् अरिष्टनेमी आदिकरो
जाव विहरइ	यावत् विहरति
चउव्विहा देवा आगया,	चतुर्विधा देवाः आगताः
कण्हे वि णिग्गए	कृष्णः अपि निर्गतः,
तए णं से गोयमेकुमारे	ततः खलु सः गौतमः कुमारः
जहा मेहे तहा णिग्गए,	यथा मेघः तथा निर्गतः,
धम्मं सोच्चा णिसम्म	धर्मं श्रुत्वा निशम्य
जं णवरं देवाणुप्पिया !	यद् नवरं देवानुप्रिया !
अम्मापियरो आपुच्छामि	मातापितरौ अपृच्छामि
देवाणुप्पियाणं अंतिए पव्वयामि ।	देवानुप्रियाणाम् अन्तिके प्रव्रजामि ।
एवं जहा मेहे जाव अणगारे	एवम् यथा मेघः यावत् अणगारो
जाए, इरियासमिए जाव इणमेव	जातः, ईर्यासमितः यावत् एतदेव

[हिंदी छाया]

तदनन्तर वह धारिणी रानी किसी दिन कदाचित् पुण्यवान् के योग्य शय्या पर सोई हुई थी जैसे महाबल।

स्वप्न दर्शन, उसका कथन,
जन्म, बाल लीला, कला ज्ञान,
यौवन, पाणिग्रहण
रम्य प्रासाद एवं भोगादि
विशेष गौतम नाम,
आठ उत्तम राजकन्याएं
एक ही दिन पाणि-
ग्रहण, आठ २ का दहेज।

[हिन्दी अर्थ]

के योग्य शय्या पर सोई हुई थी, जिसका वर्णन महाबल के प्रकरण में वर्णित वर्णन के समान समझ लेना चाहिये। जैसे कि उस धारिणी राणी का स्वप्न देखना, पति को निवेदन करना, बालक का जन्म लेना, उसका बाल्यकाल बीतना और कलाचार्यों के पास शिक्षण लेना, युवावस्था को प्राप्त होना, योग्य कन्याओं से उसका पाणिग्रहण होना, रमणीय प्रासाद में रहना एवं सांसारिक भोगों को भोगना आदि।"

"महाबलकुमार के वर्णन से यहां इतना विशिष्ट है कि उस कुमार का नाम गौतम-कुमार रक्खा गया, आठ उत्तम कुलीन राज-कन्याओं के साथ एक ही दिन में उसका पाणिग्रहण कराया गया एवं उसे दहेज के रूप में आठ-आठ हिरण्य कोटि प्रदान की गई।"

सूत्र ७

उस काल उससमय
आदिकर अर्हत् अरिष्टनेमि
यावत् विचरते हैं।
चार प्रकार के देव आये।
श्रीकृष्णजी भी निकले।
इसके बाद वह गौतम कुमार भी
मेघ कुमार की तरह निकले।
धर्मोपदेश सुनकर व धारण करके
(वे बोले) हे देवानुप्रिय ! मैं यथावसर
माता पिता को पूछता हूं (और)
देवानुप्रिय के समीप प्रव्रज्या लेता हूं।
इस प्रकार मेघकुमार के समान
यावत् (वे गौतमकुमार) अणगार हो गये
(एवं) ईर्या समिति आदि को एवं

उस काल उस समय में अरिहन्त अरि-ष्टनेमि भगवान् धर्मतीर्थ की आदि करने वाले यावत् विचरते हुए उस द्वारिकानगरी में पधारे। भगवान् के समवसरण में चार प्रकार के देव आये। श्री कृष्ण भी उन्हें वन्दन करने को निकले। गौतमकुमार भी ज्ञातासूत्र में वर्णित मेघकुमार की तरह प्रभु का धर्मोपदेश सुनने को निकले। धर्मोपदेश सुनकर एवं उसे अपने हृदय पटल पर अंकित करके गौतमकुमार प्रभु से बोले —'हे प्रभो ! मैं अपने माता पिता को पूछकर आप देवानुप्रिय के पास श्रमण दीक्षा अंगीकार करूंगा।"

इस प्रकार ज्ञातासूत्र में वर्णित मेघ-कुमार के समान यावत् गौतमकुमार भी श्रमणधर्म में दीक्षित हो गये।

[मूल सूत्र पाठ]	[संस्कृत छाया]
णिग्गंठं पावयणं पुरओ	नैर्ग्रन्थ्यं प्रवचनं पुरतः
काउं विहरइ ।	कृत्वा विहरति ।
तए णं से गोयमे अणगारे	ततः खलु स गौतमः अनगारः
अण्णया कयाइं	अन्यदा कदाचित्
अरहओ अरिट्ठ-णेमिस्स	अर्हतः अरिष्टनेमेः
तहारूवाणं थेराणं	तथारूपाणाम् स्थविराणाम्
अंतिए समाइयमाइयाइं	अन्तिके सामयिकादीनि
एक्कारस अंगाइं अहिज्जइ,	एकादश अंगानि अधीते,
अहिज्जित्ता बहूहिं चउत्थ	अधीत्य बहुभिः चतुर्थभक्तादिभिः
जाव अप्पाणं भावेमाणे विहरइ ।	यावत् आत्मानं भावमानः विहरति ।
तए णं अरहा अरिट्ठणेमी	ततः खलु अर्हन् अरिष्टनेमि
अण्णया कयाइं बारवइओ णयरीओ	अन्यदा कदाचित् द्वारावत्या नगर्याः
णंदणवणाओ उज्जाणाओ	नन्दनवनात् उद्यानात्
पडिणिक्खमइ, पडिणिक्खमित्ता	प्रतिनिष्क्रमति, प्रतिनिष्क्रम्य
बहिया जणवय विहारं विहरइ ।	बहिः जनपद विहारं विहरति ।

सूत्र ८

तए णं से गोयमे अणगारे	ततः खलु सः गौतमः अनगारः
अण्णया कयाइं जेणेव	अन्यदा कदाचित् यत्रैव
अरहा अरिट्ठणेमी तेणेव उवागच्छइ	अर्हन् अरिष्टनेमि तत्रैव उपागच्छति
उवागच्छित्ता अरहं अरिट्ठनेमिं	उपागत्य अर्हन्तम् अरिष्टनेमिम्
तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं करेइ,	त्रिःकृत्वा आदक्षिणप्रदक्षिणां करोति,
करित्ता, वंदइ, णमंसइ,	कृत्वा वंदते, नमस्यति,
वंदित्ता णमंसित्ता एवं वयासी -	वंदित्वा नमस्यित्वा एवमवादीत्
इच्छामि णं भन्ते !	इच्छामि खलु भदन्त !
तुब्भेहिं अब्भणुण्णाए समाणे	युष्माभिः अभ्यनुज्ञातः सन्
मासियं भिक्खुपडिमं	मासिकीम् भिक्षुप्रतिमाम्

[हिन्दी छाया]

निर्ग्रन्थ प्रवचन को अपने आगे
रखकर विचरते हैं ।
इसके बाद निश्चय ही गौतम अणगार
ने अन्य किसी दिन
अर्हन्त अरिष्टनेमि भगवान् के
तथा रूप (गुणसम्पन्न गीतार्थ) स्थविरों
के पास सामायिक आदि
११ अंगों का अध्ययन किया ।
अध्ययन करके बहुत से उपवासादि द्वारा
यावत् अपनी आत्मा को भावित
करते हुए विहार करने लगे ।
तदनन्तर निश्चय से अर्हन्त अरिष्टनेमि ने
अन्यदा किसी दिन द्वारिकानगरी के
नन्दनवन उद्यान से
प्रस्थान किया, प्रस्थान करके
बाहर जनपद में विचरने लगे ।

[हिन्दी अर्थ]

वे ईर्या समिति आदि गुणों वाले यावत् इसी वीतराग निर्ग्रन्थ शासन को अपने आगे रखकर भगवान की आज्ञाओं का पालन करते हुए विचरने लगे ।

तदनन्तर उन गौतम अणगार ने अन्य किसी दिन अरिहन्त अरिष्टनेमि भगवान् के गुण सम्पन्न गीतार्थ स्थविरों के पास, सामायिक आदि ग्यारह अंगों का अध्ययन किया । अध्ययन करके बहुत से उपवास आदि तपश्चरण द्वारा अपनी आत्मा को भावित करते हुए एवं उसकी शुद्धि करते हुए वे ग्रामानुग्राम विहार करने लगे ।

तत्पश्चात् अरिहन्त अरिष्टनेमि भगवान् ने अन्यदा किसी दिन उस द्वारिका नगरी के नन्दनवन नामक उद्यान से प्रस्थान किया । वहां से प्रस्थान करके बाहर जनपद में विचरण करने लगे ।

सूत्र ८

इसके बाद वह गौतम अणगार
अन्यदा किसी दिन जहां
अरिहन्त अरिष्टनेमि थे वहीं आये ।
आकर (उन्होंने) अरिहन्त अरिष्टनेमि को
३ बार दक्षिण-तरफ से प्रदक्षिणा की ।
प्रदक्षिणा करके वन्दन नमस्कार किया ।
वन्दन नमस्कार करके ऐसे बोले—
'हे भगवन् ! मैं चाहता हूं
आपकी आज्ञा प्राप्त होने पर
मासिकी भिक्षु प्रतिमा

इसके बाद वह गौतम अणगार अन्यदा किसी दिन जहां अरिहन्त भगवान् अरिष्टनेमि थे वहां आये । वहां आकर उन्होंने अरिहन्त अरिष्टनेमि (नेमिनाथ) को तीन बार दक्षिण की तरफ से प्रदक्षिणा की। प्रदक्षिणा करके वन्दन नमस्कार किया । वन्दन नमस्कार करके वे प्रभु से इस प्रकार

[मूल सूत्र पाठ]	[संस्कृत छाया]
एवं जहा गोयमो तहा सेसा	एवं यथा गौतमः तथा शेषाणि
वण्ही पिया, धारिणी माया	वृष्णिः पिता धारिणी माता
समुद्दे सागरे गंभीरे थिमिए	समुद्रः सागरः गम्भीरः स्तिमितः
अयले कंपिल्ले अक्खोभे	अचलः काम्पिल्यः अक्षोभः
पसेणई विण्हु एए एगगमा	प्रसेनजित् विष्णुः एते एकगमाः
पढमो वग्गो, दस अज्झयणा पण्णत्ता ।	प्रथमः वर्गः दश अध्ययनानि प्रज्ञप्तानि ।

दो से दस अध्ययन समाप्त
प्रथम वर्ग समाप्त

द्वितीय वर्ग—सूत्र १

जइ णं भंते !	यदि खलु भदन्त !
समणेणं जाव संपत्तेणं पढमस्स	श्रमणेन यावत् संप्राप्तेन प्रथमस्य
वग्गस्स अयमट्ठे पण्णत्ते,	वर्गस्य अयमर्थः प्रज्ञप्तः,
दोच्चस्स णं भन्ते !	द्वितीयस्य खलु भदन्त !
वग्गस्स अंतगडदसाणं	वर्गस्य अन्तकृद्दशानाम्
समणेणं जाव संपत्तेणं	श्रमणेन यावत् संप्राप्तेन
कई अज्झयणा पण्णत्ता ?	कति अध्ययनानि प्रज्ञप्तानि ?
एवं खलु जंबू !	एवं खलु जम्बू !
समणेणं जाव संपत्तेणं	श्रमणेन यावत् (मुक्ति) संप्राप्तेन
अट्ठ अज्झयणा पण्णत्ता	अष्टौ अध्ययनानि प्रज्ञप्तानि
तं जहा—गाहा—	तानि यथा—गाथा—
अक्खोभे सागरे खलु	अक्षोभः सागरः खलु
समुद्द हिमवंत अयल णामे य !	समुद्रः हिमवन्तः अचल नामाश्च !
धरणे य पूरणे वि य	धरणश्च पूरणोऽपि च
अभिचंदे चेव अट्ठमए	अभिचन्द्रश्चैव अष्टमकः

[हिन्दी छाया]

इस प्रकार जैसे गौतम वैसे बाकी के वृष्णि पिता, धारिणी माता समुद्र, सागर, गम्भीर, स्तिमित, अचल, काम्पिल्य, अक्षोभ, प्रसेनजित, विष्णु ये सब एक समान हैं (इस प्रकार) प्रथम वर्ग और उसके दस अध्ययन कहे गये हैं।

[हिन्दी अर्थ]

इस प्रकार मुनि गौतम कुमार की तरह शेष ९ अध्ययन भी समझने चाहिये। सब के पिता वृष्णि एवं माता धारिणी थी। उनके नाम इस प्रकार हैं —

"२ समुद्रकुमार, ३ सागरकुमार, ४ गम्भीर कुमार, ५ स्तिमित कुमार, ६ अचल कुमार, ७ काम्पिल्य कुमार, ८ अक्षोभ कुमार, ९ प्रसेनजित, १० विष्णु कुमार"।

ये सब अध्ययन एक समान हैं। आगे का सबका वर्णन गौतम कुमार मुनि की तरह है। इस तरह यह प्रथम वर्ग और उसके दस अध्ययन कहे गये हैं।

दो से दस अध्ययन समाप्त

प्रथम वर्ग समाप्त

द्वितीय वर्ग—सूत्र १

"यदि निश्चय करके हे पूज्य! श्रमण यावत् मोक्ष प्राप्त प्रभु ने पहले वर्ग का यह भाव कहा है तो भदन्त! दूसरे अन्तगडदशांग के वर्ग के श्रमण यावत् मोक्ष प्राप्त प्रभु ने कितने अध्ययन प्रतिपादित किये हैं? निश्चय करके हे जम्बू! श्रमण यावत् मोक्ष प्राप्त प्रभु ने आठ अध्ययन कहे हैं। वे इस प्रकार हैं —गाथा—

१ अक्षोभ २ सागर
३ समुद्र ४ हिमवन्त ५ अचल
६ धरण ७ पूरण
८ अभिचन्द्र।"

जम्बू स्वामी बोले—'हे पूज्य! श्रमण यावत् मुक्ति प्राप्त प्रभु ने प्रथम वर्ग का यह वर्णन किया है। अब हे भगवन्! अन्तगडदशा के दूसरे वर्ग में श्रमण भगवान् महावीर ने कितने अध्ययन फरमाये हैं?"

आर्य सुधर्मा श्रीमुख से कहते हैं—"इस प्रकार हे जम्बू! श्रमण यावत् मुक्ति प्राप्त प्रभु ने दूसरे वर्ग के आठ अध्ययन फरमाये हैं जैसे कि—प्रथम अक्षोभ कुमार, दूसरे सागर, तीसरे समुद्र, चौथे हिमवान और पांचवें अचल कुमार, छठे धरण, सातवें पूरण और आठवें अभिचन्द्र होते हैं।"

[मूल सूत्र पाठ]

तेणं कालेणं तेणं समयेणं
वारवईए णयरीए वण्ही पिया
धारिणी माया।
जहा पढमो वग्गो,
तहा सव्वे अट्ठ अज्झयणा।
गुणरयणं तवोकम्मं,
सोलस वासाइं परियाओ
सेत्तुंजे मासियाए संलेहणाए
जाव सिद्धा।
एवं खलु जंबू!
समणेणं जाव संपत्तेणं
अट्ठमस्स अंगस्स
दोच्चस्स वग्गस्स
अयमट्ठे पण्णत्ते।

[संस्कृत छाया]

तस्मिन् काले तस्मिन् समये
द्वारावत्यां नगर्यां वृष्णिः पिता
धारिणी माता।
यथा प्रथमः वर्गः
तथा सर्वाणि अष्ट अध्ययनानि।
गुणरत्नं तपः कर्म
षोडश वर्षाणि (दीक्षा) पर्यायः
शत्रुंजये (पर्वते) मासिक्या संलेखनया
यावत् सिद्धाः।
एवं खलु जम्बू!
श्रमणेन यावत् संप्राप्तेन
अष्टमस्य अंगस्य
द्वितीयस्य वर्गस्य
अयमर्थः प्रज्ञप्तः।

इति द्वितीय वर्गः

अथ तृतीय वर्ग—सूत्र १

जइ णं भन्ते!
समणेणं जाव संपत्तेणं
अट्ठमस्स अंगस्स दोच्चस्स वग्गस्स
अयमट्ठे पण्णत्ते,
तच्चस्स णं भन्ते! वग्गस्स
समणेणं जाव संपत्तेणं
के अट्ठे पण्णत्ते?

यदि खलु भदन्त!
श्रमणेन यावत् संप्राप्तेन
अष्टमस्य अंगस्य द्वितीयस्य वर्गस्य
अयमर्थः प्रज्ञप्तः,
तृतीयस्य खलु भदन्त! वर्गस्य
श्रमणेन यावत् संप्राप्तेन
कः अर्थः प्रज्ञप्तः?

[हिन्दी छाया]

उस काल उस समय
द्वारिका नगरी में वृष्णि (राजा) पिता थे
और धारिणी रानी माता थी।
जैसे प्रथम वर्ग
वैसे सभी आठ अध्ययन।
(सभी ने) गुणरत्न तप किया,
सोलह वर्ष की दीक्षा पर्याय पाली,
शत्रुंजय पर मासिकी संलेखना की,
और यावत् सिद्ध हुए।
इस प्रकार निश्चय करके हे जम्बू !
श्रमण यावत् मोक्ष-प्राप्त प्रभु ने
(इस) आठवें अंग शास्त्र के
दूसरे वर्ग का
यह भाव कथन किया है।

[हिन्दी अर्थ]

उस काल उस समय में द्वारिका नगरी में इन आठों कुमारों के वृष्णि राजा पिता और धारिणी माता थी। जिस प्रकार प्रथम वर्ग कहा, उसी प्रकार ये सभी आठों अध्ययन समझने चाहिये।

इन सभी ने गुणरत्न संवत्सर तप किया। सोलह वर्ष का चारित्र पालन कर, शत्रुंजय पर्वत पर एक मास की संलेखना से यावत् सिद्ध हुए।

इस प्रकार हे जम्बू ! श्रमण यावत् मुक्ति प्राप्त प्रभु ने आठवें अंग शास्त्र अन्तगड़दशा के दूसरे वर्ग का यह भाव श्रीमुख से कहा है।

आठ अध्ययन समाप्त

द्वितीय वर्ग समाप्त

तृतीय वर्ग–सूत्र १

(आर्य जम्बू) "यदि निश्चय करके
हे पूज्य !
श्रमण यावत् मोक्ष प्राप्त प्रभु ने
आठवें अंग शास्त्र के दूसरे वर्ग का
यह भाव कथित किया है (तो)
हे पूज्य (अब) तीसरे वर्ग का
श्रमण यावत् मोक्ष प्राप्त प्रभु ने
क्या भाव कहा है ?"

आर्य जम्बू – "हे पूज्य ! श्रमण यावत् मुक्ति प्राप्त प्रभु ने आठवें अंग अन्तकृद्दशा के दूसरे वर्ग का यह भाव कहा है। अब हे पूज्य ! तीसरे वर्ग का श्रमण भगवान् महावीर यावत् मुक्ति-प्राप्त प्रभु ने क्या भाव कहा है ?

[मूल सूत्र पाठ]	[संस्कृत छाया]
एवं खलु जंबू !	एवं खलु जम्बू !
समणेणं जाव संपत्तेणं	श्रमणेन यावत् संप्राप्तेन
अट्ठमस्स अंगस्स तच्चस्स वग्गस्स	अष्टमस्य अंगस्य तृतीयस्य वर्गस्य
अंतगडदसाणं	अन्तकृद्दशानाम्
तेरस अज्झयणा पण्णत्ता,	त्रयोदश अध्ययनानि प्रज्ञप्तानि,
तंजहा—	तानि यथा—
अणीयसेणे, अणंतसेणे,	अनीकसेनः, अनन्तसेनः,
अजियसेणे, अणिहयरिऊ,	अजितसेनः, अनिहतरिपुः,
देवसेणे, सत्तुसेणे, सारणे,	देवसेनः, शत्रुसेनः, सारणः,
गए, सुमुहे, दुम्मुहे,	गजः, सुमुखः, दुर्मुखः,
कूवए, दारुए, अणादिट्ठी ।	कूपकः, दारुकः, अनादृष्टिः ।
जइ णं भन्ते !	यदि खलु भदन्त !
समणेणं जाव संपत्तेणं अट्ठमस्स	श्रमणेन यावत् संप्राप्तेन अष्टमस्य
अंगस्स अंतगडदसाणं	अंगस्य अन्तकृद्दशानाम्
तच्चस्स वग्गस्स तेरस	तृतीयस्य वर्गस्य त्रयोदशानि
अज्झयणा पण्णत्ता,	अध्ययनानि प्रज्ञप्तानि,
तं जहा—	तानि यथा—
अणीयसेणे जाव अणादिट्ठी,	अनीकसेनः यावत् अनादृष्टिः,
पढमस्स णं भन्ते !	प्रथमस्य खलु भदन्त !
अज्झयणस्स अंतगडदसाणं	अध्ययनस्य अन्तकृद्दशानाम्
समणेणं जाव संपत्तेणं	श्रमणेन यावत् संप्राप्तेन
के अट्ठे पण्णत्ते ?	कः अर्थः प्रज्ञप्तः?

[हिन्दी शब्दार्थ]

इस प्रकार निश्चय करके हे जम्बू !
श्रमण यावत् मोक्ष प्राप्त (प्रभु) ने
आठवें अंग के तृतीय वर्ग के
अन्तगडदशा के
तेरह अध्ययन कहे हैं।

जो इस प्रकार हैं—
१ अनीक सेन २ अनन्त सेन
३ अजितसेन ४ अनिहत रिपु
५ देवसेन ६ शत्रुसेन ७ सारण
८ गज सुकुमाल ९ सुमुख १० दुर्मुख
११ कूपक १२ दारुक १३ अनादृष्टि

यदि निश्चय ही हे भदन्त !
श्रमण यावत् मुक्त (प्रभु) ने आठवें
अंग अन्तगडदशा के
तृतीय वर्ग के तेरह
अध्ययन कहे हैं,

जो इस प्रकार हैं—
अनीक सेन से लेकर अनादृष्टि तक
(तो) हे भदन्त! प्रथम का
अन्तगडदशांग के अध्ययन का
श्रमण यावत् मोक्ष प्राप्त (प्रभु) ने
क्या भाव प्रतिपादित किया है ?

[हिन्दी अर्थ]

श्री सुधर्मा स्वामी—"हे जम्बू ! श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने आठवें अंग शास्त्र अन्तगडदशा के तीसरे वर्ग में तेरह अध्ययनों का वर्णन किया है। वे इस प्रकार हैं—

१ अनीक सेन २ अनन्त सेन ३ अजित सेन ४ अनिहत रिपु ५ देव सेन ६ शत्रु सेन ७ सारण ८ गज सुकुमाल ९ सुमुख १० दुर्मुख ११ कूपक १२ दारुक और १३ अनादृष्टि।"

श्री जम्बू स्वामी—"यदि निश्चय ही हे भगवन् ! श्रमण यावत् मोक्ष प्राप्त प्रभु महावीर ने आठवें अंग शास्त्र अन्तगडदशा के तीसरे वर्ग में "अनिकसेन से अनादृष्टि तक" तेरह अध्ययन कहे हैं तो हे भगवन् ! इस तीसरे वर्ग में श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने प्रथम अध्ययन का क्या भाव प्रतिपादित किया है ?"

[हिन्दी शब्दार्थ]

इस प्रकार निश्चय से हे जम्बू !
उस काल मे और उस समय मे
'भद्दिलपुर' नाम का नगर था, (जो)
ऋद्ध, स्तिमित, समृद्ध व वर्णनीय था।
उस भद्दिलपुर नगर के बाहर
उत्तरपूर्व दिशा (ईशानकोण) मे
श्रीवन नाम का उद्यान था,
वर्णनीय,(वहांका) जितशत्रु राजा था।
उस भद्दिलपुर नगर में नाग
नाम का गाथापति था, (जो)
आढ्य यावत् अपरिभूत था।
उस नाग गाथापति की सुलसा
नाम की स्त्री थी,
(जो) सुकुमार यावत् सुरूपवती थी।
उस नाग गाथापति के
पुत्र सुलसा पत्नी की कुक्षी से
अनिकसेन नाम का कुमार था,
(जो) सुकोमल यावत् रूपवान था।
पांच धायमाताओं से घिरा
हुआ प्रतिपालित था। वे ये हैं —
क्षीरधात्री, मज्जनधात्री, मडनधात्री,
क्रीडनधात्री, अंकधात्री।
जैसे दृढप्रतिज्ञ उसी प्रकार यावत्
गिरिकन्दरा में लीन चम्पक वृक्ष के समान
सुखपूर्वक बढ़ने लगा

सूत्र ३

तदनन्तर उस अनिकसेन कुमार को
साधिक आठ वर्ष का हुआ जानकर

[हिन्दी अर्थ]

श्री सुधर्मा– हे जम्बू ! उस काल उस समय में 'भद्दिलपुर' नाम का नगर था। वह नगर उत्तम नगरों के सभी गुणों से युक्त धन-धान्यादि से परिपूर्ण, भय रहित एवं भवनादि से समृद्ध वर्णन करने योग्य था।

उस भद्दिलपुर नगर के बाहर ईशान कोण में श्रीवन नाम का उद्यान था। वह फलदार व फूलों से वेष्ठित वृक्षों से युक्त था। वहां 'जितशत्रु' राजा राज करता था। उस नगर में 'नाग' नाम का गाथापति रहता था। वह अत्यन्त समृद्धिशाली और अपरिभूत यानि जिसका कोई अपमान नही कर सके, ऐसा था।

उस नाग गाथापति के सुलसा नाम की भार्या थी। जो सुकुमाल यावत् अत्यन्त रूपवती थी।

उस नाग गाथापति का पुत्र और सुलसा भार्या का अगज अनीकसेन नाम का कुमार था। वह सुकोमल यावत् शरीर से रूपवान् था। पांच धाय-माताओं से घिरा रहता था, जो उसका लालन पालन करती थी।

जैसे–१ क्षीर धात्री यानि दूध पिलाने वाली धाय, २ मज्जनधात्री-स्नान कराने वाली धाय, ३ मडनधात्री-अलंकार कराने वाली धाय, ४ क्रीडा धात्री-क्रीड़ा यानि खेल खिलाने वाली धाय, और ५ अंक धात्री-गोद में खिलाने वाली धाय। दृढ प्रतिज्ञ कुमार के समान यावत् पहाडी गुफा मे लीन-सुरक्षित चपक वृक्ष के समान वह सुखपूर्वक बढ़ने लगा।

[हिन्दी शब्दार्थ]

मातापितानेकलाचार्यके पास भेजा यावत्
भोग समर्थ युवावस्था सम्पन्न हुआ ।
तब उस अनिकसेन कुमार को
बालभाव से मुक्त जानकर
(उसके) माता पिता (उस) सरीखी
समान वयवाली, समान त्वचावाली,
समान लावण्य-रूप-यौवन-गुण
सम्पन्न, समान कुलवाली
आनीत (लाई गई), बत्तीस
श्रेष्ठ इभ्य सेठों की कन्याओं के साथ
एक ही दिन में पाणिग्रहण करवाते हैं ।

[हिन्दी अर्थ]

इस तरह अनीकसेन कुमार को आठ वर्ष से अधिक वय का होने पर माता पिता ने कलाचार्य के पास भेजा, यावत् वह भोग समर्थ युवावस्था को प्राप्त हुआ ।

तब उस अनीकसेन कुमार को माता-पिता ने उन्मुक्त बालभाव-अर्थात् युवावस्था में प्रविष्ट हुआ जानकर, उसके अनुरूप समान वय वाली, समान त्वचा और समान रूप लावण्य तथा तारुण्य गुण वाली अपने समान कुल से लाई गई बत्तीस इभ्य श्रेष्ठियों की कन्याओं के साथ उसका एक ही दिन में पाणिग्रहण संस्कार करवाया ।

सूत्र ४

तब वह नाग गाथापति
अनिकसेन कुमार के लिए एक
इस प्रकार का प्रीतिदान देता है । जैसे
बत्तीस करोड़ चांदी सोना आदि जैसा
महाबल के प्रकरण में उल्लेख है ।
यावत् श्रेष्ठ भवन में ऊपर
बजते हुए मृदंग वाद्यों के साथ
भोग भोगताहुआ (वह) विचरने लगा ।
उस काल उस समय में
अरिहन्त अरिष्टनेमि यावत् पधारे,
(और) श्रीवन उद्यान में यथा विधि
अवग्रह आदि की आज्ञा लेकर यावत्
विचरने लगे ।
परिषद् आई ।
तब उस अनिकसेन कुमार ने

पाणिग्रहण कराने के पश्चात् उस नाग गाथापति ने अनीकसेन कुमार को इस प्रकार का प्रीति-दान दिया, जैसे कि बत्तीस करोड़ चांदी, सोना आदि ।

इसका विवरण महाबल के समान समझना ।

यावत् अनिक सेन ऊपर प्रासाद में बजती हुई मृदङ्गों की ताला के साथ उत्तम भोगों को भोगते हुए रहने लगा ।

उस काल उस समय में अरिहन्त अरिष्टनेमि यावत् भद्दिलपुर पधारे ।

श्रीवन नाम के उद्यान में यथाविधि अवग्रह-तृणादि की आज्ञा लेकर यावत् विचरने लगे ।

धर्म श्रवण करने परिषद् आई ।

[मूल सूत्र पाठ]	[संस्कृत छाया]
तं महया जणसद्द जहा गोयमे तहा,	तं महज्जनशब्दं यथा गौतमस्तथा,
णवरं सामाइयमाइयाइं	विशेषेण सामायिकादीनि
चोद्दस पुव्वाइं अहिज्जइ ।	चतुर्दश पूर्वाणि अधीते ।
वीसं वासाइं परियाओ,	विंशति वर्षाणि दीक्षापर्यायः,
सेसं तहेव जाव सेत्तुंजे पव्वए	शेषं तथैव यावत् शत्रुञ्जये पर्वते
मासियाए संलेहणाए जाव सिद्धे ।	मासिक्या संलेखनया यावत् सिद्धः ।
एवं खलु जम्बू !	एवं खलु जम्बू !
समणेणं जाव संपत्तेणं अट्ठमस्स	श्रमणेन यावत् संप्राप्तेन अष्टमस्यांगस्य
अंगस्स अंतगडदसाणं तच्चस्स वग्गस्स	अंतकृद्दशानां तृतीयस्य वर्गस्य
पढमस्स अज्झयणस्स अयमट्ठे पण्णत्ते ।	प्रथमस्य अध्ययनस्य अयमर्थः प्रज्ञप्तः ।

इति प्रथमं अध्ययनम्

सूत्र ५

जहा अणीयसेणे, एवं सेसावि—	यथा अनीकसेनः, एवं शेषान्यपि—
[अणंतसेणे अजयसेणे अणिहयरिऊ देवसेणे सत्तुसेणे]	२. अनंतसेनः, ३. अजितसेनः, ४. अनिहतरिपुः, ५. देवसेनः, ६. शत्रुसेनः।
छ अज्झयणा एगगमा—बत्तीसओ दाओ,	षडध्ययनानि एकगमानि, द्वात्रिंशत् दायः
वीसं वासाइं परियाओ,	विंशति वर्षाणि दीक्षापर्याय :
चोद्दस पुव्वाइं अहिज्जंति,	चतुर्दशपूर्वाणि अधीयते,
सेत्तुंजे जाव सिद्धा ।	शत्रुञ्जये यावत् सिद्धाः ।
छट्ठमज्झयणं समत्तं ।	षष्ठमाध्ययनं समाप्तम् ।

इति दो से छ अध्ययन

[हिन्दी पद्यानुवाद]

जन समुदाय का कोलाहल सुनकर
'गौतम' की तरह दीक्षादि ली।
विशेष रूप से सामायिक आदि
चौदह पूर्व का ज्ञान सीखा।
बीस वर्ष की दीक्षा पर्याय पाली।
शेष उसी प्रकार यावत् शत्रुंजय पर्वत पर
१मासकीसंलेखणाकरके यावत् सिद्धहुए।
इस प्रकार हे जम्बू!
श्रमण यावत् मुक्ति प्राप्त प्रभु ने आठवें
अंग अन्तकृद्दशा के तीसरे वर्ग के
प्रथम अध्ययन का यह भाव दर्शाया है।

[हिन्दी भाष्य]

तदनन्तर उस अनीकसेन कुमार के कर्ण रन्ध्रों में प्रभु दर्शनार्थ जाते हुए जन समूह का विपुल जनरव पड़ा। गौतम के समान कुमार अनीकसेन ने भी समवसरण में जा, प्रभु का उपदेश सुन माता पिता की आज्ञा ले प्रभु चरणों में दीक्षा ग्रहण की। विशेष यह कि सामायिक आदि १४ पूर्वों का ज्ञान सीखा २० वर्ष की श्रमण पर्याय का पालन किया। शेष उसी प्रकार यावत् शत्रुंजय पर्वत पर जाकर एक मास की संलेखणा करके यावत् सिद्ध हुए।

उपसंहार—इस प्रकार हे जम्बू! श्रमण यावत् मुक्ति प्राप्त प्रभु ने आठवें अंतगडदशा नामक अंग शास्त्र के तीसरे वर्ग के प्रथम अध्ययन का इस भांति वर्णन किया है।"

तीसरे वर्ग का प्रथम अध्ययन समाप्त

सूत्र ५

जैसे अनिकसेन वैसे शेष दूसरे भी। जैसे
(अनन्तसेन, अजितसेन, अनिहतरिपु,
देवसेन शत्रुसेन) ये
छः अध्ययन एक समान हैं। (सबने)
बत्तीस करोड़ का दहेज (लेकर),
बीस वर्ष की दीक्षा पर्याय पालनकर
चौदह पूर्वों का अध्ययन किया एवं
शत्रुंजय पर्वत पर यावत् सिद्ध हुए।

जिस प्रकार अनीकसेन कुमार का वर्णन किया गया, उसी प्रकार शेष अध्ययन भी—२ अनन्तसेन, ३ अजितसेन, ४ अनिहतरिपु ५ देवसेन और ६ शत्रुसेन—समझना।

ये छः ही अध्ययन एक समान हैं। इन सबको भी बत्तीस २ कोटी सोने का दहेज मिला। सबका २०/२० वर्ष का दीक्षा काल रहा। सबने चौदह पूर्व का अध्ययन किया एवं सभी शत्रुंजय पर्वत पर यावत् सिद्ध हुए।

तीसरे वर्ग के २ से ६ अध्ययन समाप्त

[मूल सूत्र पाठ]	[संस्कृत छाया]

सातवां अध्ययन

जइणं भन्ते ! उक्खेवो सत्तमस्स ।	यदि खलु भदन्त! उत्क्षेपकः सप्तमस्य।
तेणं कालेणं तेणं समएणं	तस्मिन् काले तस्मिन् समये
बारवईए णयरीए जहा पढमे,	द्वारावत्यां नगर्यां यथा प्रथमे,
णवरं–वसुदेवे राया, धारिणी देवी,	विशेषेण वसुदेवो राजा, धारिणी देवी,
सीहो सुमिणे, सारणे कुमारे,	सिंहः स्वप्ने, सारणः कुमारः,
पण्णासओ दाओ, चोद्दस पुव्वाइं,	पंचाशत् दायः, चतुर्दश पूर्वाणि,
वीसंवासाइं परियाओ,	विंशति वर्षाणि दीक्षापर्यायः,
सेसं जहा गोयमस्स जाव	शेषः यथा गौतमस्य यावत्
सेत्तुंजे सिद्धे ।	शत्रुञ्जये सिद्धः ।

इति सप्तममध्ययनम्

अष्टममध्ययनम्

जइणं भन्ते ! उक्खेवो अट्ठमस्स !	यदि खलु भदन्त! उत्क्षेपकः अष्टमस्य ।
एवं खलु जंबू! तेणं कालेणं तेणं समएणं	एवं खलु जम्बू! तस्मिन्काले तस्मिन्समये
बारवईए णयरीए जहा पढमे,	द्वारावत्यां नगर्या यथा प्रथमे,
जाव अरहा अरिट्ठणेमी सामी समोसढे ।	यावन्नर्हनरिष्टनेमिः स्वामीसमवसृतः ।
तेणं कालेणं तेणं समएणं	तस्मिन् काले तस्मिन् समये
अरहओ अरिट्ठणेमिस्स छ अंतेवासी,	अर्हतः अरिष्टनेमेः षट् अन्तेवासिनः,
छ अणगारा भायरो सहोयरा होत्था ।	षट् अनगाराः भ्रातरः सहोदराः अभवन्।
सरिसया, सरिसत्तया, सरिसव्वया,	सदृशकाः, सदृक्त्वचाः, सदृशवयस्काः,
णीलुप्पल-गवल-गुलिय	नीलोत्पल-गवलगुलिका
अयसिकुसुमप्पगासा,	अलसीकुसुमप्रकाशाः

[हिन्दी शब्दार्थ] [हिन्दी अर्थ]

सातवां अध्ययन

हे पूज्य ! सातवें का यह उत्क्षेपक है।
उस काल उस समय में
द्वारिका नगरी थी। जैसे प्रथम में।
विशेष-वसुदेव राजा धारिणी रानी थी।
स्वप्न में रानी ने सिंह देखा। उनके
सारण नाम का कुमार था।
पचास-पचास स्वर्ण रजत कोटि का
दहेज मिला। १४ पूर्व सीखे।
बीस वर्ष दीक्षा पर्याय पाली।
शेष गौतम की तरह यावत्
शत्रुंजय पर सिद्ध हुए।

उत्क्षेपक शब्द सातवें अध्ययन का प्रारंभिक वाक्य है। अर्थात् आर्य जम्बू—"हे पूज्य! श्रमणभगवान् महावीर ने छठे अध्ययन का जो भाव कहा वह सुना, अब सातवें अध्ययन का क्या अधिकार है ? कृपा कर कहिये।"

आर्य सुधर्मा—"उस काल उस समय में द्वारिका नगरी थी। वहां का वर्णन प्रथम अध्ययन के समान समझा जाय। विशेष वहां वसुदेव राजा थे और धारिणी देवी उनकी रानी थी। देवी ने सिंह का स्वप्न देखा। उनके कुंवर का नाम सारण कुमार था। उसे विवाह में पचास पचास स्वर्ण रजत कोटि का दहेज मिला। सारण कुमार ने सामायिक आदि १४ पूर्वों का अध्ययन किया। बीस वर्ष तक दीक्षा पर्याय का पालन किया। शेष गौतम कुमार की तरह शत्रुंजय पर्वत पर एक मास की संलेखना सहित यावत् सिद्ध हुए।"

सातवां अध्ययन समाप्त

आठवां अध्ययन

हे पूज्य ! यह आठवें का उत्क्षेपक है।
इस प्रकार हे जम्बू! उस काल उस समय
पूर्वोक्त वर्णनवाली द्वारिका नगरी में
यावत् अर्हन् अरिष्टनेमि स्वामी पधारे।
उस काल उस समय में
अर्हन्त अरिष्टनेमि के छः अन्तेवासी शिष्य
छः अणगार सहोदर भाई थे।
वे समान आकार त्वचा रूपवय वाले थे।
नील कमल, सींग की गुली,
अलसी के फूल के तुल्य

आर्य जम्बू—"हे पूज्य ! सातवें अध्ययन का भाव सुना, अब आठवें का क्या अधिकार है ?"

आर्य सुधर्मा—"इस प्रकार हे जम्बू ! उस काल, उस समय में द्वारिका नगरी में प्रथम अध्ययन में किये गये वर्णन के अनुसार यावत् अरिहंत अरिष्टनेमि भगवान् पधारे।"

"उस काल और उस समय में भगवान् नेमिनाथ के अंतेवासी-शिष्य छः मुनि सहोदर भाई थे। वे समान आकार वाले, समान

[मूल सूत्र पाठ]

सिरिवच्छं-कियवच्छा
कुसुमकुंडल-भद्दलया, णलकुव्वरसमाणा।
तएणं ते छ अणगारा जं चेव दिवसं
मुंडा भवित्ता अगाराओ अणगारियं
पव्वइया, तं चेव दिवसं
अरहं अरिट्ठणेमिं वंदंति, णमंसंति,
वंदित्ता णमंसित्ता एवं वयासी—
इच्छामो णं भन्ते ! तुब्भेहिं
अब्भणुण्णाया समाणा जावज्जीवाए
छट्ठं छट्ठेणं अणिक्खित्तेणं तवोकम्मेणं
अप्पाणं भावेमाणा विहरित्तए।
अहासुहं देवाणुप्पिया! मा पडिबन्धं करेह
तएणतेछअणगारा अरहया अरिट्ठणेमिणा
अब्भणुण्णाया समाणा जावज्जीवाए
छट्ठं छट्ठेणं जाव विहरंति।
तएणं ते छ अणगारा अण्णया कयाइं
छट्ठक्खमणपारणगंसि पढमाए
पोरिसीए सज्झायं करेंति,
जहा गोयमसामी,
जाव इच्छामो ण भंते !
छट्ठक्खमणस्स पारणए तुब्भेहिं
अब्भणुण्णाया समाणा तिहिं
संघाडएहिं बारवईए णयरीए
जाव अडित्तए।
अहा सुहं देवाणुप्पिया !
तएणं ते छ अणगारा

[संस्कृत छाया]

श्रीवत्सांकित वक्षसः,
कुसुमकुंडलभद्र अलकाः नलकूवर
समानाः। ततःखलु ते षडनगाराःयस्मिन्नेव
दिवसे मुंडाः भूत्वा अगारात् अनगारितां
प्रव्रजिताः, तस्मिन्नेव दिवसे
अर्हन्तं अरिष्टनेमिं वंदन्ति नमस्यन्ति,
वन्दित्वा नमस्यित्वा एवं अवदन्—
इच्छामः खलु भदन्त! युष्माभिः
अभ्यनुज्ञाताः सन्तः यावज्जीवम्
षष्ठ षष्ठेन अनिक्षिप्तेन तपः कर्मणा
आत्मानं भावयन्तः विहर्तुम्।
यथासुखं देवानुप्रिय! मा प्रतिबन्धं कुरुत
ततःखलुतेषडनगाराः अर्हताअरिष्टनेमिना
अभ्यनुज्ञाताः सन्तः यावज्जीवम्
षष्ठं षष्ठेन यावत् विहरन्ति।
ततः खलु ते षट् अनगाराः
अन्यदा कदाचित् षष्ठक्षमणपारणायाम्
प्रथमायां पौरुष्यां स्वाध्यायं कुर्वन्ति,
यथा गौतमस्वामी,
यावत् इच्छामः खलु भदन्त।
षष्ठक्षपणस्य पारणायां युष्माभिः
अभ्यनुज्ञाताः सन्तः त्रिभिः
संघाटकैः द्वारावत्यां नगर्याम्
यावत् अटितुम्।
यथा सुखं देवानुप्रिया!
ततः खलु ते षडनगाराः

[हिन्दी पद्यानुवाद]

श्रीवत्स से अंकित वक्ष वाले थे।
कुसुम तुल्य कोमल,कुंडल सम घुंघराले
बाल वाले नलकूबर के समान थे।
इसके बाद वे छः अणगार जिस दिन
आगार से अणगार धर्म में दीक्षित
होकर प्रव्रजित हुए उसी दिन
अ० अरिष्ट० को वन्दन नमन करते हैं।
वन्दन नमस्कार कर वे इस प्रकार बोले-
"हे भवन्त ! हम चाहते हैं आपकी
आज्ञा पाकर जीवन भर के लिए
बेले-बेले का तप करते हुए एवं उससे
अपनीआत्माकोभावितकरतेहुएविहरना।"
'हे देवानुप्रिय! तथास्तु। प्रमाद न करो।'
तब वे छः ही मुनि अर्हन्त अरिष्टनेमि की
आज्ञा पाकर जीवन पर्यन्त
बेले-बेले का तपकरते हुए विचरने लगे
तब उन छः अणगारों नेअन्यदाकिसी दिन
बेले के तप के पारणों में प्रथम
प्रहर में स्वाध्याय की।
गौतम कुमार की तरह
यावत् बोले "हे भगवन् ! हम चाहते हैं
बेलें के तप के पारणों में आपकी
आज्ञा पाकर तीन (दो-दो के तीन)
संघाड़ों से द्वारिका नगरी में
यावत् भ्रमण करना।"
'तथास्तु देवानुप्रियो !'
इसके बाद वे ६ अणगार

[हिन्दी अर्थ]

त्वचा और अवस्था में समान दिखने वाले थे, शरीर का रंग नीलकमल सींग की गुली और अलसी के फूल जैसा था। श्रीवत्स से अंकित वक्ष और कुसुम के समान कोमल एवं कुंडल के समान घुंघराले बालों वाले वे सभी मुनि नल-कूबर के समान थे।

तब (दीक्षित होने के पश्चात्) वे छहों मुनि जिस दिन मुंडित होकर आगार से अणगार धर्म में प्रव्रजित हुए, उसी दिन अरिहंत अरिष्टनेमि को वन्दना नमस्कार कर इस प्रकार बोले —

'हे भगवन्! हम चाहते हैं कि आपकी आज्ञा पाकर जीवन पर्यन्त निरन्तर बेले२ की तपस्या द्वारा अपनी अपनी आत्मा को भावित (शुद्ध) करते हुए विचरण करें।"

प्रभु ने कहा—"हे देवानुप्रियो ! जिससे तुम्हें सुख प्राप्त हो वही काम करो, प्रमाद मत करो।"

तब भगवान् के ऐसा कहने पर वे छहों मुनि भगवान् अरिष्टनेमि की आज्ञा पाकर जीवन भर के लिये बेले-बेले की तपस्या करते हुए यावत् विचरण करने लगे।

तदनन्तर उन छहों मुनियों ने अन्यदा किसी समय, बेले की तपस्या के पारणे के दिन प्रथम प्रहर में स्वाध्याय की और गौतम स्वामी के समान यावत् बोले-"हे भगवन् ! हम बेले की तपस्या के पारणे में आपकी आज्ञा पाकर दो-दो के तीन संघाड़ा सेद्वारिका नगरी में यावत् भिक्षा हेतु भ्रमण करना चाहते हैं।"

[मूल सूत्र पाठ]	[संस्कृत छाया]
अरहया अरिट्ठणेमिणा अब्भणुण्णाया	अर्हता अरिष्टनेमिना अभ्यनुज्ञाताः
समाणा अरहं अरिट्ठणेमिं	सन्तः अर्हन्तं अरिष्टनेमिम्
वंदंति, णमंसंति, वंदित्ता,	वंदन्ति, नमस्यन्ति, वन्दित्वा,
णमंसित्ता अरहओ अरिट्ठणेमिस्स	नमस्यित्वा, अर्हतः अरिष्टनेमेः
अंतियाओ सहस्संव- वणाओ,	अन्तिकात् सहस्राम्रवनात्
उज्जाणाओ पडिणिक्खमंति	उद्यानात् प्रतिनिष्क्रामन्ति,
पडिणिक्खमित्ता तिहिं संघाडएहिं	प्रतिनिष्क्रम्य त्रिभिः संघाटकैः
अतुरियं जाव अडन्ति ।	अत्वरितं यावत् अटन्ति
तत्थणं एगे संघाडए वारवईए	तत्र खलु एकः संघाटकः द्वारावत्याम्
णयरीए उच्च-णीय मज्झि-माइं	नगर्याम् उच्च नीच मध्यमानि
कुलाइं घरसमुदाणस्स	कुलानि गृहसमुदानस्य
भिक्खायरियाए अडमाणे	भिक्षाचर्यायै अटन्
वसुदेवस्स रण्णोदेवईए देवीए	वसुदेवस्य राज्ञो देवक्याः देव्याः
गिहं अणुप्पविट्ठे ।	गृहे अनुप्रविष्टः ।
तएणं सा देवई देवी	ततः खलु सा देवकी देवी
ते अणगारे एज्जमाणे	तौ अणगारौ आगच्छन्तौ
पासित्ता हट्ठ तुट्ठ चित्तमाणंदिया	दृष्ट्वा हृष्टतुष्टचित्तानन्दिता
पीईमाणा परमसोमणस्सिया	प्रीतिमना परमसौमनस्यिता
हरिसवसविसप्पमाणहियया	हर्षवशविसर्पणहृदया
आसणाओ अब्भुट्ठेइ,	आसनात् अभ्युत्तिष्ठति,
अब्भुट्ठित्ता सत्तट्ठपयाइं	अभ्युत्थाय सप्ताष्ट पदानि
अणुगच्छइ	अनुगच्छति ।
अणुगच्छित्ता तिक्खुत्तो	अनुगम्य त्रिः कृत्वा
आयाहिणं पयाहिणं करेइ,	आदक्षिणप्रदक्षिणां करोति ।
करित्ता वंदइ णमंसइ,	कृत्वा, वन्दति नमस्यति

[हिन्दी शब्दार्थ]

अर्हन्त अरिष्टनेमि से आज्ञा प्राप्त
कर उन अर्हन्त अरिष्टनेमि भगवान को
वन्दन करते हैं नमस्कार करते हैं। वन्दन
नमस्कार करके अर्हन्त अरिष्टनेमि के
पास से सहस्राम्र वन नामक (उस)
उद्यान से वे प्रस्थान करते हैं।
प्रस्थान करके दो-दो मुनि तीन सघाडों में
त्वरा रहित यावत् भ्रमण करने लगे।
इसके बाद एक सघाडा द्वारिका
नगरी में ऊंच नीच मध्यम
कुलों के घरों में सामूहिक
भिक्षाचरी हेतु भ्रमण करते-करते
वसुदेव जी की राणी देवकी देवी के
प्रासाद में प्रविष्ट हुआ।
इसके बाद उस देवकी देवी ने
उन दोनों मुनियों को आते हुए
देख हृष्टतुष्टचित्त व आनन्दित हुई,
(उसके) मन में प्रीति हुई (तथा वह)
परम सौमनस्यवती हुई।
हर्ष के कारण उसका हृदय नाचने लगा।
आसन से उठती है,
उठकर, सात आठ कदम
सामने जाती है
सामने जाकर तीन बार दक्षिण
की तरफ से प्रदक्षिणा करती है
प्रदक्षिणा करके वन्दना नमस्कार करती है

[हिन्दी भावार्थ]

तब उन छहों मुनियों ने अरिहंत अरिष्टनेमि की आज्ञा पाकर प्रभु को वंदन नमस्कार किया। वंदन नमस्कार कर वे भगवान् अरिष्टनेमि के पास से सहस्राम्रवन उद्यान से प्रस्थान करते हैं। उद्यान से निकल कर वे दो दो के तीन संघाटकों में सहज गति से यावत् भ्रमण करने लगे।

उन तीन संघाटकों (सघाडों) में से एक सघाडा द्वारिका नगरी के ऊंच-नीच-मध्यम कुलों में, एक घर से दूसरे घर, भिक्षाचर्या के हेतु भ्रमण करता हुआ राजा वसुदेव की महारानी देवकी के प्रासाद में प्रविष्ट हुआ।

उस समय वह देवकी रानी उन दो मुनियों के एक सघाड़े को अपने यहां आते देखकर हृष्ट-तुष्ट चित्त के साथ आनन्दित हुई। प्रीतिवश उसका मन परमाह्लाद को प्राप्त हुआ, हर्षातिरेक से उसका हृदय कमल प्रफुल्लित हो उठा।

आसन से उठकर वह सात आठ पग (कदम) मुनियुगल के सम्मुख गई। सामने आकर उसने तीन बार दक्षिण की ओर से

[हिन्दी शब्दार्थ]

वन्दना नमस्कार करके
जहां भोजनशाला थी वहीं
आती है । वहां आकर
सिंह केसर वाले लड्डुओं के थाल को
भरती है, भरकर
उन दोनों मुनियों को प्रतिलाभ देती है।
प्रतिलाभ देकर वन्दना नमस्कार करती है।
वन्दना नमस्कार करके विसर्जित करती है।

[हिन्दी अर्थ]

उनकी प्रदक्षिणा की । प्रदक्षिणा कर उन्हें वन्दन-नमस्कार किया । वन्दन नमस्कार के पश्चात् जहां भोजनशाला है, वहां आई । भोजनशाला में आकर कृष्ण के प्रसाद योग्य सिंहकेसर मोदकों से एक थाल भरा और थाल भर कर उन मुनियों को प्रतिलाभ दिया, प्रतिलाभ देने के पश्चात् देवकी ने उन्हें पुनः वन्दन-नमन किया एवं वन्दन नमन कर उन्हें प्रतिविसर्जित किया अर्थात् लौटने दिया ।

सूत्र ४

इसके बाद मुनियों का दूसरा सघाडा
द्वारिका नगरी में उच्च यावत् नीच मध्यम
कुलों में भ्रमण करता हुआ आया
पूर्ववत् उसको भी विसर्जित किया ।
इसके बाद मुनियों का तीसरा सघाडा
आया यावत् उसे भी प्रतिलाभ देती है ।
उसको प्रतिलाभ देकर इस प्रकार बोली
हे देवानुप्रिय ! क्या
कृष्ण वासुदेव की इस
द्वारावती नगरी में
बारह योजन लम्बाई वाली
नौ योजन विस्तार वाली
प्रत्यक्ष देवलोक रूपिणी में
श्रमण निर्ग्रन्थ ऊंचे नीचे व मध्यम
कुलों में गृह समुदाय को
भिक्षाचर्या के लिए भ्रमण करते हुए

प्रथम सघाटक के लौट जाने के पश्चात् उन छः सहोदर साधुओं के तीन सघाटकों में से दूसरा सघाटक भी द्वारिका के उच्च-नीच मध्यम आदि कुलों में भिक्षार्थ भ्रमण करता हुआ महारानी देवकी के प्रासाद में आया । देवकी ने प्रथम सघाटक की भांति दूसरे मुनि सघाटक को भी हृष्टतुष्ट हो सिंह केसर मोदकों का प्रतिलाभ देकर यावत् विसर्जित किया ।

द्वितीय सघाटक के लौट जाने के अनन्तर उन मुनियों का तीसरा सघाडा भी द्वारिका नगरी मे ऊंच-नीच-मध्यम कुलों में भिक्षार्थ भ्रमण करता हुआ महारानी देवकी के प्रासाद में प्रविष्ट हुआ । देवकी ने पहले आये दो सघाटकों के समान उस तीसरे सघाटक को भी हृष्ट-तुष्ट हो यावत् सिंह केसर मोदकों का प्रतिलाभ दिया । प्रतिलाभ देकर महारानी देवकी इस प्रकार बोली—

"हे देवानुप्रियो ! क्या कृष्ण-वासुदेव की इस बारह योजन लम्बी नव योजन चौड़ी प्रत्यक्ष स्वर्गपुरी के समान द्वारिका नगरी में श्रमण-निर्ग्रन्थ उच्च-नीच एवं मध्यम

[मूल सूत्र पाठ]

भत्तपाणं णो लभंति ?
जण्णं ताइं चेव कुलाइं
भत्तपाणाए भुज्जो भुज्जो
अणुप्पविसंति ।

[संस्कृत छाया]

भक्तपानं न लभन्ते ?
येन खलु तानि चैव कुलानि
भक्तपानाय भूयोभूयः
अनुप्रविशन्ति ।

सूत्र ५

तएणं ते अणगारा
देवइं देवीं एवं वयासी—
णो खलु देवाणुप्पिये !
कण्हस्स वासुदेवस्स इमीसे
बारवईए णयरीए जाव
देवलोगभूयाए
समणा णिग्गंथा उच्चणीय-
जाव अडमाणा
भत्तपाणं णो लब्भंति
णो चेव णं ताइं ताइं कुलाइं
दोच्चंपि तच्चंपि भत्तपाणाए
अणुप्पविसंति ।
एवं खलु देवाणुप्पिए !
अम्हे भद्दिलपुरे णयरे णागस्स
गाहावइस्स पुत्ता सुलसाए भारियाए
अत्तया छ भायरो
सहोयरा सरिसया जाव
णलकुब्बरसमाणाः
अरहओ अरिट्ठणेमिस्स
अंतिए धम्मं सोच्चा णिसम्म
संसार भउ-व्विग्गा
भीया जम्ममरणाओ,

ततः खलु तौ अनगारौ
देवकीं देवीं एवम् अवदताम्
न खलु देवानुप्रिये !
कृष्णस्य वासुदेवस्य अस्याम्
द्वारावत्यां नगर्यां यावत्
देवलोकभूतायाम्
श्रमणाः निर्ग्रन्थाः उच्चनीच
यावत् अटन्तः
भक्तपानं न लभन्ते ।
नो चैव खलु तानि तानि कुलानि
द्वितीयमपि तृतीयमपि भक्त-पानाय
अनुप्रविशन्ति ।
एवं खलु देवानुप्रिये !
वयं भद्दिलपुरे नगरे नागस्य
गाथापतेः पुत्राः सुलसायाः भार्यायाः
आत्मजाः षट् भ्रातरः
सहोदराः सदृशकाः यावत्
नल-कूबरसमानाः
अर्हत. अरिष्टनेमेः
अन्तिके धर्मं श्रुत्वा, निशम्य
संसार भयोद्विग्नाः
भीताः जन्म-मरणाभ्याम्,

[हिन्दी शब्दार्थ]

आहार पानी नहीं प्राप्त करते हैं ? जिससे कि उन्हीं कुलों में आहार पानी के लिए बार बार प्रवेश करते हैं।

[हिन्दी भाव]

कुलों ने गृह-समुदायों से, भिक्षार्थ भ्रमण करते हुए आहार पानी नहीं प्राप्त करते, जिससे कि उन्हें (श्रमण निग्रन्थों को) आहार-पानी के लिये जिन कुलों में पहले आ चुके हैं, उन्हीं कुलों में पुनः पुनः आना पड़ता है?"

सूत्र ६

इसके बाद उन दोनों मुनियों ने देवकी देवी को इस प्रकार कहा— हे देवानुप्रिये ! ऐसा नहीं है कि कृष्ण वासुदेव की इस द्वारिका नगरी में जो यावत् देवलोक के समान है श्रमण निर्ग्रन्थ उच्च नीच आदि कुलों में यावत् भ्रमण करते हुए आहार पानी नहीं प्राप्त करते हैं और न ही उन-उन कुलों में दूसरी बार तीसरी बार आहार पानी के लिए मुनि लोग प्रवेश करते हैं। हे देवानुप्रिये! बात इस प्रकार है कि— हम भद्दिलपुर नगर में नाग गाथापति के पुत्र उनकी भार्या सुलसा के अंगजात छः भाई एक ही उदर से उत्पन्न हुए समान आकृति वाले यावत् नलकूबर के समान हैं। (हमने) अर्हत अरिष्टनेमि भगवान से धर्म सुनकर मन में धारण करके संसार के भय से उद्विग्न जन्म व मरण के भय से भीत

देवकी देवी द्वारा इस प्रकार का प्रश्न पूछे जाने पर वे मुनि देवकी देवी से इस प्रकार बोले—"हे देवानुप्रिये ! ऐसी बात तो नहीं है कि कृष्ण वासुदेव की यावत् प्रत्यक्ष स्वर्ग के समान, इस द्वारिका नगरी में श्रमण निर्ग्रन्थ उच्च-नीच-मध्यम कुलों में यावत् भ्रमण करते हुए आहार-पानी प्राप्त नहीं करते। और न मुनि लोग भी आहार-पानी के लिये उन एक बार स्पृष्ट कुलों में दूसरी-तीसरी बार जाते हैं।

वास्तव में बात इस प्रकार है —"हे देवानुप्रिये ! भद्दिलपुर नगर में हम नाग गाथापति के पुत्र और नाग की सुलसा भार्या के आत्मज छः सहोदर भाई हैं, पूर्णतः समान आकृति वाले यावत् नल कुबेर के समान। हम छहों भाइयों ने अरिहंत अरिष्टनेमि के पास धर्म उपदेश सुनकर और उसे धारण करके संसार के भय से उद्विग्न एवं जन्ममरण से भयभीत हो मुंडित होकर यावत् श्रमण धर्म की दीक्षा ग्रहण की।

[मूल सूत्र पाठ]	[संस्कृत छाया]
मुंडा जाव पव्वइया ।	मुंडाः यावत् प्रव्रजिताः ।
तए णं अम्हे जं चेव दिवसं	ततः खलु वयं यस्मिन् एव दिवसे
पव्वइया तं चेव दिवसं	प्रव्रजिताः तस्मिन् एव दिवसे
अरहं अरिट्ठणेमि वंदामो णमंसामो	अर्हन्तं अरिष्टनेमिं वन्दामः नमस्यामः
वंदित्ता, णमंसित्ता	वन्दित्वा, नमस्यित्वा
इमं एयारूवं अभिग्गहं	इमम् एतद् रूपम् अभिग्रहम्
अभिगिण्हामो	अभिगृह्णीमः
इच्छामो णं भन्ते !	इच्छामः खलु भदन्त !
तुब्भेहिं अब्भणुण्णाया समाणा	युष्माभिः अभ्यनुज्ञाताः सन्तः
जाव अहासुहं ।	यावत् यथासुखम् ।
देवाणुप्पिया ! तए णं	हे देवानुप्रिये! ततः खलु
अम्हे अरहया अरिट्ठणेमिणा	वयम् अर्हता अरिष्टनेमिना
अब्भणुण्णाया समाणा	अभ्यनुज्ञाताः सन्तः
जावज्जीवाए छट्ठं छट्ठेणं	यावज्जीवम् षष्ठषष्ठेणं
जाव विहरामो	यावत् विहरामः ।
तं अम्हे अज्ज छट्ठक्खमणपारणगंसि–	तद् वयम् अद्य षष्ठक्षमणपारणके
पढमाए पोरिसीए जाव	प्रथमायां पौरुष्यां यावत्
अडमाणा	अटन्तः
तव गेहं अणुप्पविट्ठा ।	तव गृहं (गेहं) अनुप्रविष्टाः ।
तं णो खलु देवाणुप्पिए !	तत् न खलु देवानुप्रिये !
ते चेव णं अम्हे ।	ते चैव खलु वयम् ।

[हिन्दी शब्दार्थ]

मुण्डित होकर आखिर प्रव्रज्या
(दीक्षा), ग्रहण कर ली।
तदनन्तर हमने जिस दिन
दीक्षा ग्रहण की उसी दिन
अरिहन्त अरिष्टनेमि को
वन्दना की उन्हें नमस्कार किया।
वन्दना नमस्कार करके
एक इस प्रकार के अभिग्रह को
धारण किया है।
हे भगवन्! निश्चय से हम चाहते हैं
आपसे आज्ञा दिये गये होते हुए
(बेले बेले की तपस्या करना)
(प्रभु ने कहा) तथास्तु–जैसा सुख हो।
हे देवानुप्रिये! तदनन्तर
हम भगवान् अरिष्टनेमि से
आज्ञा दिये गये होकर
जीवनभर के लिए निरन्तर
बेले-बेले की तपस्या करते हुए
विचरण कर रहे हैं।
अतः हम आज बेले के तप के पारणे में
प्रथम प्रहर में (स्वाध्याय करके) यावत्
विचरण करते हुए
आपके घर में प्रविष्ट हुए हैं।
इस कारण नहीं हैं हे देवानुप्रिये!
हम वे ही (पहले आये हुए)।

[हिन्दी अर्थ]

तदनन्तर हमने जिस दिन दीक्षा ग्रहण की थी, उसी दिन अरिहत अरिष्टनेमि को वदन-नमन किया और वन्दन नमस्कार कर इस प्रकार का यह अभिग्रह धारण करने की आज्ञा चाही "हे भगवन्! आपकी अनुज्ञा पाकर हम जीवन पर्यन्त बेले-बेले की तपस्या पूर्वक अपनी आत्मा को भावित करते हुए विचरना चाहते हैं।"

यावत् प्रभु ने कहा—"देवानुप्रियो! जिससे तुम्हें सुख हो वैसा ही करो, प्रमाद न करो।"

उसके बाद अरिहत अरिष्टनेमि की अनुज्ञा प्राप्त होने पर हम जीवन भर के लिये निरतर बेले बेले की तपस्या करते हुए विचरण करने लगे।

तो इस प्रकार आज हम यहाँ आई-बेले की तपस्या के पारणे के दिन प्रथम प्रहर में स्वाध्याय करने के पश्चात्—प्रभु अरिष्टनेमि की आज्ञा प्राप्त कर यावत् तीन सघाटकों में भिक्षार्थ उच्च-मध्यम एव निम्न कुलों में भ्रमण करते हुए तुम्हारे घर आ पहुचे हैं। तो देवानुप्रिये! ऐसी बात नहीं है कि जो पहले दो सघाटकों में जो मुनि तुम्हारे यहां आये थे वे हम ही हैं। वस्तुत हम दूसरे हैं।"

[मूल सूत्र पाठ]	[संस्कृत छाया]
अम्हे णं अण्णे ।	वयं खलु अन्ये ।
देवई देवीं एवं वयइ,	देवकीं देवीं एवं वदति,
वइत्ता	वदित्वा
जामेव दिसं पाउब्भूए	यस्याः दिशः प्रादुर्भूताः
तामेव दिसं पडिगए ।	तस्यामेव दिशायाम् प्रतिगताः ।

सूत्र ६

तएणं तीसे देवईए देवीए	ततः खलुः तस्याः देवक्याः देव्याः
अयमेयारूवे अज्झत्थिए	अयमेतद्रूपः अध्यवसायः
जाव समुप्पण्णे ।	यावत् समुत्पन्नः ।
एवं खलु अहं पोलासपुरे णयरे	एवं खलु अहं पोलासपुरे नगरे
अइमुत्तेणं कुमार समणेणं–	अतिमुक्त कुमार श्रमणेन
वालत्तणे वागरिया–	वालत्वे व्याकृता—
तुमं णं देवाणुप्पिए ! अट्ठपुत्ते	त्वं खलु देवानुप्रिये ! अष्ट पुत्रान्
पयाइस्ससि, सरिसए जाव	प्रजनिष्यसे, सदृशकान् यावत्
णलकुव्वरसमाणे,	नलकूवरसमानान्,
णो चेव णं भारहेवासे अण्णाओ	न चैव खलु भारते वर्षे अन्याः
अम्मयाओ तारिसए पुत्ते	अम्वाः तादृशकान् पुत्रान्
पयाइस्संति ।	प्रजनिष्यन्ते ।
तं णं मिच्छा इमं णं	तत् खलु मिथ्या इदम् खलु
पच्चक्खमेव दिस्सइ	प्रत्यक्षमेव दृश्यते
भारहे वासे अण्णाओ वि अम्मयाओ	भारते वर्षे अन्या अपि अम्बा
एरिसए जाव पुत्ते पयायाओ ।	ईदृशान् यावत् पुत्रान् प्राजनिषत ।
तं गच्छामि णं अरहं अरिट्ठणेमिं	तद् गच्छामि खलु अर्हन्तं अरिष्टनेमिं
वंदामि णमंसामि	वन्दामि, नमस्यामि,
वंदित्ता, णमंसित्ता इमं	वन्दित्वा, नमस्यित्वा इदं

[हिन्दी शब्दार्थ]

हम निश्चय ही दूसरे हैं।
देवकी देवी को इस प्रकार मुनि कहते हैं।
कहकर
जिस दिशा से प्रगट हुए थे
उसी दिशा में चले गये।

[हिन्दी अर्थ]

उन मुनियों ने देवकी देवी को इस प्रकार कहा और यह कहकर वे जिस दिशा से आये थे उसी दिशा की ओर चले गये।

सूत्र ६

तदनन्तर उस देवकी देवी के मन में
इस प्रकार का विचार
यावत् उत्पन्न हुआ।
पोलासपुर नगर में मुझे इस प्रकार
अतिमुक्त कुमार श्रमण ने
बचपन में कहा था—
हे देवानुप्रिये! तू आठ पुत्रों को
जन्म देगी (जो) समान आकृतिवाले यावत्
नलकूवर के समान (होंगे)
निश्चय ही भारत में नहीं अन्य कोई
माता वैसे पुत्रों को
जन्म देगी।
यह (कथन) निश्चय ही मिथ्या है यह
प्रत्यक्ष ही दिख रहा है,
भारतवर्ष में दूसरी भी माताओं ने
ऐसे यावत् पुत्रों को जन्म दिया है।
इसलिये मैं अर्हन्त भगवान
अरिष्टनेमि के पास जाती हूँ।
वन्दना नमस्कार करती हूँ।
वन्दना, नमस्कार करके इस,

इस प्रकार की बात कह कर मुनियों के लौट जाने के पश्चात् उस देवकी देवी को इस प्रकार का विचार यावत् चिन्तापूर्ण अध्यवसाय उत्पन्न हुआ —

"पोलासपुर नगर में अतिमुक्त कुमार नामक श्रमण ने मेरे समक्ष बचपन में इस प्रकार भविष्यवाणी की थी कि हे देवानुप्रिये देवकी! तुम परस्पर एक दूसरे से पूर्णत समान आठ पुत्रों को जन्म दोगी, जो नलकूबर के समान होंगे। भरतक्षेत्र में दूसरी कोई माता वैसे पुत्रों को जन्म नही देगी।"

पर वह भविष्यवाणी मिथ्या सिद्ध हुई। क्योंकि यह प्रत्यक्ष ही दिख रहा है कि भरतक्षेत्र में अन्य माताओं ने भी सुनिश्चितरूपेण ऐसे पुत्रों को जन्म दिया है। मुनि की बात मिथ्या नही होनी चाहिये, फिर यह प्रत्यक्ष मे उससे विपरीत क्या? तो ऐसी स्थिति में मैं अरिहत अरिष्टनेमि भगवान की सेवामें जाऊं, उन्हे वदन-नमस्कार करू और वन्दन नमस्कार करके इस प्रकार के कथन के विषय में प्रभु से पूछू गी।

[मूल सूत्र पाठ]

च णं एयारूवं वागरणं
पुच्छिस्सामि त्ति कट्टु, एवं संपेहेई,
संपेहित्ता कोडुंवियपुरिसे
सद्दावेई सद्दावित्ता एवं वयासी
लहुकरण जाणप्पवरं जाव
उवट्ठवेंति ।
जहा देवाणंदा जाव पज्जुवाइइ ।

[संस्कृत छाया]

च खलु एतद्रूपं व्याकृतं
प्रक्ष्यामि इति कृत्वा एवं संप्रेक्षते ।
संप्रेक्ष्य कौटुम्बिकपुरुषान्
शब्दाययति, शब्दयित्वा एवमवादीत्–
लघुकरणं यानप्रवरं यावत्
उपस्थापयतु ।
यथा देवानन्दा यावत् पर्युपासते ।

सूत्र ७

तए णं अरहा अरिट्ठणेमी
देवईं देवीं एव वयासी–
से णूणं तव देवई ! इमे
छ अणगारे पासित्ता
अयमेयारुवे अज्झत्थिए
जाव समुप्पज्जित्था,
एवं खलु पोलासपुरे
णयरे अईमुत्तेणं तं
चेव जाव णिग्गच्छसि,

णिगच्छित्ता जेणेव
ममं अंतियं हव्वमागया
से णूणं देवई देवी
अयमट्ठे समट्ठे ?
हंता ! अत्थि ।
एवं खलु देवाणुप्पिए !
तेणं कालेणं तेणं समयेणं

ततः खलु अर्हन् अरिष्टनेमी
देवकीं देवीम् एवम् अवदत्–
तत् नूनं तव देवकि ! इमान्
षडनगारान् दृष्ट्वा
एतद्रूपः अध्यवसायः
यावत् समुत्पन्नः
एवं खलु पोलासपुरे
नगरे अतिमुक्तेन तत्
चैव यावत् निर्गच्छसि,

निर्गत्य यथैव
मम अन्तिके शीघ्रमागता,
तत् नूनं देवकि देवि !
अयम् अर्थः समर्थः ?
हन्त ! अस्ति ।
एवं खलु देवानुप्रिये !
तस्मिन् काले तस्मिन् समये

[हिन्दी शब्दार्थ]

इस प्रकार के उक्ति वैपरीत्य को पूछूं गी ऐसा मन में विचार करती है। विचार कर अमात्यादि पुरुषों को बुलवाती है, बुलाकर ऐसे कहा— शीघ्रगति वाले यानप्रवर को यावत् शीघ्र उपस्थित करो। (यान द्वारा वहाँ जाकर) देवानन्दा की तरह उपासना करती है।"

[हिन्दी अर्थ]

इस प्रकार सोचा। ऐसा सोचकर देवकी देवी ने आज्ञाकारी पुरुषों को बुलाया और बुलाकर ऐसा बोली—"लघु कणवाले (शीघ्रगामी) श्रेष्ठ रथ को उपस्थित करो।" आज्ञाकारी पुरुषों ने रथ उपस्थित किया। देवकी महारानी उस रथ में बैठ कर यावत् प्रभु के समवसरण में उपस्थित हुई और देवानन्दा द्वारा जिस प्रकार भगवान् महावीर की पर्युपासना किये जाने का वर्णन है, उसी प्रकार महारानी देवकी भगवान् अरिष्टनेमि की यावत् पर्युपासना करने लगी।

सूत्र ७

तदनन्तर अरिहन्त अरिष्टनेमी ने देवकी देवी को इस प्रकार कहा— सो निश्चय ही हे देवकि! तुझे इन छः अनगारोंको देखकर इस प्रकार का मतिभ्रम यावत् उत्पन्न हो गया है। इस प्रकार पोलासपुर नगर में अतिमुक्त कुमार ने मुझे ऐसा कहा था और उसी प्रकार यावत् वन्दन को निकली, निकलकर जैसे ही शीघ्रता से मेरे पास चली आई हो। तब क्या निश्चय ही देवकि देवि! यह अर्थ तुम्हारे द्वारा समर्थित है? हे भगवन्! ऐसा ही है। इस प्रकार हे देवानुप्रिये? उस काल उस समय में

तदनन्तर अर्हत् अरिष्टनेमि देवकी को सम्बोधित कर इस प्रकार बोले-'हे देवकी! क्या इन छः साधुओं को देख कर वस्तुतः तुम्हारे मन में इस प्रकार का विचार उत्पन्न हुआ कि पोलासपुर नगर में अतिमुक्त कुमार ने तुम्हें आठ अप्रतिम पुत्रों को जन्म देने का जो भविष्यकथन किया था वह मिथ्या सिद्ध हुआ। उस विषय में पृच्छा करने के लिये तुम यावत् वन्दन को निकली और निकलकर शीघ्रता से मेरे पास चली आई हो, हे देवकी! क्या यह बात ठीक है?" देवकी ने कहा— हां भगवन्! ऐसा ही है।" प्रभु की दिव्य ध्वनि प्रस्फुटित हुई—"हे देवानुप्रिये! उस काल उस समय में भद्दिलपुर नगर में नाग नाम का गाथापति रहा करता था, जो आढ्य (महान् ऋद्धिशाली) था।

[मूल सूत्र पाठ]	[संस्कृत छाया]
भद्दिलपुरे णयरे णागे णामं गाहावई परिवसइ, अड्डे० ।	भद्रिलपुरे नगरे नागो नामकः गाथापतिः परिवसति, आढ्यः ।
तस्स णं णागस्स गाहावइस्स सुलसा णामं भारिया होत्था । सा सुलसा-गाहावइणी बालत्तणे चेव णिमित्तिएणं वागरिया-	तस्य खलु नागस्य गाथापतेः सुलसा नाम भार्या आसीत् । सा सुलसा गाथापत्नी बालत्वे चैव नैमित्तिकेन व्याकृता-
एसणं दारिया णिंदू भविस्सइ ।	एषा खलु दारिका निंदुः भविष्यति ।
तए णं सा सुलसा बालप्पभिइं चेव हरिणेगमेसि देव भत्ता यावि होत्था ।	ततः खलु सा सुलसा बालप्रभृति चैव हरिणगमेषिणो देवस्य भक्ता अभवत् ।
हरिणेगमेसिस्स पडिमं करेइ, करित्ता कल्लाकल्लिं ण्हाया जाव पायच्छित्ता उल्लपडसाडिया महरिहं पुप्फच्चणं करेइ,	हरिणगमेषिणः प्रतिमां करोति, कृत्वा कल्पं कल्पं स्नाता यावत् प्रायश्चित्ता सार्द्रपटशाटिका महार्घ्यं पुष्पार्चनं करोति,
करित्ता जाणुपायवडिया पणामं करेइ, तओ पच्छा आहारेइ वा णीहारेइ वा ।	कृत्वा जानुपादपतिता प्रणामं करोति, ततः पश्चात् आहारयति वा नीहारयति वा

सूत्र ८

तए णं तीसे सुलसाए गाहावइणीए भत्तिबहुमाण-	ततः खलु तस्याः सुलसायाः गाथापत्न्याः भक्तिबहुमान

[हिन्दी शब्दार्थ]

भद्दिलपुर नगर में नाग नामक
गाथापति रहा करता था, जो कि
धन सम्पन्न (आढ्य) था।
उस नाग नामक गाथापति के
सुलसा नाम की भार्या थी।
उस सुलसा गाथापत्नी को बचपन में
ही किसी निमित्तज्ञ ने कहा—
यह बालिका मृतवत्सा होगी।
तब वह सुलसा बाल्यकाल
से ही हरिणेगमेषी
देव की भक्त बन गई।
(उसने) हरिणेगमेषी की प्रतिमा
बनाई, बना कर
शास्त्र विधि से स्नान कर यावत्
दुःस्वप्न निवारण को
प्रायश्चित कर गीली साड़ी पहने हुए
उसकी महार्घ (उत्तमोत्तम) पुष्पों
से अर्चना करती थी।
अर्चना करके घुटने व पैर टेक कर
(पचांग) प्रणाम करती, इसके बाद
आहार नीहारादि करती।

[हिन्दी अर्थ]

उस नाग गाथापति की सुलसा नामा पत्नी थी। उस सुलसा गाथापत्नी को बाल्यावस्था में ही किसी निमित्तज्ञ ने कहा—यह बालिका मृतवत्सा यानि मृत बालकों को जन्म देने वाली होगी। तत्पश्चात् वह सुलसा बाल्यकाल से ही हरिणैगमेषी देव की भक्त बन गई।

उसने हरिणगमेषी देव की मूर्ति बनाई। मूर्ति बना कर प्रतिदिन प्रातःकाल स्नान करके यावत् दुःस्वप्न निवारणार्थ प्रायश्चित कर गीली साड़ी पहने हुए उसकी बहुमूल्य पुष्पों से अर्चना करती। पुष्पों द्वारा पूजा के पश्चात् घुटने टिकाकर पांचों अंग नमा कर प्रणाम करती तदनन्तर आहार करती निहार करती एवं अपनी दैनन्दिनी के अन्य कार्य करती।

सूत्र ८

तदनन्तर उस सुलसा
गाथापत्नी की उस भक्ति व

तत्पश्चात् उस सुलसा गाथापत्नी की उस भक्ति-बहुमान पूर्वक की गई शुश्रूषा से

[मूल सूत्र पाठ]

सुस्सूसाए हरिणेगमेसी देवे
आराहिए यावि होत्था ।
तए णं से हरिणेगमेसी देवे
सुलसाए गाहावइणीए अणुकंपणट्ठाए
सुलसं गाहावइणीं तुमं च
णं दोण्णि वि समउउयाओ करेइ ।
तएणं तुब्भे दो वि सममेव
गब्भे गिण्हह, सममेव
गब्भे परिवहह,

सममेव दारए पयायह ।
तएणं सा सुलसा गाहावइणी
विणिहायमावण्णे दारए पयाइइ ।
तएणं से हरिणेगमेसी देवे
सुलसाए अणुकंपणट्ठाए
विणिहायमावण्णाए दारए
करयल संपुडेणं गिण्हइ,
गिण्हित्ता तव अंतियं साहरइ ।
तं समयं च णं तुमं पि णवण्हं
मासाणं सुकुमाल दारए पसवसि ।

जे वि य णं देवाणुप्पिए !
तव पुत्ता ते वि य तव
अंतियाओ करयल-संपुडेणं गिण्हइ,

गिण्हित्ता सुलसाए गाहावइणीए
अंतिए साहरइ ।

[संस्कृत छाया]

शुश्रूषया हरिणैगमेषी देवः
आराधितः यावत् अभवत् ।
ततः खलु सः हरिणैगमेषी देवः
सुलसायाः गाथापत्न्याः अनुकंपनार्थम्
सुलसां गाथापत्नीं त्वां च
खलु द्वे ऽपि समऋतुके करोति ।
ततः खलु युवां द्वे ऽपि समकमेव काले
गर्भौ ग्रह्णीथः, समकालमेव
गर्भौ परिवहथः,

सममेव च दारकौ प्रजनयथः
ततः खलु सा सुलसा गाथापत्नी
विनिघातमापन्नान् दारकान् प्रजनयति ।
ततः खलु सः हरिणैगमेषी देवः
सुलसायाः अनुकंपनार्थम्
विनिघातमापन्नान् दारकान्
करतल संपुटेन गृह्णाति,
गृहीत्वा तव अन्तिकं समाहरति ।
तस्मिन् समये च खलु त्वमपि नवानां
मासानां सुकुमारान् दारकान् प्रसवयसि ।

येऽपि च खलु हे देवानुप्रिये !
तव पुत्राः तेऽपि च तव
अन्तिकात् करतलसंपुटेन गृह्णाति,

गृहीत्वा सुलसायाः गाथापत्न्याः
अंतिके समाहरति ।

[हिन्दी शब्दार्थ]

बहुमानपूर्वक शुश्रूषा (सेवा) से
हरिणैगमेषी देव प्रसन्न हो गया।
तब उस हरिणैगमेषी देव ने
सुलसा गाथापत्नी पर अनुकम्पा हेतु
सुलसा गाथापत्नी को और तुझको
दोनों को समकाल में ऋतुयुक्त किया।
तदनन्तर तुम दोनों ने ही समान काल में
गर्भ धारण किया, समान काल में ही
गर्भ की पालना की व
समान काल में ही
बालकों को जन्म दिया था।
तब उस सुलसा गाथापत्नी ने
मरे हुए बालकों को जन्म दिया।
तदनन्तर वह हरिणैगमेषी देव
सुलसा पर अनुकम्पा करने के लिये
उसके मृत बालकों को
दोनों हाथों में ले लेता है,
लेकर तेरे पास ले आता है।
उस समय तुम भी नव
मास का काल पूर्ण होने पर सुकुमार
बालकों को जन्म देती,
और जो भी हे देवानुप्रिये!
तुम्हारे पुत्र होते उनको भी वह तुम्हारे
पास से दोनो हाथों से ग्रहण कर लेता
लेकर सुलसा गाथापत्नी के
पास ले जाता।

[हिन्दी अर्थ]

देव प्रसन्न हो गया। प्रसन्न होने के पश्चात् हरिणैगमेषी देव सुलसा गाथापत्नी पर अनुकम्पा करने हेतु सुलसा गाथापत्नी को तथा तुम्हें—दोनों को समकाल में ही ऋतुमति (रजस्वला) करता और तब तुम दोनों समकाल में ही गर्भ धारण करतीं, समकाल में ही गर्भ का वहन करती और समकाल में ही बालक को जन्म देती।

प्रसवकाल में वह सुलसा गाथापत्नी मरे हुए बालक को जन्म देती।

तब वह हरिणैगमेषी देव सुलसा पर अनुकम्पा करने के लिये उसके मृत बालक को दोनों हाथों में लेता और लेकर तुम्हारे पास आता। इधर उस समय तुम भी नव मास का काल पूर्ण होने पर सुकुमार बालक को जन्म देती।

हे देवानुप्रिये! जो तुम्हारे पुत्र होते उनको भी हरिणैगमेषी देव तुम्हारे पास से अपने दोनों हाथों में ग्रहण करता और उन्हें ग्रहण कर सुलसा गाथापत्नी के पास लाकर रख देता (पहुंचा देता)।

अतः वास्तव में हे देवकी! ये तुम्हारे ही पुत्र हैं, सुलसा गाथा पत्नी के नहीं हैं।

[मूल सूत्र पाठ]	[संस्कृत छाया]
तं तव चेव णं देवइ !	तत् तव चैव खलु देवकि !
एए पुत्ता, णो चेव णं	एते पुत्राः, न चैव खलु
सुलसाए गाहावइणीए।	सुलसायाः गाथापत्न्याः।

सूत्र ६

तए णं सा देवई देवी	ततः खलु सा देवकी देवी
अरहओ अरिट्ठणेमिस्स	अर्हतः अरिष्टनेमिनः
अंतिए एयमट्ठं सोच्चा	अंतिके एतदर्थं श्रुत्वा
णिसम्म हट्ठतुट्ठा जाव	निशम्य हृष्टतुष्टा यावत्
हियया, अरहं अरिट्ठणेमिं	हृदया, अर्हन्तम् अरिष्टनेमिम्
वंदइ णमंसइ। वंदित्ता णमंसित्ता	वन्दते, नमस्यति। वन्दित्वा नमस्यित्वा
जेणेव ते छ अणगारा तेणेव उवागच्छइ,	यत्रैव ते षडनगारा तत्रैव उपागच्छति,
उवागच्छित्ता ते छप्पि अणगारे	उपागत्य तान् षडपि अनगारान्
वंदइ णमंसइ वंदित्ता णमंसित्ता।	वन्दते नमस्यति। वन्दित्वा नमस्यित्वा
आगय-पण्हुया	आगत प्रस्नुता (स्तन्य प्रस्रवणा)
पप्फुयलोयणा कंचुय पडिक्खित्तिया	प्रफुल्ल-लोचना परिक्षिप्तकंचुका
दरियवलयबाहा	दीर्णवलयभुजा (बाहू)
धाराहय कलंब पुप्फगं	धाराहतकदंबपुष्पकं इव
विव समूससिय रोमकूवा	समुच्छ्वसित रोमकूपा
ते छप्पि अणगारे	तान् षडप्यनगारान्
अणिमिसाए दिट्ठीए	अनिमेषया दृष्ट्या
पेहमाणी, पेहमाणी सुचिरं	प्रेक्षमाणा प्रेक्षमाणा सुचिरं
णिरिक्खइ, णिरिक्खित्ता	निरीक्षते, निरीक्ष्य
वंदइ, णमंसइ। वंदित्ता, णमंसित्ता	वन्दते नमस्यति वन्दित्वा, नमस्यित्वा
जेणेव अरहा अरिट्ठणेमि	यत्रैव अर्हन् अरिष्टनेमिः

[हिन्दी शब्दार्थ]

अत तेरे ही हैं हे देवकि !
ये पुत्र। नहीं हैं उस
सुलसा गाथापत्नी के

सूत्र ९

तब वह देवकी देवी
अरिहृत अरिष्टनेमिनाथ के
पास यह बात सुनकर
मनन कर यावत् हृष्टतुष्ट
हृदय वाली ने अरिहृत अरिष्टनेमि
को वन्दना की, नमस्कार किया।
वन्दना नमस्कार करके
जहां वे छ अनगार थे वहीं आई,
आकर उन छ ही मुनिवरों को
वन्दन-नमस्कार किया। नमस्कार करके
स्तनों से दूध झराती हुई
प्रफुल्लित नयन वाली कचुकी
के बन्धन जिसके टूट गये हैं,
हृर्षातिरेक से जिसकी बाहुओं के कडे
चटक गये हैं,
वर्षाकी धारासे सिचत कदवपुष्प की तरह
जिसके रोमकूप उच्छ्वसित हो रहे हैं
ऐसी वह उन छहों अनगारों को
अपलक दृष्टि से देखती हुई—
देखती हुई बहुत समय तक
देखती रही, देखकर
वन्दना नमस्कार करती है।
वन्दना नमस्कार करके
जहां भगवान अरिष्टनेमि थे,

[हिन्दी अर्थ]

इसके अनन्तर उस देवकी देवी ने अरिहृत अरिष्टनेमि के मुखारविन्द से इस प्रकार की यह रहस्यपूर्ण बात सुनकर तथा हृदयगम कर हृष्ट-तुष्ट यावत् प्रफुल्ल हृदया होकर अरिहृत अरिष्टनेमि भगवान् को वदन-नमस्कार किया और वदन-नमस्कार करके वे छहो जहा मुनि विराजमान थे वहा आई। आकर वह उन छहों मुनियों को वदन नमस्कार करती है।

उन अनगारों को देखकर पुत्रप्रेम के कारण उसके स्तनो से दूध झरने लगा। हर्ष के कारण उसकी आंखों में आसू भर आये एव अत्यन्त हर्ष के कारण शरीर फूलने से उसकी कचुकी की कसें टूट गई और भुजाओ के आभूषण तथा हाथ की चूडियां तग हो गई। जिस प्रकार वर्षा की धारा के पडने से कदम्ब पुष्प एक साथ विकसित हो जाते हैं उसी प्रकार उसके शरीर के सभी रोम पुलकित हो गये। वह उन छहों मुनियों को निर्निमेष दृष्टि से देखती हुई चिरकाल तक निरखती ही रही।

तत्पश्चात् उसने छहों मुनियों को वन्दन-नमस्कार किया। वन्दन नमस्कार करके वह जहा भगवान् अरिष्टनेमि विराजमान हैं, वहां आई और आकर अर्हत् अरिष्टनेमि को तीन बार दक्षिण तरफ से प्रदक्षिणा करके वन्दन नमस्कार करती है

[मूल सूत्र पाठ]	[संस्कृत छाया]
तेणेव उवागच्छइ,	तत्रैव उपागच्छति,
उवागच्छित्ता अरहं अरिट्ठणेमिं	उपागत्य अर्हन्तम् अरिष्टनेमिनम्
तिक्खुत्तो आयाहिणं	त्रिः कृत्वा आदक्षिण
पयाहिणं करेइ,	प्रदक्षिणां करोति,
करित्ता वंदइ णमंसइ,	कृत्वा वन्दते नमस्यति
वंदित्ता णमंसित्ता	वन्दित्वा नमस्यित्वा
तमेव धम्मियं जाणप्पवरं	तमेव धार्मिकम् यान प्रवरम्
दुरुहइ, दुरुहित्ता	दूरोहति, दूरुह्य
जेणेव वारवई णयरी	यत्रैव द्वारावती नगरी
तेणेव उवागच्छइ,	तत्रैव उपागच्छति,
उवागच्छित्ता वारवइं	उपागत्य द्वारावतीं
णयरीं अणुप्पविसइ ।	नगरीम् अनुप्रविशति ।
अणुप्पविसित्ता जेणेव	अनुप्रविश्य यत्रैव
सए गिहे, जेणेव वाहिरिया	स्वकं गृहम् यत्रैव वाह्या
उवट्ठाणसाला तेणेव	उपस्थानशाला तत्रैव
उवागच्छइ, उवागच्छित्ता	उपागच्छति, उपागत्य
धम्मियाओ जाणप्पवराओ	धार्मिकात् यान प्रवरात्
पच्चोरुहइ, पच्चोरुहित्ता	प्रत्यवरोहति, प्रत्यवरुह्य
जेणेव सए वासघरे,	यत्रैव स्वकं वासगृहम्,
जेणेव सए सयणिज्जे	यत्रैव स्वकं शयनीयम्
तेणेव उवागच्छइ,	तत्रैव उपागच्छति,
उवागच्छित्ता, सयंसि	उपागत्य, स्वके
सयणिज्जंसि णिसीयइ ।	शयनीये निषीदति ।

[हिन्दी शब्दार्थ]

वहाँ पर आ जाती हैं,
आकर भगवान नेमिनाथ को
तीन बार दक्षिण की तरफ से
प्रदक्षिणा करती है, प्रदक्षिणा
करके वन्दना नमस्कार करती है।
वन्दना नमस्कार करके
उसी धार्मिक श्रेष्ठ रथ पर
आरूढ होती है, आरूढ होकर
जहा पर द्वारावती नगरी है
वहा पर आती है,
वहां आकर द्वारावती
नगरी में प्रवेश करती है।
द्वारावती नगरी में प्रवेश करके जहाँ
पर अपना प्रासाद और बाहरी
उपस्थान शाला (बैठक) है वहा
पर आती है, आकर उस
धार्मिक श्रेष्ठ रथ पर से
उतरती है, उतरकर
जहां स्वय का निवास गृह है,
जहा स्वय का शयन स्थान है
वहां पर ही आती है,
वहां आकर अपनी
शय्या पर बैठती है।

[हिन्दी अर्थ]

वदन-नमस्कार करके उसी धार्मिक श्रेष्ठ रथ पर आरूढ होती है। रथारूढ हो, जहां द्वारिका नगरी है, वहा आती है और वहा आकर द्वारिका नगरी में प्रविष्ट होती है।

देवकी द्वारिका नगरी में प्रवेश कर जहा अपने प्रासाद के बाहर की उपस्थानशाला अर्थात् बैठक है वहा आती है। वहा आकर धार्मिक रथ से नीचे उतरती है। नीचे उतर कर जहा अपना वासगृह है, जहा अपनी शय्या है, वहा आती है। वहा आकर अपनी शय्या पर बैठ जाती है।

उस समय उस देवकी देवी को इस प्रकार का विचार, चिन्तन और अभिलाषापूर्ण मानसिक सकल्प उत्पन्न हुआ कि अहो! मैंने पूर्वोक्त समान आकृति वाले यावत् नलकूबर के समान सात पुत्रों को जन्म दिया पर मैंने एक की भी बाल्यक्रीडा का आनन्दानुभव नहीं किया।

[मूल सूत्र पाठ]	[संस्कृत छाया]

सूत्र १०

तएणं तीसे देवईए देवीए	ततः खलु तस्याः देवक्याः देव्याः
अयं अज्झत्थिए चिंतिए	अयमध्यवसायः चिंतितः
पत्थिए मणोगए संकप्पे	प्रार्थितः मनोगतः संकल्पः
समुप्पण्णे, एवं खलु	समुत्पन्नः, एवं खलु
अहं सरिसए जाव णल–	अहं सदृशकान् यावत् नल
कुव्वर–समाणे सत्तपुत्ते पयाया,	कूवर समानान् सप्तपुत्रान् प्रजाता
णो चेव णं मए एगस्स	न चैव खलु मया एकस्य
वि बालत्तणए समणुभूए ।	अपि बालत्वं समनुभूतम् ।
एस वि य णं कण्हे	एषः अपि च खलु कृष्णः
वासुदेवे छण्हं मासाणं	वासुदेवः षण्णां मासानाम्
ममं अंतियं पायवंदए	मम अन्तिके पादवन्दनाय
हव्वमागच्छइ ।	शीघ्रमागच्छति ।
तं धण्णाओ णं ताओ अम्मयाओ	तत् धन्याः खलु ताः अम्बाः
जासिं मण्णे णियगकुच्छि	यासां मन्ये निजकुक्षि
संभूयाइं थणदुद्धलुद्धयाइं	संभूताः स्तनदुग्धलुब्धकाः
महुर-समुल्लावयाइं मम्मण	मधुरसमुल्लापकाः मन्मन
पजंपियाइं, थणमूल	प्रजल्पकाः स्तनमूल
कक्खदेसभागं अभिसरमाणाइं,	कक्षदेशभागम् अभिसरन्ति,
मुद्धयाइं	मुग्धकान्
पुणो य कोमलकमलोवमेहिं	पुनश्च कोमलकमलोपमैः
हत्थेहिं गिण्हिऊण उच्छंगे णिवेसयाइं,	हस्तैः गृहीत्वा उत्संगे निवेशयन्ति,
देंति समुल्लावए	ददति समुल्लापकान्
सुमहुरे पुणो पुणो	सुमधुरान् पुनः पुनः
मंजुलप्पभणिए ।	मंजुल प्रभणितान् ।
अहं णं अधण्णा अपुण्णा	अहं खलु अधन्या, अपुण्या

[हिन्दी शब्दार्थ] [हिन्दी अर्थ]

सूत्र १०

तदनन्तर उस देवकी देवी को इस प्रकार का अध्यवसाय, चिन्ता और अभिलाषा युक्त मानसिक सकल्प उत्पन्न हुआ कि अहो ! निश्चय ही इस प्रकार मैंने समान आकृति वाले नल कूबर के समान सात पुत्रों को जन्म दिया परन्तु मैंने एक की भी बालक्रीडा का अनुभव नहीं किया और यह कृष्ण वासुदेव भी छ छ महीनों के बाद मेरे पास चरण वन्दना के लिए शीघ्रता से आता है । इसलिये वे माताए धन्य हैं, जिनकी अपनी कुक्षि से उत्पन्न, स्तनपान के लोभी बालक मधुर आलाप करने वाले मन्मन बोलते हुए, स्तन मूल कक्ष भाग में अभिसरण करते हैं, (ऐसे उन) मुग्ध (भोले) बालकों को फिर कोमल कमल के समान हाथों से पकडकर गोद में बैठा लेती हैं और उन बालकों के आलापकों का बार-बार सुमधुर और मजुल उत्तर देती हैं। मैं निश्चय ही अधन्य हूँ, पुण्यहीन हूँ

फिर यह कृष्ण वासुदेव भी छ-छ महीनों के पश्चात् मेरे पास चरण वन्दन के लिये आता है और वह भी भागता-दौडता ।

तो ऐसी स्थिति में वस्तुत वे माताए धन्य हैं जिनकी अपनी कुक्षि से उत्पन्न हुए, स्तनपान के लोभी बालक, मधुर आलाप करते हुए, तुतलाती बोली से मन्मन बोलते हुए जिनके स्तनमूलकक्षा भाग में अभिसरण करते है, एव फिर उन मुग्ध बालकों को जो माताए कमल के समान अपने कोमल हाथो द्वारा पकड कर गोद में बिठाती हैं और अपने-अपने बालकों से मजुल-मधुर-शब्दो मे बार-बार बातें करती हैं।

मैं निश्चितरूपेण अधन्य और पुण्यहीन हू क्योंकि मैंने इनमे से किसी एक पुत्र की भी बाल क्रीड़ा नहीं देखी ।

इस प्रकार देवकी खिन्न मन से यावत् आतध्यान करने लगी ।

[मूल सूत्र पाठ]	[संस्कृत छाया]
एत्तो एगयरमवि ण पत्ता	एषु (इतः) एकतरमपि न प्राप्ता
(एवं) ओहयमण संकप्पा	एवं अपहतमनस्संकल्पा
जाव झियायइ।	यावत् ध्यायति।

सूत्र ११

तएणं से कण्हे वासुदेवे ण्हाए	ततः खलु सः कृष्णवासुदेवः
जाव विभूसिए देवईए	स्नातः यावत् विभूषितः देवक्याः
देवीए पायवंदए हव्वमागच्छइ।	देव्याः पादवंदनार्थं शीघ्रमागच्छति।
तएणं से कण्हे वासुदेवे	ततः खलु सः कृष्ण वासुदेव
देवईं देवीं पासइ,	देवकीं देवीं पश्यति,
पासित्ता देवईए देवीए पायग्गहणं करेइ,	दृष्ट्वा देवक्याःदेव्याः पादग्रहणं करोति,
करित्ता देवईं देविं एवं वयासी–	(चरणवंदनं)कृत्वा देवकीं देवीं एवमवदत्
अन्नया णं अम्मो ! तुब्भे	अन्यदा खलु अम्ब ! त्वं
ममं पासित्ता हट्ठजाव,	मां दृष्ट्वा हृष्टा यावत्
भवह, किं णो अम्मो !	भवसि, किं खलु अम्ब !
अज्ज तुब्भे ओहय जाव झियायह।	अद्य त्वं अवहता यावत् ध्यायसि।
तएणं सा देवई देवी	ततः खलु सा देवकी देवी
कण्हं वासुदेवं एवं वयासी–	कृष्णं वासुदेवं एवम् अवदत्–
एवं खलु अहं पुत्ता !	एवं खलु अहं पुत्र !
सरिसए जाव समाणे	सदृशकान् यावत् समानान्
सत्तपुत्ते पयाया।	सप्त पुत्रान् प्रजाता।
णो चेव णं मए एगस्स	न चैव खलु मया एकस्य
वि बालत्तणे अणुभूए।	अपि बालत्वम् अनुभूतम्।
तुमं पि य णं पुत्ता ! ममं	हे पुत्र ! त्वमपि च खलु

[हिन्दी शब्दार्थ]

इनमें से मैंने एक भी प्राप्त नहीं किया (इस प्रकार) खिन्नमन (देवकी) यावत् आर्त्तध्यान करने लगी।

[हिन्दी भाव]

वह इस प्रकार का चिन्तन कर ही रही थी कि

सूत्र ११

तदनन्तर वह कृष्ण वासुदेव स्नान किये हुए यावत् विभूषित हुए महारानी देवकी देवी के चरण वन्दनार्थ शीघ्रता से आये तब उस कृष्ण वासुदेव ने देवकी देवी के दर्शन किये। दर्शन करके देवकी देवी की चरण वन्दना की। वन्दना करके देवकी देवी को ऐसे बोले—हे माताजी! पहले तो आप मुझको देखकर प्रसन्न होती थी परन्तु हे माता! आज आप चिन्ताग्रस्त की तरह यावत् विचार मग्न दिखती हो। तदनन्तर वह देवकी देवी कृष्ण वासुदेव को इस प्रकार बोली—इस प्रकार हे पुत्र! मैंने एक सी (समान) आकृति वाले सात पुत्रों को जन्म दिया। परन्तु मैंने एक के भी बाल्यपन का अनुभव नहीं किया। हे पुत्र! तुम भी मेरे पास

उसी समय वहां भी कृष्ण वासुदेव स्नान कर यावत् वस्त्रालंकारों से विभूषित होकर देवकी माता के चरण वंदन के लिये शीघ्रतापूर्वक आये। तब वह कृष्ण वासुदेव देवकी माता के दर्शन करते हैं दर्शन कर देवकी के चरणों में वन्दन करते हैं।

उन्होंने अपनी माता को उदास और चिन्तित देखा। वो चरण वन्दन कर देवकी देवी को इस प्रकार पूछने लगे—"हे माता! पहले तो मैं जब जब आपके चरण वन्दन के लिये आता था, तब-तब आप मुझे देखते ही हृष्ट तुष्ट यावत् आनंदित [illegible] जाती थी पर मां! आज आप उदास, चिंतित यावत् आर्त्तध्यान में निमग्न सी क्या दिख रही हो? हे माता! इसका क्या कारण है? कृपा करके बतावें।"

कृष्ण द्वारा इस प्रकार का प्रश्न किये जाने पर वह देवकी देवी कृष्ण वासुदेव को इस प्रकार कहने लगी—"हे पुत्र! वस्तुतः बात यह है कि मैंने समान आकार यावत् समान रूप वाले सात पुत्रों को जन्म दिया। पर मैंने उनमें से किसी एक के भी बाल्यकाल अथवा बाल-लीला का अनुभव नहीं किया। पुत्र! तुम भी छः छः महीनों के अन्तर में

[मूल सूत्र पाठ]	[संस्कृत छाया]
छण्हं-छण्हं मासाणं अंतियं	षण्णां षण्णां मासानां मम अन्तिके
पाय वंदए हव्वमागच्छसि,	पादवन्दनार्थं शीघ्रमागच्छसि,
तं धण्णाओ णं ताओ	तत् धन्याः खलु ताः
अम्मयाओ जाव झियामि ।	अम्बाः यावत् ध्यायामि ।

सूत्र १२

तएणं से कण्हे वासुदेवे	ततः खलु सः कृष्णः वासुदेवः
देवई देविं एवं वयासी–	देवकीं देवीम् एवम् अवदत्–
मा णं तुब्भे अम्मो !	मा खलु त्वमम्ब !
ओहय जाव झियायह ।	अवहता यावत् ध्याय ।
अहण्णं तहा वत्तिस्सामि	अहम् खलु तथा वर्तिष्ये
जहा णं ममं सहोयरे	यथा खलु मम सहोदरः
कणीयसे भाउए भविस्सइ	कनीयान् भ्राता भविष्यति,
त्ति कट्टु देवई देविं ताहिं	इति कृत्वा देवकीं देवीं ताभिः
इट्ठाहिं कंताहिं जाव	इष्टाभिः कान्ताभिः यावत्
वग्गूहिं समासासेइ,	वाग्भिः समाश्वासयति,
समासासित्ता तओ पडिणिक्खमइ	समाश्वास्य ततः प्रतिनिष्क्राम्यति
पडिणिक्खमित्ता जेणेव	प्रतिनिष्क्रम्य यत्रैव
पोसहसाला तेणेव उवागच्छइ	पौषधशाला तत्रैव उपागच्छति
उवागच्छित्ता जहा अभओ,	उपागत्य यथा अभयः,[19]
णवरं हरिणेगमेसिस्स अट्ठम	विशेषतः हरिणैगमेषिणः अष्टम
भत्तं पगिण्हइ,	भक्तं प्रगृह्णाति
जाव अंजलिं कट्टु एवं वयासी—	यावत् अंजलिं कृत्वा एवम् अवादीत्—
इच्छामि णं देवाणुप्पिया!	इच्छामि खलु देवानुप्रिय !
सहोयरं कणीयसं भाउयं विदिण्णं ।	सहोदरं कनीयांसं भ्रातरं वितीर्णम् ।

[हिन्दी पद्यानुवाद]

छह-छह महीनों के बाद चरण
वन्दन के लिये शीघ्रता से आते हों,
इसलिये वे माताएं धन्य हैं
जिनका यावत् आर्तध्यान करती हूं।

सूत्र १२

तदनन्तर वह कृष्ण वासुदेव
देवकी देवी को इस प्रकार बोले—
हे माता! तुम इस प्रकार
उदास और चिन्तित मत होवो।
मैं ऐसा काम करूंगा
जिससे मेरे सहोदर
छोटा भाई होगा,
ऐसा करके श्री कृष्ण ने देवकी
देवी को उन इष्ट व कान्त यावत्
वचनों से आश्वस्त किया,
आश्वासन देकर वहां से बाहर निकले,
वहां से निकलकर जहां पर
पौषधशाला थी वहां आये।
वहां आकर अभय कुमार की तरह
विशेष रूप से हरिणैगमेषी का अष्टम
भक्त तप (तीन उपवास) ग्रहण किया,
यावत् दोनों हाथ जोड़कर इस प्रकार कहा
हे देवानुप्रिय! मेरे छोटा
सहोदर भाई हो यह मैं चाहता हूं

[हिन्दी अर्थ]

मेरे पास चरण वन्दन के लिये आते हों इसलिये मैं ऐसा सोच रही हूं कि वे माताएं धन्य हैं, पुण्यशालिनी हैं जो अपनी सन्तान को स्तनपान कराती हैं, यावत् उनके साथ मधुर आलाप संलाप करती हैं, और उनकी बाल क्रीडा के आनन्द का अनुभव करती हैं। मैं अधन्य हूं अपुण्य हूं। यही सब सोचती हुई मैं उदासीन होकर इस प्रकार का आर्तध्यान कर रही हूं।"

माता की यह बात सुनकर श्री कृष्ण वासुदेव देवकी महारानी से इस प्रकार बोले- 'हे माताजी! आप उदास अथवा चिंतित होकर यह आर्त ध्यान मत करो।

मैं ऐसा प्रयत्न करूंगा कि जिससे मेरे एक सहोदर छोटा भाई उत्पन्न हो।"

इस प्रकार कह कर श्री कृष्ण ने देवकी माता को प्रिय अभिलषित मधुर तथा इष्ट यावत् वाक्य वचनों से धैर्य बंधाया आश्वस्त किया।

इस प्रकार अपनी माता को आश्वस्त कर श्री कृष्ण अपनी माता के प्रासाद से निकले। निकलकर जहां पौषधशाला थी वहां आये।

पौषधशाला में आकर जिस प्रकार अभयकुमार[11] ने अष्टम भक्त तप (तेला) स्वीकार करके अपने मित्र-देवता की आराधना की थी उसी प्रकार श्री कृष्ण वासुदेव भी अभय कुमार की तरह अष्टम भक्त तप यानि तेला करके हरिणैगमेषी देवता की आराधना करने लगे।

आराधना से आकृष्ट होकर हरिणैगमेषी देव श्री कृष्ण के सम्मुख उपस्थित हुआ

[मूल सूत्र पाठ]	[संस्कृत छाया]

सूत्र १३

तएणं से हरिणेगमेसी	ततः खलु सः हरिणैगमेषी
देवे कण्हं वासुदेवं एवं वयासी–	देवः कृष्णं वासुदेवम् एवम् अवदत्
होहिइ णं देवाणुप्पिया !	भविष्यति खलु देवानुप्रिय !
तव देवलोयचुए सहोयरे	तव देवलोकच्युतः सहोदरः
कणीयसे भाउए से णं	कनीयान् भ्राता सः खलु
उम्मुक्क बालभावे जाव	उन्मुक्तबालभावः यावत्
जोव्वणगमणुप्पत्ते अरहओ	यौवनमनुप्राप्तः अर्हतः
अरिट्ठणेमिस्स अन्तियं	अरिष्टनेमिनः अन्तिकम्
मुण्डे जाव पव्वइस्सइ ।	मुण्डो यावत् प्रव्रजिष्यति ।
कण्हं वासुदेवं दोच्चं पि	कृष्णं वासुदेवं द्विवारं
तच्चं पि एवं वयइ ।	त्रिवारमपि एवं वदति ।
वइत्ता जामेव दिसं पाउब्भूए	वदित्वा यस्याः एव दिशः
तामेव दिसं पडिगए ।	प्रादुर्भूतस्तामेव दिशं प्रतिगतः ।

सूत्र १४

तएणं से कण्हे वासुदेवे	ततः खलु सः कृष्णः वासुदेवः
पोसहसालाओ पडिणिक्खमइ	पौषधशालातः प्रतिनिष्क्राम्यति
पडिणिक्खमित्ता जेणेव	प्रतिनिष्क्रम्य यत्रैव
देवई देवी तेणेव उवागच्छइ	देवकी देवी तत्रैव उपागच्छति
उवागच्छित्ता देवईए देवीए	उपागत्य देवक्याः देव्याः
पायग्गहणं करेइ,	पादग्रहणं करोति,
करित्ता एवं वयासी—	कृत्वा एवम् अवदत्–
होहिइ णं अम्मो ! ममं	भविष्यति खलु अम्ब ! मम
सहोयरे कणीयसे भाउत्ति	सहोदरः कनीयान् भ्राता,
कट्टु देवइं देविं इट्ठाहिं	इति कृत्वा देवकीं देवीं इष्टाभिः

[हिन्दी शब्दार्थ]　　　　[हिन्दी अर्थ]

सूत्र १३

तब वह हरिणैगमेषी
देव कृष्ण वासुदेव को इस प्रकार बोला
हे देवानुप्रिय ! होगा
देवलोक से च्युत हुआ तेरे
सहोदर छोटा भाई, वह
बाल्यकाल बीतने पर यावत्
युवावस्था प्राप्त करने पर
भगवान श्री नेमिनाथ के पास
मुंडित होकर दीक्षा ग्रहण करेगा ।
कृष्ण वासुदेव को दुबारा
तिबारा भी इस प्रकार कहता है ।
कहकर जिस दिशा से वह प्रकट
हुआ था उसी दिशा को चला गया ।

और श्री कृष्ण वासुदेव से बोला—"हे देवानुप्रिय ! आपने मुझे क्यों याद किया है ? मैं उपस्थित हूँ । कहिये आपका क्या मनोरथ है ? मैं आपका क्या शुभ कर सकता हूँ ?"

तब श्री कृष्ण वासुदेव ने दोनों हाथ जोड़कर उस देव से ऐसा कहा—"हे देवानुप्रिय ! मेरे एक सहोदर लघुभ्राता का जन्म हो, यह मेरी इच्छा है ।"

तदनन्तर श्री कृष्ण वासुदेव द्वारा तेले की तपस्या द्वारा की गई अपनी आराधना से प्रसन्न होकर हरिणैगमेषी देव श्री कृष्ण वासुदेव से इस प्रकार बोला—"हे देवानुप्रिय ! देवलोक का एक देव वहां की आयुष्य पूर्ण होने पर देवलोक से च्युत होकर आपके सहोदर छोटे भाई के रूप में जन्म लेगा और इस तरह आपका मनोरथ अवश्य पूर्ण होगा । पर वह बाल्यकाल बीतने पर यावत् युवा-

सूत्र १४

इसके बाद श्री कृष्ण वासुदेव
पौषधशाला से निकले,
निकलकर जहाँ पर
देवकी देवी थी वहाँ आये,
आकर देवकी देवी की
चरण वन्दना की ।
वन्दना करके इस प्रकार कहा—
हे माता ! मेरे सहोदर
छोटा भाई अवश्य होगा इस प्रकार
देवकी देवी को इष्ट वचनों से

वस्था प्राप्त होने पर भगवान् श्री अरिष्टनेमि के पास मुण्डित होकर श्रमण दीक्षा ग्रहण करेगा ।"

श्री कृष्ण वासुदेव को उस देव ने दूसरी बार, तीसरी बार भी यही कहा और यह कहने के पश्चात् जिस दिशा की ओर से आया था उसी दिशा की ओर लौट गया ।

इसके पश्चात् श्री कृष्ण-वासुदेव पौषधशाला से निकले, वहां से निकलकर देवकी माता के पास आये और आकर अपनी माता का चरण वंदन किया ।

चरण वंदन करके वे माता से इस प्रकार बोले—"माताजी ! मेरे एक सहोदर छोटा भाई होगा । अब आप चिन्ता न करें । आपकी इच्छा पूरी होगी ।"

[मूल सूत्र पाठ]	[संस्कृत छाया]
जाव आसासेइ,	(वाग्भिः) यावत् आश्वासयति,
आसासित्ता जामेव दिसं	आश्वास्य यस्याः दिशः
पाउब्भूए तामेव दिसं पडिगए।	प्रादुर्भूतः तामेव दिशं प्रतिगतः।
तएणं सा देवई देवी	ततः खलु सा देवकी देवी
अण्णया कयाइं तंसि तारिसगंसि	अन्यदा कदाचित् तस्मिन् तादृशके
जाव सीहं सुमिणे	यावत् सिंहं स्वप्ने
पासित्ता पडिबुद्धा,	दृष्ट्वा प्रतिबुद्धा,
जाव हट्ठ तुट्ठ हियया,	यावत् हृष्ट तुष्ट हृदया,
तं गब्भं सुहं सुहेणं परिवहइ।	तं गर्भम् सुखं सुखेन परिवहति

सूत्र १५

तएणं सा देवई देवी	ततः खलु सा देवकी देवी
नवण्हं मासाणं जासुमणा	नवानां मासानां जपाकुसुम
रत्तबंधु जीवय लक्खरस	रक्तबंधु जीव लाक्षारस
सरसपारिजालकतरुणदिवायर	सरसपारिजातकतरुणदिवाकर
समप्पभं, सव्वनयणकंतं	समप्रभम्, सर्वनयनकान्तम्
सुकुमालं जाव सुरूवं	सुकुमारं यावत् सुरूपम्
गयतालुयसमाणं दारयं पयाया।	गजतालुसमानं दारकम् प्रजाता।
जम्मणं जहा मेहकुमारे।[20]	जन्म यथा मेघकुमारः।[२०]
जाव जम्हाणं अम्हं	यावत् यस्मात् (कारणात् जातः) अस्माकं
इमे दारए।	अयम् दारकः।
गयतालुसमाणे तं होउणं	गजतालुसमानः तद्भवतु
अम्हं एयस्स दारयस्स	आवयोः एतस्य दारकस्य
नामधेज्जे गय-सुकुमाले,	नामधेयम् गजसुकुमालः
तएणं तस्स दारगस्स	ततः खलु तस्य दारकस्य

[हिन्दी शब्दार्थ]

यावत् आश्वस्त करता है
आश्वस्त करके जिस दिशा से
प्रकट हुए थे उसी दिशा में
वापस चले गये।
तदनन्तर वह देवकी देवी
अन्यदा किसी दिन पुण्यवान के
योग्य सुख शय्या में सोते हुए
सिंह को स्वप्न में देखकर जग गई,
यावत् हृष्टतुष्ट हृदय होकर
सुखपूर्वक उस गर्भ को वहन करने लगी।

[हिन्दी अर्थ]

ऐसा कह करके उन्होंने देवकी माता को मधुर एवं इष्ट वचनों से आश्वस्त किया और आश्वस्त करके जिधर से आये थे उधर ही लौट गये।

कालान्तर में उस देवकी माता ने, जब वह पुण्यशाली के योग्य सुख-सेज पर सोई हुई थी, तब एक दिन सिंह का स्वप्न देखा।

स्वप्न देखकर वह जागृत हुई। पति से स्वप्न का वृत्तान्त कहा। अपने मनोरथ की पूर्णता को निश्चित समझकर यावत् हर्षित एवं हृष्ट तुष्ट हृदय होती हुई वह सुखपूर्वक अपने उस गर्भ का पालन-पोषण करने लगी।

सूत्र १५

तदनन्तर उस देवकी देवी ने
नवमास के बाद जपा कुसुम
रक्तबन्धु जीवक लाक्षारस
सरसपारिजात तथा तरुण सूर्य
के समान कान्ति वाले, सभी के
नयनों को अच्छा लगने वाले, यावत् सुरूप
गजतालु के समान सुकोमल पुत्र
को जन्म दिया।
उसका जन्म मेघकुमार की तरह समझें।
माता पिता ने सोचा कि यह हमारा
जन्मित बालक गजतालु के
समान सुकोमल है। इस कारण
हमारे इस पुत्र का नाम
गजसुकुमाल होवे।
इसके बाद उस बालक के

तत्पश्चात् उस देवकी देवी ने नवमास का गर्भकाल पूर्ण होने पर जपा-कुसुम, बन्धुक-पुष्प जीवक लाक्षारस श्रेष्ठ पारिजात एवं उदीयमान सूर्य के समान कान्ति वाले, सर्वजन-नयनाभिराम, सुकुमाल यावत् गज-तालु के समान रूपवान् पुत्र को जन्म दिया। जन्म का वर्णन मेघकुमार के समान समझें।

यावत् नामकरण के समय माता पिता ने सोचा—"क्योंकि हमारा यह बालक गज-तालु के समान सुकोमल एवं सुन्दर है, इसलिये हमारे इस बालक का नाम गज सुकुमाल हो।" इस प्रकार विचार कर उस बालक के माता पिता ने उसका 'गज-सुकुमाल'—यह नाम रखा।

[मूल सूत्र पाठ]	[संस्कृत छाया]
अम्मापियरो नामं करेइ	अम्बापितरौ नाम कुरुतः
गयसुकुमाले त्ति,	गजसुकुमालः इति,
सेसं जहा मेहे जाव	शेषं यथा मेघकुमारः यावत्
अलं भोगसमत्थे	भोगसमर्थश्चापि
जाए यावि होत्था।	अभवत्।
तत्थणं वारवईए णयरीए—	तत्र खलु द्वारावत्यां नगर्यां
सोमिले नामं माहणे	सोमिलो नाम ब्राह्मणः
परिवसइ, अड्ढे	परिवसति, आढ्यः (समृद्धः)
रिउव्वेय जाव सुपरिनिट्ठिए	ऋग्वेदं यावत् सुपरिनिष्ठितः,
यावि होत्था।	चाप्यभवत्।
तस्स सोमिलस्स माहणस्स	तस्य सोमिलस्य ब्राह्मणस्य
सोमसिरी णामं माहणी	सोमश्रीर्नाम्नी ब्राह्मणी
होत्था। सुकुमाला।	अभवत्। सुकोमला।
तस्स णं सोमिलस्स	तस्य खलु सोमिलस्य
माहणस्स धूया सोमसिरीए	ब्राह्मणस्य दुहिता सोमश्रियः
माहणीए अत्तया सोमा	ब्राह्मण्याः आत्मजा सोमा
णामं दारिया होत्था,	नाम्नी दारिका अभवत्,
सुकुमाला जाव सुरूवा।	सुकुमारा यावत् सुरूपा।
रूवेणं जाव लावण्णेणं	रूपेण यावत् लावण्येन
उक्किट्ठा, उक्किट्ठसरीरा यावि होत्था।	उत्कृष्टा, उत्कृष्टशरीरा चापि अभवत्।

सूत्र १६

तएणं सा सोमा दारिया	ततः खलु सा सोमा दारिका
अण्णया कयाइं ण्हाया	अन्यदा कदाचित् स्नाता
जाव विभूसिया बहूहिं	यावत् विभूषिता बहुभिः
खुज्जाहिं जाव परिक्खित्ता,	कुब्जाभिः यावत् परिक्षिप्ता,

[हिन्दी अन्वय]

माता-पिता ने उसका नाम करण
गजसुकुमाल किया,
शेष मेघकुमार के समान
समझना तदनुसार गजसुकुमाल
भी भोग भोगने में समर्थ हो गया।

उस द्वारावति नगरी में
सोमिल नामक ब्राह्मण रहता था
जो कि धनाढ्य था तथा ऋग्वेद
आदि शास्त्रों में पूर्ण
निष्णात था।
उस सोमिल ब्राह्मण के
सोमश्री नाम वाली ब्राह्मणी
थी। वह बहुत कोमलांगी थी।
उस सोमिल नामक
ब्राह्मण की पुत्री तथा सोमश्री
ब्राह्मणी की आत्मजा सोमा
नामकी लड़की (कन्या) थी,
वह सुकुमारी एवं सुरूपा थी।
रूप और लावण्य-कांति से
उत्कृष्ट थी और उत्कृष्ट शरीर वाली थी।

[हिन्दी अर्थ]

शेष वर्णन मेघकुमार के समान[१०] समझना। क्रमशः गजसुकुमाल भोग समर्थ हो गया।

उस द्वारिका नगरी में सोमिल नामक एक ब्राह्मण रहता था जो समृद्ध और ऋग्वेद, यजुर्वेद सामवेद, अथर्ववेद-इन चारों वेदों का सांगोपांग पूर्ण ज्ञाता भी था। उस सोमिल ब्राह्मण के सोमश्री नाम की ब्राह्मणी (पत्नी) थी। सोमश्री सुकुमार एवं रूपलावण्य सम्पन्न थी।

उस सोमिल ब्राह्मण की पुत्री और सोमश्री ब्राह्मणी की आत्मजा सोमा नाम की कन्या थी जो सुकुमाल यावत् बड़ी रूपवती थी। उसका रूप, लावण्य एवं देहयष्टि का गठन भी उत्कृष्ट था।

सूत्र १६

तदनन्तर वह सोमा कन्या
किसी दिन स्नान की हुई
यावत् अलंकारादि से विभूषित
अनेक कुब्जादि दासियों से घिरी हुई

तब वह सोमा कन्या अन्यदा किसी दिन स्नान कर यावत वस्त्रालंकारों से विभूषित हो, बहुत सी कुब्जा आदि दासियों के परिवार से घिरी हुई अपने घर से बाहर आई। घर से बाहर निकल कर जहाँ

[मूल सूत्र पाठ]	[संस्कृत छाया]
सयाओ गिहाओ पडिणिक्खमइ,	स्वकात् गृहात् परिनिष्क्रामति,
पडिणिक्खमित्ता	परिनिष्क्रम्य
जेणेव रायमग्गे तेणेव	यत्रैव राजमार्गः तत्रैव
उवागच्छइ, उवागच्छित्ता	उपागच्छति, उपागत्य
रायमग्गंसि कणग-तिंदूसएणं	राजमार्गे कनक गेन्दुकेन
कीलमाणी, कीलमाणी चिट्ठइ ।	क्रीडमाना, क्रीडमाना तिष्ठति ।
तेणं कालेणं तेणं समयेणं	तस्मिन् काले तस्मिन् समये
अरहा अरिट्ठणेमी समोसढे,	अर्हन् अरिष्टनेमि समवसृतः,
परिसा णिग्गया ।	परिषद् निर्गता ।
तएणं से कण्हे वासुदेवे	ततः खलु सः कृष्णः वासुदेवः
इमीसे कहाए लद्धट्ठे समाणे,	अस्याः कथायाः लब्धार्थः सन्
ण्हाए जाव विभूसिए	स्नातः यावत् विभूषितः
गयसुकुमालेणं कुमारेणं	गजसुकुमालेन कुमारेन
सद्धिं हत्थिखंधवरगए	सार्द्धं हस्तिस्कन्धवरगतः
सकोरंटमल्लदामेणं छत्तेणं	सकोरण्टमाल्यदाम्ना छत्रेण
धरिज्जमाणेणं सेयवरचामराहिं	ध्रियमाणेन श्वेतवरचामरैः
उद्धुव्वमाणीहिं उद्धुव्वमाणीहिं	उद्धूयमानैः उद्धूयमानैः
बारवईए णयरीए मज्झं मज्झेणं	द्वारावत्याः नगर्याः मध्यंमध्येन
अरहओ अरिट्ठणेमिस्स	अर्हतः अरिष्टनेमिनः
पायवंदए णिगच्छमाणे	पादवंदनार्थं निर्गच्छन्
सोमं दारियं पासइ,	सोमां दारिकां पश्यति,
पासित्ता सोमाए दारियाए	दृष्ट्वा सोमायाः दारिकायाः
रूवेण य जोव्वणेण य	रूपेण च यौवनेन च
जाव विम्हिए ।	जातः विस्मितः ।

[हिन्दी शब्दार्थ]

अपने घर से बाहर निकली,
निकलकर
जहां पर राजमार्ग था वहां पर
आती है, वहां आकर
राजमार्ग में सोने की गेंद से
खेलती हुई, खेलती हुई ठहरी ।
(या खेलती रही)
उस काल उस समय में
भ० अरिष्ट० द्वारिका में पधारे ।
परिषद् धर्म सुनने के लिये
आई और चली गई ।
तब उस कृष्ण वासुदेव ने
भगवान के आने की यह
कथा वार्ता श्रवण की ।
स्नान कर वस्त्रालंकारादिक से
विभूषित होकर
गजसुकुमाल कुमार के
साथ हाथी के हौदे पर आरूढ़ होकर
कोरंट की मालायुक्त छत्र को
धारण किये श्वेतवर चामरों से वीजे
जाते हुए, वीजे जाते हुए द्वारावती
नगरी के मध्य-मध्य से होकर
भगवान श्री नेमिनाथ के
चरणवंदन को जाते हुए
सोमा नामक कन्या को देखा,
देखकर सोमा लड़की के
रूप से और यौवन से
विस्मित हुए (प्रभावित हुए) ।

[हिन्दी पद्य]

राजमार्ग है, वहां आई और राजमार्ग में सुवर्ण की गेंद से खेल खेलती-खेलती खेल में निमग्न हो गई ।

उस काल उस समय अरिहंत अरिष्टनेमि द्वारिका नगरी पधारे । परिषद् धर्म-कथा सुनने को आई । उस समय वह कृष्ण वासुदेव भी भगवान् के शुभागमन के समाचार से अवगत हो, स्नान कर—

यावत् वस्त्रालंकारों से विभूषित हो गज सुकुमाल कुमार के साथ हाथी के हौदे पर आरूढ़ होकर कोरंट पुष्पों की माला और छत्र धारण किये हुए, श्वेत एवं श्रेष्ठ चामरों से दोनों ओर से निरन्तर वीज्यमान जाते हुए, द्वारिका नगरी के मध्य मार्गों से होकर अर्हत् अरिष्टनेमि के चरण-वन्दन के लिये जाते हुए, राज-मार्ग में खेलती हुई उस सोमा कन्या को देखते हैं । सोमा कन्या के रूप, लावण्य और कान्ति-युक्त यौवन को देखकर कृष्ण वासुदेव अत्यन्त आश्चर्यचकित हुए ।

सूत्र १७

[मूल सूत्र पाठ]

तएणं से कण्हे वासुदेवे
कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ,
सद्दावित्ता एवं वयासी–
गच्छह णं तुब्भे देवाणुप्पिया !
सोमिलं माहणं जाइत्ता सोमं दारियं
गिण्हह, गिण्हित्ता कण्णंतेउरंसि
पक्खिवह ।

तएणं एसा गयसुकुमालस्स
भारिया भविस्सइ ।
तएणं ते कोडुंबिय पुरिसा
जाव पक्खिवंति ।

तएणं ते कोडुंबिय पुरिसा
जाव पच्चप्पिणंति ।
कण्हे वासुदेवे बारवईए
णयरीए मज्झंमज्झेणं
णिगच्छइ, णिगच्छित्ता
जेणेव सहस्संबवणे उज्जाणे
जाव पज्जुवासइ ।

तए णं अरहा अरिट्ठणेमी
कण्हस्स वासुदेवस्स गय-
सुकुमालस्स कुमारस्स
तीसे य० धम्म कहा ।
कण्हे पडिगए ।

[संस्कृत छाया]

ततः खलु सः कृष्णः वासुदेवः
कौटुम्बिक पुरुषान् शब्दापयति,
शब्दापयित्वा एवं अवदत्–
गच्छत खलु यूयं देवानुप्रियाः !
सोमिलं ब्राह्मणं याचित्वा सोमां दारिकां
गृह्णीत, गृहीत्वा कन्यान्तःपुरे
प्रक्षिपत ।

ततः खलु एषा गजसुकुमालस्य
भार्या भविष्यति ।
ततः ते कौटुम्बिक पुरुषाः
यावत् प्रक्षिपन्ति ।

ततः खलु ते कौटुम्बिक पुरुषाः
यावत् प्रत्यर्पयन्ति ।
कृष्णः वासुदेवः द्वारावत्याः
नगर्याः मध्यंमध्येन
निर्गच्छति, निर्गत्य
यत्रैव सहस्राम्रवनं उद्यानं
यावत् पर्युपासते ।

ततः खलु अर्हन् अरिष्टनेमिः
कृष्णाय वासुदेवाय गज–
सुकुमालाय कुमाराय
तस्यै च धर्मकथां (उपादिशत्)
कृष्णः प्रतिगतः ।

सूत्र १७

[हिन्दी शब्दार्थ]

तदनन्तर वह कृष्ण वासुदेव
राजसेवकों को बुलाते हैं—
बुलाकर इस प्रकार कहते हैं
हे देवानुप्रिय ! तुम जाओ और
सोमिल से सोमा कन्या की याचना कर
उसे प्राप्त करो, प्राप्त कर उसे
कन्याओं के अन्त:पुर में पहुँचा दो ।

इसके बाद यह सोमा गजसुकुमाल
की भार्या बनेगी ।
तदनन्तर उन राजसेवकों ने
सोमा को अंत:पुर में पहुँचा दिया ।

तब उन कौटुम्बिक पुरुषों ने
श्री कृष्ण को वापस सूचना दी ।
कृष्ण वासुदेव द्वारावती
नगरी के मध्य-मध्य से
निकलते हैं, निकलकर
जहाँ पर सहस्राम्रवन बगीचा है वहाँ
पर जाकर प्रभु की सेवा करने लगे ।

तदनन्तर भगवान् अरिष्टनेमी
ने कृष्ण वासुदेव को व गज
सुकुमाल कुमार को तथा उस
सभा को धर्म का उपदेश दिया ।
श्री कृष्ण वापस लौट गये ।

[हिन्दी भाव][1]

तब वह कृष्ण-वासुदेव आज्ञाकारी पुरुषों को बुलाते हैं, बुलाकर इस प्रकार कहते हैं— "हे देवानुप्रियो ! तुम सोमिल ब्राह्मण के पास जाओ और उससे इस सोमा कन्या की याचना करो उसे प्राप्त करो और फिर उसे लेकर कन्याओं के राजकीय अन्त:पुर में पहुँचा दो । समय पाकर यह सोमा कन्या, मेरे छोटे भाई गजसुकुमाल की भार्या होगी ।"

तदनन्तर कृष्ण की आज्ञा को शिरोधार्य कर वे राजसेवक सोमिल ब्राह्मण के पास गये और उससे उसकी कन्या की याचना की । इससे सोमिल ब्राह्मण अत्यन्त प्रसन्न हुआ और अपनी कन्या को ले जाने की स्वीकृति दे दी । उन कौटुम्बिक पुरुषों ने सोमा को उसके पिता सोमिल से प्राप्त कर यावत् अन्त:पुर में पहुँचा दिया और उन्होंने श्री कृष्ण को निवेदन किया कि उनकी आज्ञा का यावत् पूर्णत: पालन हो गया है ।

तत्पश्चात् कृष्ण वासुदेव द्वारिका नगरी के मध्य भाग से होते हुए निकले और निकलकर जहाँ सहस्राम्रवन उद्यान था, वहाँ पहुँच कर यावत् प्रभु को वन्दन नमस्कार करके उनकी सेवा करने लगे । उस समय भगवान् अरिष्टनेमि ने कृष्ण, वासुदेव और गजसुकुमाल कुमार प्रमुख उस सभा को धर्मोपदेश दिया । प्रभु की अमोघ वाणी सुनने के पश्चात् कृष्ण अपने आवास को लौट गये ।

सूत्र १८

[मूल सूत्र पाठ]	[संस्कृत छाया]
तएणं से गयसुकुमाले कुमारे अरहओ अरिट्ठणेमिस्स अंतियं धम्मं सोच्चा, जं णवरं अम्मापियरं आपुच्छामि, जहा मेहे,[२१] जं णवरं महिलिया वज्जं जाव वड्ढिय कुले।	ततः खलु सः गजसुकुमालः कुमारः अर्हतः अरिष्टनेमिनः अन्तिके धर्मं श्रुत्वा, यो विशेषः अम्बापितरौ आपृच्छामि, यथा मेघकुमारः यो,[२१] विशेषः महिलिका वर्जः यावत् वर्धितकुलः।
तएणं से कण्हे वासुदेवे इमीसे कहाए लद्धट्ठे समाणे जेणेव गयसुकुमाले कुमारे तेणेव उवागच्छइ,	ततः खलु सः कृष्णः वासुदेवः अस्याः कथायाः लब्धार्थः सन् यत्रैव गजसुकुमालः कुमारः तत्रैव उपागच्छति,
उवागच्छित्ता गयसुकुमालं कुमारं आलिंगइ, आलिंगित्ता उच्छंगे णिवेसेइ, णिवेसित्ता एवं वयासी—	उपागत्य गजसुकुमालं कुमारम् आलिंगति, आलिंग्य उत्संगे निवेशयति, निवेश्य एवमवदत् —
तुमं ममं सहोयरे कणीयसे भाया, तं मा णं देवाणुप्पिया! इयाणिं अरहओ अरिट्ठणेमिस्स अंतियं मुंडे जाव पव्वयाहि।	त्वं मम सहोदरः कनीयान् भ्राता, तत् मा खलु देवानुप्रिय! इदानीं अर्हतः अरिष्टनेमिनः अंतिके मुंडो यावत् प्रव्रज।

सूत्र १८

[हिंदी शब्दार्थ]

तदनन्तर वह गजसुकुमाल
कुमार भगवान श्री अरिष्टनेमी
के पास धर्म कथा सुनकर
विरक्त होकर बोले
भगवन् ! माता-पिता को
पूछकर मैं आपके पास व्रत ग्रहण करूंगा,

मेघकुमार की तरह,
विशेष रूप से महिलाओं को छोड़कर
माता-पिता ने उन्हें वंशवृद्धि के बाद
दीक्षा ग्रहण करने को कहा।
तब श्री कृष्ण वासुदेव ने गजसुकुमाल
की वैराग्यरूप यह कथा
सुनी तो जहां गजसुकुमाल
कुमार था वहां आये,

पास आकर गजसुकुमाल
कुमार का स्नेह से आलिंगन
किया, आलिंगन कर उसे अपनी
गोदी में बैठा लेते हैं,
गोदी में बैठाकर इस प्रकार कहा—
"तू मेरा सहोदर छोटा
भाई है, इस कारण हे देवानुप्रिय !
इस समय भगवान नेमिनाथ के
पास मुंडित होकर यावत् दीक्षा
ग्रहण मत कर।

[हिंदी पद्य]

प्रभु का धर्मोपदेश सुनकर श्री कृष्ण तो लौट गये किन्तु वह गजसुकुमाल कुमार भगवान् नेमिनाथ के पास धर्म-कथा सुनकर संसार से विरक्त हो प्रभु नेमिनाथ से इस प्रकार बोले— हे भगवन् ! माता पिता को पूछकर मैं आपके पास श्रमणधर्म ग्रहण करूंगा।"

इस प्रकार मेघकुमार के समान भगवान् को निवेदन करके गजसुकमार अपने घर आये और माता पिता के सामने अपने विचार प्रकट किये। माता-पिता ने दीक्षा लेने के उनके विचार सुनकर गजसुकमाल से कहा कि हे पुत्र ! तुम हमें बहुत प्रिय हो। हम तुम्हारा वियोग सहन नहीं कर सकेंगे। अभी तुम्हारा विवाह भी नहीं हुआ है इसलिए तुम पहले विवाह करो। विवाह करके कुल की वृद्धि करके संतान को अपना दायित्व सौंप कर फिर दीक्षा ग्रहण करना।

तदनन्तर कृष्ण-वासुदेव गजसुकुमाल के विरक्त होने की बात सुनकर गजसुकमाल के पास आये और आकर उन्होंने गजसुकुमाल कुमार का स्नेह से आलिंगन किया, आलिंगन कर गोद में बिठाया, गोद में बिठाकर इस प्रकार बोले—

"हे देवानुप्रिय ! तुम मेरे सहोदर छोटे भाई हो, इसलिये मेरा तुमसे कहना है कि इस समय भगवान् अरिष्टनेमि के पास मुंडित होकर यावत् दीक्षा ग्रहण मत करो।

[मूल सूत्र पाठ]	[संस्कृत छाया]
अहण्णं वारवईए णयरीए महया महया रायाभिसेएणं अभिसिंचिस्सामि । तएणं से गयसुकुमाले कुमारे कण्हेणं वासुदेवेणं एवं वुत्ते समाणे तुसिणीए संचिट्ठइ ।	अहं खलु द्वारावत्याः नगर्याः महता महता राज्याभिषेकेण अभिसेक्ष्यामि । ततः खलु सः गजसुकुमालः कुमारः कृष्णेन वासुदेवेन एवमुक्तः सन् तूष्णीकः संतिष्ठते ।

सूत्र १६

तएणं से गयसुकुमाले कुमारे कण्हं वासुदेवं अम्मापियरो य दोच्चंपि तच्चं पि एवं वयासी—	ततः खलु सः गजसुकुमालः कुमारः कृष्णं वासुदेवं अम्बापितरौ च द्वितीयमपि तृतीयमपि एवमवादीत्—
एवं खलु देवाणुप्पिया ! माणुस्सया कामा असुइ, असासया, वंतासवा जाव विप्पजहियव्वा भविस्संति ।	एवं खलु देवानुप्रियाः ! मानुष्यकाः कामाः अशुचयः, अशाश्वताः वान्तास्रवाः यावत् विप्रहातव्याः भविष्यन्ति ।
तं इच्छामि णं देवाणुप्पिया ! तुब्भेहिं अब्भणुण्णाए समाणे अरहओ अरिट्ठणेमिस्स अंतिए जाव पव्वइत्तए ।	तत् इच्छामि खलु देवानुप्रियाः ! युष्माभिः अभ्यनुज्ञातः सन् अर्हतः अरिष्टनेमिनः अन्तिके यावत् प्रव्रजितुम् ।
तए णं तं गयसुकुमालं कुमारं कण्हे वासुदेवे अम्मापियरो य जाहेणो संचाएइ बहुयाहिं अणुलोमाहिं जाव आघवित्तए ।	ततः खलु तं गजसुकुमालं कुमारं कृष्णः वासुदेवः अम्बापितरौ च यदा न शक्नुवन्ति बहुकाभिः अनुलोमाभिः यावत् आख्यापयितुम् ।

[हिन्दी शब्दार्थ]

मैं तुमको द्वारावती नगरी
मे बडे समारोह के साथ
राज्याभिषेक से अभिषिक्त करूंगा ।"
तदनन्तर वह गजसुकुमाल कुमार
कृष्ण वासुदेव से इस प्रकार
कहा गया होकर मौन रहा ।

[हिन्दी पद्य]

मैं तुमको द्वारिका नगरी में बहुत बडे समारोह के साथ राज्याभिषेक से अभिषिक्त करूंगा ।" तब गजसुकुमाल कुमार कृष्ण वासुदेव द्वारा ऐसा कहे जाने पर मौन रहे ।

सूत्र १९

कुछ समय के बाद वह गज-
सुकुमाल कुमार कृष्ण वासुदेव और
माता-पिता को दूसरी-तीसरी बार भी
इस प्रकार बोले—

"इस प्रकार हे देवानुप्रिय !
मनुष्य के कामभोग अपवित्र हैं
अस्थायी हैं, मलमूत्र वमन के स्रोत हैं
ये एक दिन अवश्य छोडने होंगे ।"

इसलिए हे देवानुप्रिय ! मैं
चाहता हूँ कि आपकी आज्ञा पाकर
भगवान् अरिष्टनेमी के पास
प्रव्रज्या (दीक्षा) ग्रहण करलूँ ।
तब उस गजसुकुमाल कुमार को
कृष्ण वासुदेव और माता-पिता
जब बहुत सी अनुकूल एवं
स्नेहभरी युक्तियों से समझाने में समर्थ
नहीं हुए ।

कुछ समय मौन रहने के बाद गजसुकुमाल अपने बडे भाई कृष्ण वासुदेव एवं माता-पिता को दूसरी बार और तीसरी बार भी इस प्रकार बोले—'हे देवानुप्रियो ! वस्तुतः मनुष्य के कामभोग एवं देह अपवित्र, अशाश्वत क्षणविध्वंसी और मल-मूत्र-कफ-वमन पित्त शुक्र एवं शोणित के भंडार हैं। यह मनुष्य शरीर और ये उसके कामभोग अस्थिर हैं, अनित्य हैं एवं सडन-गलन एवं विध्वंसी होने के कारण आगे पीछे कभी न कभी अवश्य नष्ट होने वाले हैं। एक दिन देर सवेर ये छूटने वाले हैं।"

"इसलिए हे देवानुप्रियो ! मैं चाहता हूं कि आपकी आज्ञा मिलने पर भगवान् अरिष्टनेमि के पास प्रव्रज्या (श्रमण दीक्षा) ग्रहण कर लूं ।"

तदनन्तर उस गजसुकुमाल कुमार को कृष्ण-वासुदेव और माता पिता जब बहुत-सी अनुकूल और स्नेह भरी युक्तियों से भी समझाने मे समर्थ नहीं हुए तब निराश होकर भी कृष्ण एवं माता पिता इस प्रकार बोले—

[मूल सूत्र पाठ]	[संस्कृत छाया]
ताहे अकामा चेव एवं वयासी—	तदा अकामा एव एवमवदन्
तं इच्छामो णं ते जाया !	तत् इच्छामः ते हे जात !
एगदिवसमवि रज्जसिरिं पासित्तए।	एकदिवसमपि राज्यश्रियम् द्रष्टुम्।
णिक्खमणं, जहा महब्बलस्स[22] जाव तमाणाए तहा जाव संजमित्तए।	निष्क्रमणम्, यथा महाबलस्य[22] यावत् तदाज्ञायां यावत् संयतिव्यः।
तए णं से गयसुकुमाले अणगारे जाए इरियासमिए जाव गुत्तबंभयारी।	ततः सः गजसुकुमालः अनगारः जातः इर्यासमितः यावत् गुप्त ब्रह्मचारी।

सूत्र २०

तए णं से गयसुकुमाले अणगारे जं चेव दिवसं पव्वइए तस्सेव दिवसस्स पुव्वावरण्हकालसमयंसि जेणेव अरहा अरिट्ठणेमी तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता, अरहं अरिट्ठणेमिं तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं करेइ, करित्ता एवं वयासी—	ततः सः गजसुकुमालः अनगारः यस्मिन् एव दिवसे प्रव्रजितः तस्यैव दिवसस्य पूर्वापराह्नकालसमये यत्रैव अर्हन् अरिष्टनेमिः तत्रैव उपागच्छति, उपागत्य, अर्हन्तमरिष्टनेमिनम् त्रिःकृत्य आदक्षिण-प्रदक्षिणां करोति, कृत्वा एवमवदत्-

[हिन्दी अन्वाय]

तब न चाहते हुए भी इस प्रकार बोले-

"यदि ऐसा ही है तो हे पुत्र !

हम चाहते हैं तुम्हारी

एक दिन की राज्य लक्ष्मी को देखना"

(गजसुकुमाल ने उनकी

आज्ञा स्वीकार कर दीक्षा ग्रहण की)

दीक्षा सम्बन्धी निष्क्रमण महाबल[२२]

समान यावत् आज्ञानुसार सयम पालन

में उद्यत हुए ।

तब वह गजसुकुमाल कुमार

अनगार हो गये और ईर्यासमिति

वाले यावत् गुप्त ब्रह्मचारी बन गये ।

[हिन्दी अर्थ]

"यदि ऐसा ही है तो हे पुत्र ! हम एक दिन की तुम्हारी राज्यश्री (राजवैभव की शोभा) देखना चाहते हैं । इसलिये तुम कम से कम एक दिन के लिये तो राजलक्ष्मी को स्वीकार करो ।"

माता पिता एव बडे भाई के इस प्रकार अनुरोध करने पर गजसुकुमाल चुप रहे ।

इसके बाद बडे समारोह के साथ उनका राज्याभिषेक किया गया ।

गजसुकुमाल के राजगद्दी पर बैठने पर माता पिता ने उनसे पूछा—"हे पुत्र ! अब तुम क्या चाहते हो ? बोलो ।"

गज सुकुमाल ने तब उत्तर दिया—"मैं दीक्षित होना चाहता हूँ ।"

तब गजसुकुमाल की इच्छानुसार दीक्षा की सभी सामग्री मगाई गई ।

'दीक्षा सम्बन्धी निष्क्रमण' 'एव आज्ञानुसार सयम पालन में उद्यत हुए ।' यहां तक का वर्णन महाबल के समान समझना ।[२२]

अब वह गजसुकुमाल अणगार हो गये । ईर्यासमिति वाले यावत् गुप्त ब्रह्मचारी बन गये ।

सूत्र २०

तदनन्तर वह गजसुकुमाल

मुनि जिस दिन दीक्षा ग्रहण की

उसी दिन

दिन के पिछले भाग में

जहाँ अरिहत अरिष्टनेमी थे

वहाँ आये,

वहाँ आकर भगवान् नेमिनाथ को

तीन बार दक्षिण तरफ से

प्रदक्षिणा करते हैं, तथा

प्रदक्षिणा करके इस प्रकार बोले—

श्रमण धर्म में दीक्षित होने के पश्चात् वह गजसुकुमाल मुनि जिस दिन दीक्षित हुए, उसी दिन, दिन के पिछले भाग मे जहाँ अरिहत अरिष्टनेमि विराजमान थे, वहाँ आये । वहाँ आकर उन्होने भगवान् नेमिनाथ की दक्षिण की ओर से तीन बार प्रदक्षिणा की । प्रदक्षिणा करके वे इस प्रकार बोले—

[मूल सूत्र पाठ]	[संस्कृत छाया]
'इच्छामि णं भन्ते !	इच्छामि खलु भदन्त !
तुब्भेहिं अब्भणुण्णाए समाणे	युष्माभिरभ्यनुज्ञातः सन्
महाकालंसि सुसाणंसि	महाकालनामके श्मशाने
एगराइयं महापडिमं	एकरात्रिकीं महाप्रतिमाम्
उवसंपज्जित्ता णं विहरित्तए ।'	उपसंपद्य खलु विहर्तुम्
'अहासुहं देवाणुप्पिया !'	यथासुखं देवानुप्रिया !
तए णं से गयसुकुमाले	ततः खलु सः गजसुकुमालः
अणगारे अरहया अरिट्ठणेमिणा	अनगारः अर्हता अरिष्टनेमिना
अब्भणुण्णाए समाणे अरहं	अभ्यनुज्ञातः सन् अर्हन्तम्
अरिट्ठणेमिं वंदइ णमंसइ,	अरिष्टनेमिनं वंदति नमस्यति,
वंदित्ता णमंसित्ता	वन्दित्वा नमस्यित्वा
अरहओ अरिट्ठणेमिस्स	अर्हतः अरिष्टनेमिनः
अंतियाओ सहसंबवणाओ	अन्तिकात् सहस्राम्रवनात्
उज्जाणाओ पडिणिक्खमइ,	उद्यानात् प्रतिनिष्क्रामति,
पडिणिक्खमित्ता जेणेव	प्रतिनिष्क्रम्य यत्रैव
महाकाले सुसाणे	महाकालं श्मशानं
तेणेव उवागच्छइ,	तत्रैव उपागच्छति,
उवागच्छित्ता थंडिलं	उपागत्य स्थंडिलम्
पडिलेहेइ,	प्रतिलेखयति,
पडिलेहित्ता उच्चारपासवण	प्रतिलेख्य उच्चारप्रस्रवण
भूमिं पडिलेहेइ,	भूमिं प्रतिलेखयति,
पडिलेहित्ता	प्रतिलेख्य
ईसिं पब्भारगएणं काएणं	ईषत्प्राग्भारगतेनकायेन
जाव दो वि पाए साहट्टु	यावत् द्वौ अपि पादौ संहृत्य

[हिन्दी अन्वय]

"हे भगवन् ! मैं चाहता हूँ
आपसे आज्ञा दिया हुआ
महाकाल नामक श्मशान में
एक रात्रि की महाप्रतिमा
धारणकर विचरण करूँ ।"
प्रभु बोले—"हे देवानुप्रिय !
जैसे सुख हो वैसा करो ।"
तब वह गजसुकुमाल
मुनि भगवान नेमिनाथ से
आज्ञा प्राप्त कर भगवान
नेमिनाथ को वन्दना नमस्कार करते हैं,
वन्दना नमस्कार करके
भगवान नेमिनाथ के
पाससे सहस्राम्रवन नामक
बगीचे से बाहर निकले ।
उद्यान से निकलकर जहाँ
महाकाल श्मशान था
वहाँ पर आते हैं ।
महाकाल श्मशान में आकर
उन्होंने भूमि की प्रतिलेखना की,
प्रतिलेखन करके उच्चार
पासवण भूमि (मलमूत्रत्यागस्थल)
का प्रतिलेखन करते हैं, प्रतिलेखन करके
थोड़ा देह को पूर्व की तरफ झुका
कर (एक पुद्गल पर दृष्टि जमाये)
दोनों पैरों को (चार अंगुल के अन्तर
में) सिकोड़

[हिन्दी अर्थ]

"हे भगवन् ! आपकी अनुज्ञा प्राप्त होने पर मैं महाकाल श्मशान में एक रात्रि की महापडिमा (महाप्रतिमा) धारण कर विचरना चाहता हूं ।"

प्रभु ने कहा—"हे देवानुप्रिय ! जिससे तुम्हें सुख प्राप्त हो वही करो ।"

तदनन्तर वह गजसुकुमाल मुनि अरिहंत अरिष्टनेमि की आज्ञा मिलने पर, भगवान् नेमिनाथ को वंदन नमस्कार करते हैं । वंदन नमस्कार कर, अर्हत् अरिष्टनेमि के सान्निध्य से चलकर वे सहस्राम्र वन उद्यान से निकले वहां से निकलकर जहां महाकाल श्मशान था वहां आते हैं ।

महाकाल श्मशान में आकर प्रासुक स्थण्डिल भूमि की प्रतिलेखना करते हैं । प्रतिलेखन करने के पश्चात् उच्चार-प्रस्रवण (मल मूत्र त्याग) के योग्य भूमि का प्रतिलेखन करते हैं । प्रतिलेखन करने के पश्चात् एक स्थान पर खड़े हो अपनी देह यष्टि को किंचित् झुकाये हुए (एक पुद्गल पर दृष्टि जमाकर) दोनों पैरों को (चार अंगुल के अन्तर से) सिकोड़कर

[मूल सूत्र पाठ]	[संस्कृत छाया]
एगराइयं महापडिमं	एकरात्रिकीं महाप्रतिमाम्
उवसंपज्जित्ताणं विहरइ।	उपसंपद्य विहरति।

सूत्र २१

इमं च णं सोमिले माहणे	अयं च खलु सोमिलो ब्राह्मणः
सामिधेयस्स अट्ठाए वारवईओ	समिधायाः अर्थाय द्वारावत्याः
णयरीओ वहिया, पुव्वणिग्गए	नगर्याः वहिः पूर्वनिर्गतः
समिहाओ य	समिधः च
दब्भे य कुसे य पत्तामोडयं च	दर्भांश्च कुशांश्च पत्रामोटं च
गिण्हइ, गिण्हित्ता तओ	गृह्णाति, गृहीत्वा ततः
पडिणियत्तइ, पडिणियत्तित्ता	प्रतिनिवर्तते, प्रतिनिवृत्य
महाकालस्स सुसाणस्स	महाकालस्य श्मशानस्य
अदूरसामंतेणं वीइवयमाणे	अदूरसामंतेन व्यतिव्रजन्
संझाकालसमयंसि	संध्याकालसमये
पविरलमणुस्संसि	प्रविरलमानुषे
गयसुकुमालं अणगारं	गजसुकुमालम् अनगारम्
पासइ, पासित्ता तं वेरं	पश्यति, दृष्ट्वा तत् वैरं
सरइ	स्मरति,
सरित्ता आसुरुत्ते एवं वयासी-	स्मृत्वा आशुरक्तः एवम् अवदत्—
एस णं भो! से गयसुकुमाले	एष खलु भो ! स. गजसुकुमालः
कुमारे अपत्थिय जाव	कुमारः अप्रार्थितः यावत्
परिवज्जिए,	परिवर्जितः,
जे णं मम धूयं, सोमसिरीए	यः खलु मम दुहितरं, सोमश्रियाः
भारियाए अत्तयं सोमंदारियं	भार्यायाः आत्मजां सोमां दारिकां
अदिट्ठदोसपइयं कालवत्तिणीं	अदृष्टदोषप्रकृतिम्, कालवर्तिनीम्
विप्पजहित्ता मुण्डे जाव पव्वइए।	विप्रहाय मुण्डो यावत् प्रव्रजितः।

[हिन्दी अन्वय]

कर एक रात्रि की महाप्रतिमा
अंगीकार करके ध्यान में खड़े रहे ।

[हिन्दी अर्थ]

एक रात्रि की महाप्रतिमा अंगीकार कर ध्यान में मग्न हो जाते हैं ।

सूत्र २१

[हिन्दी अन्वय]

वह सोमिल ब्राह्मण
हवन की लकड़ी के लिए द्वारावती
नगरी से बाहर, पहले से निकला
हुआ हवनीय काष्ठ,
दर्भ कुशा और अग्रभाग में
मुड़े हुए (सूखे) पत्तों को
लेता है, लेकर वहाँ से
वापस लौटता है, वापस लौटकर
महाकाल श्मशान के
निकट से जाते हुए
सन्ध्याकाल के समय में जब
कि मनुष्यों का आवागमन नहीं सा
था गजसुकुमाल मुनि को
देखता है, देखते ही सोमिल
को पूर्व जन्म का वैर जागृत हो गया,
वैर जागृत होते ही तत्काल
क्रोधित होता हुआ इस प्रकार बोला-
अरे ! यह यह गजसुकुमाल
कुमार अप्रार्थनीय मृत्यु को चाहने
वाला यावत् लज्जा-रहित है,
जिसने मेरी पुत्री व सोमश्री
ब्राह्मणी की आत्मजा सोमा कन्या को
जो कि अवस्था प्राप्त और दोष रहित है
छोड़कर मुंडित हो साधु बन गया है ।

[हिन्दी अर्थ]

इधर ऐसा हुआ कि सोमिल ब्राह्मण समिधा (यज्ञ की लकड़ी) के लिए द्वारिका नगरी के बाहर पूर्व की ओर गज सुकुमाल अणगार के श्मशान भूमि में जाने से पूर्व ही निकला ।

वह समिधा, दर्भ, कुश डाभ एवं अग्र भाग में मुड़े हुए पत्तों को लेता है, उन्हें लेकर वहाँ से अपने घर की तरफ लौटता है ।

लौटते समय महाकाल श्मशान के निकट (न अति दूर न अति सन्निकट) से जाते हुए सन्ध्या काल की वेला में जबकि मनुष्यों का गमनागमन नहीं के समान हो गया था उसने गजसुकुमाल मुनि को वहाँ ध्यानस्थ खड़े देखा ।

उन्हें देखते ही सोमिल के हृदय में पूर्व भव का वैर जागृत हुआ । पूर्व जन्म के वैर का स्मरण हुआ । पूर्व जन्म के वैर को स्मरण करके वह क्रोध से तमतमा उठता है और इस प्रकार बुदबुदाता है—

अरे ! यह तो मृत्यु अप्रार्थनीय का प्रार्थी (मृत्यु की इच्छा करने वाला) यावत् निर्लज्ज एवं श्री कान्ति आदि से हीन गजसुकुमाल कुमार है, जो मेरी सोमश्री भार्या की कुक्षि से उत्पन्न यौवनावस्था को प्राप्त मेरी निर्दोष पुत्री सोमा कन्या को अकारण ही छोड़कर मुंडित हो यावत् श्रमण बन गया है ।

सूत्र २२

[मूल सूत्र पाठ]	[संस्कृत छाया]
तं सेयं खलु मम गयसुकुमालस्स	तत् श्रेयः खलु मम गजसुकुमालस्य
वेरणिज्जायणं करित्तए,	वैर निर्यातनं कर्तुम्,
एवं संपेहेइ,	एवं सम्प्रेक्षते,
संपेहित्ता दिसापडिलेहणं करेइ,	संप्रेक्ष्य दिशाप्रतिलेखनं करोति,
करित्ता	कृत्वा
सरसं मट्टियं गिण्हइ,	सरसां मृत्तिकां गृह्णाति,
गिण्हित्ता जेणेव गयसुकुमाले	गृहीत्वा यत्रैव गजसुकुमालः
अणगारे तेणेव उवागच्छइ,	अनगारः तत्रैव उपागच्छति,
उवागच्छित्ता गयसुकुमालस्स अणगारस्स	उपागत्य गजसुकुमालस्य अनगारस्य
मत्थए मट्टियाए पालिं बंधइ,	मस्तके मृत्तिकायाः पालिं बध्नाति,
बंधित्ता जलंतीओ चिययाओ	बद्ध्वा ज्वलन्त्याश्चितिकायाः
फुल्लियकिंसुय-समाणे	फुल्लितकिंशुकसमानान्
खयरंगारे कहल्लेणं गिण्हइ,	खदिराङ्गारान् कर्परेण गृह्णाति,
गिण्हित्ता गयसुकुमालस्स	गृहीत्वा गजसुकुमालस्य
अणगारस्स मत्थए पक्खिवइ,	अनगारस्य मस्तके प्रक्षिपति,
पक्खिवित्ता भीए तओ खिप्पामेव	प्रक्षिप्य भीतः ततः क्षिप्रमेव
अवक्कमइ,	अपक्रामति,
अवक्कमित्ता जामेव दिसं पाउब्भूए	अपक्रम्य यस्याः दिशः प्रादुर्भूतः
तामेव दिसं पडिगए ।	तस्यामेव दिशि प्रतिगतः ।

सूत्र २३

तए णं तस्स गयसुकुमालस्स	ततः खलु तस्य गजसुकुमालस्य
अणगारस्स सरीरयंसि वेयणा	अनगारस्य शरीरे वेदना
पाउब्भूया,	प्रादुर्भूता,
उज्जला जाव दुरहियासा	उज्ज्वला यावत् दुरधिसहा,
तएणं से	ततः खलु सः

सूत्र २२

[हिंदी शब्दार्थ]

इसलिये निश्चय ही मुझे गजसुकुमाल से
वैर का बदला लेना उचित है,
इस प्रकार (यह) विचार करता है,
विचार कर दिशाओं का निरीक्षण
करता है, चारों तरफ देखकर
गीली मिट्टी लेता है,
मिट्टी लेकर जहां गजसुकुमाल
मुनि थे, वहां आता है,
वहां आकर गजसुकुमाल मुनि के
मस्तक पर मिट्टी की पाल बाँधता है,
पाल बाँधकर जलती हुई चिता से
फूले हुए केसुडा के फूलों के समान
लालखेर के अंगारों को खप्पर में लेता है,
लेकर गजसुकुमाल
मुनि केमस्तक पर रख देता है,
रखकर भयभीत हुआ, वहां से शीघ्र
ही हट जाता है,
हटकर जिस दिशा से आया था,
उस ही दिशा में चला गया।

[हिंदी अर्थ]

इसलिये मुझे निश्चय ही गजसुकुमाल से इस वैर का बदला लेना चाहिये। इस प्रकार वह सोमिल सोचता है और सोचकर सब दिशाओं की ओर देखता है कि कहीं कोई उसे देख तो नहीं रहा है। इस विचार से चारों ओर देखता हुआ पास के ही तालाब से वह थोडी गीली मिट्टी लेता है। गीली मिट्टी लेकर वहां आता है। वहां आकर गजसुकुमाल मुनि के सिर पर उस मिटटी से चारों तरफ एक पाल बांधता है।

पाल बांधकर पास में ही कहीं जलती हुई चिता में से फूले हुए केसू के फूल के समान लाल-लाल खेर के अंगारों को किसी फूटे खप्पर में या कि किसी फूटे हुए मिट्टी के बरतन के टुकड़े (ठीकरे) में लेकर वह उन दहकते हुए अंगारों को उन गजसुकुमाल मुनि के सिर पर रखने के बाद इस भय से कि कहीं उसे कोई देख न ले भयभीत हो कर वह वहां से शीघ्रतापूर्वक पीछे की ओर हटता हुआ भागता है। वहां से भागता हुआ वह सोमिल जिस ओर से आया था उसी ओर चला गया।

सूत्र २३

अंगार रखने के बाद उस गजसुकुमाल
मुनि के शरीर में तीव्र वेदना
उत्पन्न हुई, जो
अत्यन्त दुःखरूप यावत् असह्य थी,
तब वह

सिर पर उन जाज्वल्यमान अंगारों के रखे जाने से गजसुकुमाल मुनि के शरीर में महा भयंकर वेदना उत्पन्न हुई जो अत्यन्त दाहक दुःखपूर्ण यावत दुस्सह थी। इतना होने पर भी वे गजसुकुमाल मुनि सोमिल ब्राह्मण पर मन में भी लेश मात्र भी द्वेष नहीं करते

[मूल सूत्र पाठ]	[सस्कृत छाया]
गयसुकुमाले अणगारे	गजसुकुमालः अनगारः
सोमिलस्स माहणस्स मणसा	सोमिलस्य ब्राह्मणस्य मनसा
वि अप्पदुस्समाणे तं उज्जलं	अपि अप्रदुष्यन् तां उज्वलां
जाव अहियासेई ।	यावत् (दुःसहां वेदनां) अधिसहते ।
तएणं तस्स गयसुकुमालस्स	ततः खलु तस्य गजसुकुमालस्य
अणगारस्स तं उज्जलं जाव	अनगारस्य तां उज्वलां यावत्
अहियासेमाणस्स सुभेणं	अधिसहमानस्य शुभेन
परिणामेणं पसत्थज्झवसाणेणं	परिणामेन प्रशस्ताध्यवसायेन
तयावरणिज्जाणं कम्माणं	तदावरणीयानां कर्मणां
खएणं कम्मरयविकिरणकरं	क्षयेन कर्मरजविकिरणकरम्
अपुव्व-करणं अणुप्पविट्ठस्स	अपूर्वकरणमनुप्रविष्टस्य
अणंते, अणुत्तरे जाव	अनन्तमनुत्तरं यावत्
केवलवरणाण-दंसणे	केवलवरज्ञानदर्शनम्
समुप्पण्णे तओ पच्छा	समुत्पन्नम् ततः पश्चात्
सिद्धे जावप्पहीणे ।	सिद्धः यावत् प्रहीणः ।
तत्थणं अहा संणिहिएहिं	तत्र खलु यथा संनिहितैः
देवेहिं सम्मं आराहियंति	देवैः सम्यक् आराधितः इति
कट्टु दिव्वे सुरभिगंधोदए वुट्ठे,	कृत्वा दिव्यं सुरभिगन्धोदकं वृष्टम्
दसद्धवण्णे कुसुमे णिवाइए	दशार्धवर्णानिकुसुमानि निपातितानि,
चेलुक्खेवे कए	चैलोत्क्षेपः कृतः
दिव्वे य गीय-गंधव्वणिणाए	दिव्यं च गीतं-गान्धर्वनिनादः
कए यावि होत्था ।	कृतः चापि अभूत् ।

सूत्र २४

तए णं से कण्हे वासुदेवे	ततः खलु सः कृष्ण वासुदेवः
कल्लं पाउप्पभायाए जाव-	कल्ये प्रादुर्भूतप्रभाते यावत्

[हिन्दी शब्दार्थ]	[हिन्दी भाष]
गजसुकुमाल मुनिवर सोमिल ब्राह्मण पर मनसे भी द्वेष न लाते हुए उस तीव्रतर दु:खरूपवेदना को सहन करने लगे। उस समय उस गजसुकुमाल मुनि द्वारा उस तीव्र यावत् एकान्त वेदना को सहन करते हुए प्रशस्त शुभ परिणाम पूर्वक अध्यवसाय के कारण आवरणीय कर्म का क्षय होने से कर्मरज को बिखेरने वाले अपूर्व करण में प्रविष्ट होने से अनन्त सर्वश्रेष्ठ पूर्ण केवल ज्ञान और केवल दर्शन उत्पन्न हुआ। इसके बाद वे सिद्ध बुद्ध यावत् सब दुःखों से मुक्त हो गये। तदनन्तर जो वहां समीप थे उन देवों ने भलीप्रकार आराधना की तथा दिव्य सुगन्धित जल की वर्षा की पाँचवर्ण के पुष्प गिराये वस्त्रों की वर्षा की और दिव्य गीत और गन्धर्व-वाजित्र की ध्वनि भी हुई।	हुए उस एकान्त दु:खरूप वेदना को यावत् समभावपूर्वक सहन करने लगे। उस समय उस एकान्त दु:खपूर्ण दुस्सह दाहक वेदना को समभाव से सहन करते हुए शुभ परिणामों तथा प्रशस्त शुभ अध्यवसायों (भावनाओं) के फलस्वरूप आत्मगुणों पर भिन्न भिन्न रूपों वाले तद् तदावरणीय कर्मों के क्षय से समस्त कर्म रज को झाडकर साफ कर देने वाले कर्म विनाशक अपूर्व-करण में वे प्रविष्ट हुए जिससे उन गजसुकुमाल अणगार को अनन्त अन्तरहित, अनुत्तर यावत् सर्वश्रेष्ठ निर्व्याघात् निरावरण एवं सपूर्ण केवल ज्ञान एवं केवलदर्शन की उपलब्धि हुई और तत्पश्चात् आयुष्य पूर्ण हो जाने पर वे उसी समय सिद्ध बुद्ध यावत् सब दु:खों से मुक्त हो गये। इस तरह सकल कर्मों के क्षय हो जाने से वे गजसुकुमाल अणगार कृतकृत्य बन कर 'सिद्ध' पद को प्राप्त हुए लोकालोक के सभी पदार्थों के ज्ञान से 'बुद्ध' हुए, सभी कर्मों के छूट जाने से परिनिवृत्त यानि शीतली भूत हुए एवं शारीरिक और मानसिक सभी दुःखों से रहित होने से 'सर्व दुःख प्रहीण' हुए अर्थात् वे गजसुकुमाल अणगार मोक्ष को प्राप्त हुए। उस समय वहां समीपवर्ती देवों ने "अहो! इन गजसुकुमाल मुनि ने श्रमण चारित्रधर्म की अत्यन्त उत्कृष्ट आराधना की है" यह जान कर अपनी वैक्रिय शक्ति के द्वारा दिव्य सुगंधित अचित्त जल की तथा पाच वर्णों के दिव्य अचित्त फूलों एवं वस्त्रों की वर्षा की और दिव्य मधुर गीतों तथा गन्धर्व वाद्ययन्त्रों की ध्वनि से आकाश को गुंजा दिया

सूत्र २४

तदनन्तर वह कृष्ण वासुदेव दूसरे दिन प्रातःकाल सूर्योदय होने पर	उस रात्रि के व्यतीत होने के पश्चात् दूसरे दिन सूर्योदय की वेला में कृष्ण वासुदेव

[मूल सूत्र पाठ]	[संस्कृत छाया]
जलंते ण्हाए जाव विभूसिए,	ज्वलति स्नातः यावत् विभूषितः
हत्थिक्खंधवरगए,	हस्तिस्कन्धवरगतः,
सकोरंटमल्लदामेणं छत्तेणं	सकोरंटकमाल्यदाम्ना छत्रेण
धरिज्जमाणेणं सेयवरचामराहिं	ध्रियमाणेन श्वेतवरचामरैः
उद्धुवमाणीहिं	उद्धुवद्भिः (उद्धूयमानैः)
महया भडचडगरपहकरवंद	महाभटचाटुकारप्रकरवृन्द
परिक्खित्ते	परिक्षिप्तः
बारवई णयरीं मज्झंमज्झेणं	द्वारावत्याः नगर्याः मध्यमध्येन
जेणेव अरहा अरिट्ठणेमी	यत्रैव अर्हन् अरिष्टनेमी
तेणेव पहारेत्थ गमणाए ।	तत्रैव प्राधारयद् गमनाय ।
तएणं से कण्हे वासुदेवे	ततः खलु सः कृष्णः वासुदेवः
बारवईए णयरीए मज्झंमज्झेणं	द्वारावत्याः नगर्याः मध्यमध्येन
णिग्गच्छमाणे एक्कं पुरिसं	निर्गच्छन् एकं पुरुषं
पासइ, जुण्णं	पश्यति, जीर्णम्
जराजज्जरिय देहं जाव	जराजर्जरितं देहं यावत्
किलंतं महई महालयाओ	क्लिन्नं (क्लान्तं) महातिमहालयात्
इट्टगरासीओ एगमेगं	इष्टकाराशेः एकामेकाम्
इट्टगं गहाय बहिया	इष्टकां गृहीत्वा बहिः
रत्थापहाओ अंतोगिहं	रथ्यापथात् अन्तर्गृहम्
अणुप्पविसमाणं पासइ ।	अनुप्रवेशयन्तम् पश्यति ।
तएणं से कण्हे वासुदेवे	ततः खलु सः कृष्णः वासुदेवः
तस्स पुरिसस्स अणुकंपणट्ठाए,	तस्य पुरुषस्य अनुकंपनार्थं
हत्थिक्खंधवरगए चेव	हस्तिस्कन्धवरगतश्चैव
एगं इट्टगं गिण्हइ,	एकाम् इष्टकां गृह्णाति,
गिण्हित्ता बहिया रत्थापहाओ	गृहीत्वा बहिःरथ्यापथात्
अंतोगिहं अणुप्पवेसेइ ।	अन्तर्गृहम् अनुप्रवेशयति ।

[हिन्दी शब्दार्थ]

स्नान से निवृत्त हो यावत् वस्त्राभूषणों
से भूषित हुआ
श्रेष्ठ हाथी पर सवार हुआ
कोरट के फूलों की मालायुक्त
छत्र धारण किये हुए श्वेत चामरों से
वीजे जाते हुए तथा
बड़े बड़े योद्धाओं व सेवक
समूह से घिरे हुए
द्वारवती नगरी के बीचबीच से
जहाँ पर भगवान् अरिष्टनेमी थे
वहाँ ही जाने का निश्चय किया।
तदनन्तर वह कृष्ण वासुदेव
द्वारावती नगरी के मध्यभाग
से निकलते हुए एक पुरुष
को देखते हैं, वह प्रतिवृद्ध
जरा से जर्जरित देहवाला यावत्
थका हुआ था और जो बहुत
बड़े ईंटों के ढेर मे से एक एक
ईंट को लेकर बाहर गली के
रास्ते से घर के भीतर ले जा
रहा था, ऐसे को देखा।
तब उन कृष्ण वासुदेव ने
उस पुरुष की अनुकम्पा के लिये
हाथी पर बैठे हुए ही
एक ईंट को उठाली,
उठाकर बाहर गली के रास्ते से
घर के भीतर पहुंचा दी।

[हिन्दी अर्थ]

स्नान कर वस्त्रालकारो से विभूषित हो हाथी पर आरूढ होकर, कोरट पुष्पों की माला एव छत्र धारण किये हुए श्वत एव उज्वल चामर अपने दायें बायें डुलवाते हुए अनेक बड़े-बड़े योद्धाओं के समूह से घिरे हुए द्वारिका नगरी के राजमार्ग में होते हुए जहा भगवान् अरिष्ट-नेमि विराजमान थे, वहा के लिए रवाना हुए।

तब उस कृष्ण वासुदेव ने द्वारिका नगरी के मध्य भाग से जाते समय एक पुरुष को देखा, जो अति वृद्ध, जरा से जर्जरित यावत अति क्लान्त अर्थात् कुम्हलाया हुआ एव थका हुआ था। वह बहुत दुखी था। उसके घर के बाहर राजमार्ग पर ईंटो का एक विशाल ढेर लगा हुआ पड़ा था जिसे वह वृद्ध एक-एक ईंट करके अपने घर मे स्थानान्तरित कर रहा था।

उस दुखी वृद्ध पुरुष को इस तरह एक एक ईंट लाते देखकर कृष्ण वासुदेव ने उस पुरुष के प्रति करुणार्द्र होकर उस पर अनुकम्पा करते हुए हाथी पर बैठे-बैठे ही उस ढेर मे से एक ईंट उठाई और उसे ले जा कर उसके घर के अन्दर रख दिया तब कृष्ण वासुदेव को इस तरह ईंट उठाते देखकर उनके साथ के अनेक सौ पुरुषों ने भी एक एक करके ईंटों के उस सम्पूर्ण ढेर को तुरन्त बाहर से उठाकर उसके घर में पहुचा दिया।

[मूल सूत्र पाठ]

तएणं कण्हेणं वासुदेवेणं
एगाए इट्टगाए गहियाए
समाणीए अणेगेहिंपुरिससएहिं
से महालए इट्टगस्स
रासी बहिया रत्थापहाओ
अंतोघरंसि अणुप्पवेसिए ।

[संस्कृत छाया]

ततः खलु कृष्णेन वासुदेवेन
एकस्याम् इष्टकायां गृहीतायां
सत्याम् अनेकैः पुरुषशतैः
सा महती इष्टकायाः
राशिः बहिः रथ्यापथात्
अन्तर्गृहे अनुप्रवेशितः ।

सूत्र २५

तएणं से कण्हे वासुदेवे
बारवईए णयरीए मज्झंमज्झेणं
णिग्गच्छइ, णिगच्छित्ता
जेणेव अरहा अरिट्ठणेमी
तेणेव उवागए, उवागच्छित्ता
जाव वंदित्ता णमंसित्ता
गजसुकुमालं अणगारं
अपासमाणे अरहं अरिट्ठणेमिं
वंदइ, णमंसइ,
वंदित्ता, णमंसित्ता एवं वयासी
कहिणं भंते ! से मम सहोयरे
भाया गयसुकुमाले अणगारे?
जण्णं अहं वंदामि णमंसामि
तएणं अरहा अरिट्ठणेमी
कण्हं वासुदेवं एवं वयासी—
साहिएणं कण्हा ! गयसुकुमालेणं
अणगारेणं अप्पणो अट्ठे ।
तएणं से कण्हे वासुदेवे
अरहं अरिट्ठणेमिं एवं वयासी—

ततः खलु सः कृष्णः वासुदेवः
द्वारावत्याः नगर्याः मध्यमध्येन
निर्गच्छति, निर्गत्य
यत्रैव अर्हन् अरिष्टनेमिः
तत्रैव उपागतः, उपागत्य
यावत् वंदित्वा नमस्यित्वा
गजसुकुमालम् अनगारम्
अपश्यन् अर्हन्तम् अरिष्टनेमिनम्
वन्दते नमस्यति,
वन्दित्वा, नमस्यित्वा एवम् अवदत्
क्व खलु भदन्त ! सः मम सहोदरः
भ्राता गजसुकुमालः अनगारः
यं खलु अहं वन्दे नमस्यामि
ततः खलु अर्हन् अरिष्टनेमिः
कृष्णं वासुदेवम् एवं अवदत्
साधितः खलु कृष्ण ! गजसुकुमालेन
अनगारेन आत्मनः अर्थः ।
ततः खलु सः कृष्णः वासुदेवः
अर्हन्तम् अरिष्टनेमिनम् एवम् अवादीत्

[हिन्दी शब्दार्थ]

तब कृष्ण वासुदेव के द्वारा
एक ईंट उठालेने पर
अनेक सकडों पुरुषों द्वारा
वह बहुत बडा ईंटों का
ढेर बाहर गली मे से
घर के भीतर पहुँचा दिया गया ।

[हिन्दी अर्थ]

इस प्रकार श्री कृष्ण के एक ईंट उठाने मात्र से उस वृद्ध जजर दु:खी पुरुष का बार-बार चक्कर काटने का कष्ट दूर हो गया ।

सूत्र २१

तदनन्तर वह कृष्ण वासुदेव
द्वारिका नगरी के बीच में से
निकल गये, निकल कर
जहाँ भगवान् अरिष्टनेमी थे
वहाँ आये, वहाँ आकर
यावत् वदना नमस्कार करके
गजसुकुमाल मुनि को नहीं
देखते हुए भगवान् अरिष्टनेमी को
वन्दना नमस्कार करते हैं
वन्दना नमस्कार करके इस प्रकार बोले
हे भगवन् ! वह मेरा सहोदर
भाई गजसुकुमाल मुनि कहाँ है ?
जिसको मैं वन्दना नमस्कार करूँ ।
तब भगवान् अरिष्टनेमी ने
कृष्ण वासुदेव को इस प्रकार कहा-
हे कृष्ण ! गजसुकुमाल मुनि
ने अपना कार्य सिद्ध कर लिया ।
तब उस कृष्ण वासुदेव ने भगवान्
अरिष्टनेमी को इस प्रकार कहा-

तत्पश्चात् वह कृष्ण वासुदेव द्वारिका नगरी के मध्य भाग से निकलते हुए जहां भगवान् अरिष्टनेमि विराजते थे वहा आए । वहा आकर यावत भगवान् को वन्दन नमस्कार किया तत्पश्चात् अपने सहोदर लघु भ्राता नवदीक्षित गजसुकुमाल मुनि को वन्दन नमस्कार करने के लिये उनको इधर-उधर देखा । जब उन्होंने मुनि को वहा नही देखा तो भगवान् अरिष्टनेमि को पुन वन्दन नमस्कार किया और वन्दन-नमन करके भगवान् से इस प्रकार पूछा 'प्रभो ! वे मेरे सहोदर लघुभ्राता नवदीक्षित गजसुकुमाल मुनि कहाँ हैं ? मैं उनको वन्दना नमस्कार करना चाहता हू ।"

तब अर्हन् अरिष्टनेमि कृष्ण वासुदव को इस प्रकार बोले—'हे कृष्ण ! गजसुकुमाल मुनि ने जिस प्रयोजन के लिये सयम स्वीकार किया था, वह प्रयोजन, वह आत्मार्थ उन्होंने सिद्ध कर लिया है ।"

यह सुनकर चकित होते हुए कृष्ण वासुदेव ने अर्हन्त प्रभु से प्रश्न किया "भगवन् !

[मूल सूत्र पाठ]

कहण्णं भन्ते ! गयसुकुमालेणं
अणगारेणं साहिए अप्पणो अट्ठे ।

[संस्कृत छाया]

कथं खलु भदन्त! गजसुकुमालेन
अनगारेन साधितः आत्मनः अर्थः?

सूत्र २६

तएणं अरहा अरिट्ठणेमी
कण्हं वासुदेवं एवं वयासी—
एवं खलु कण्हा! गजसुकुमालेणं
अणगारेणं मम कल्लं
पुव्वावरण्ह काल समयंसि
वंदइ णमंसइ,
वंदित्ता णमंसित्ता एवं वयासी—
'इच्छामि णं जाव उवसंपज्जित्ताणं
विहरइ ।'
तएणं तं गयसुकुमालं अणगारं
एगे पुरिसे पासइ,
पासित्ता आसुरत्ते जाव सिद्धे ।
तं एवं खलु कण्हा! गयसुकुमालेणं
अणगारेणं साहिए
अप्पणो अट्ठे । तएणं से कण्हे
वासुदेवे अरहं अरिट्ठणेमिं एवं वयासी-
के स णं भंते ! से पुरिसे
अप्पत्थिय पत्थए जाव परिवज्जिए,
जे णं ममं सहोदरं कणीयसं
भायरं गयसुकुमालं अणगारं
अकाले चेव जीवियाओ ववरोविए ?

ततः खलु अर्हन् अरिष्टनेमी
कृष्णं वासुदेवम् एवम् अवादीत्-
एवं खलु कृष्ण! गजसुकुमालेन
अनगारेन माम् कल्यं
पूर्वापराह्नकाल समये
वंदते नमस्यति,
वन्दित्वा नमस्यित्वा एवम् अवादीत्
इच्छामि खलु यावत् उपसंपद्य-
विहरति ।
ततः खलु तं ! गजसुकुमालं अनगारं
एकः पुरुषः पश्यति,
दृष्ट्वा आशुरक्तः यावत् सिद्धः ।
तदेवं खलु कृष्ण ! गजसुकुमालेन
अनगारेण साधितः
आत्मनः अर्थः । ततः खलु सः कृष्णः
अर्हन्तमरिष्टनेमिनं एवम् अवदत्-
(कीदृशः)कः स नु भदन्त ! सः पुरुषः
अप्रार्थित प्रार्थकः यावत् परिवर्जितः,
यः खलु मम सहोदरं कनीयांसं
भ्रातरं गजसुकुमालम् अनगारं
अकाले चैव जीवितात् व्यपरोपितः ?

[हिन्दी शब्दार्थ]

हे भगवन् ! गजसुकुमाल मुनि
ने अपना कार्य कैसे सिद्ध कर लिया है ?

[हिन्दी अर्थ]

गजसुकुमाल मुनि ने अपना प्रयोजन, अपना आत्म कार्य सिद्ध कर लिया, यह कैसे ?"

सूत्र २६

तब भगवान् नेमीनाथ
कृष्ण वासुदेव को इस प्रकार बोले-
ऐसा है कृष्ण ! गजसुकुमाल
मुनि ने कल दिन के
पिछले भाग में मुझको
वन्दन नमस्कार किया,
वन्दन नमस्कार करके इस प्रकार कहा
आपकी आज्ञा हो तो एक रात्रि की महा
प्रतिमा धारण करविचरना चाहता हूँ।
इसके बाद उस गजसुकुमाल मुनि को
एक पुरुष ने देखा, देख कर क्रुद्ध हुआ,
यावत् गजसुकुमाल मुनि
आयु पूर्ण कर सिद्ध हो गये।
इस प्रकार हे कृष्ण ! गजसुकुमाल
मुनि ने अपना कार्य
सिद्ध कर लिया। तब कृष्ण ने
भगवान् अरिष्टनेमी को इस प्रकार कहा
हे पूज्य ! वह अप्रार्थनीय-मृत्यु
को चाहने वाला यावत् लज्जारहित
कौन पुरुष है ? जिसने मेरे सहोदर
छोटे भाई गजसुकुमाल मुनि को
असमय ही जीवनसे वियुक्त कर दिया ?

अर्हत् अरिष्टनेमि ने कृष्ण वासुदेव को उत्तर दिया "हे कृष्ण ! वस्तुतः कल दिन के अपराह्न काल के पूर्व भाग में गजसुकुमाल मुनि ने मुझे वन्दन-नमस्कार किया। वन्दन-नमस्कार करके इस प्रकार निवेदन किया-'हे प्रभो ! आपकी आज्ञा हो तो मैं महाकाल श्मशान में एक रात्रि की महा भिक्षु प्रतिमा धारण करके विचरना चाहता हूं।"

यावत् मेरी अनुज्ञा प्राप्त होने पर वह गजसुकुमाल मुनि महाकाल श्मशान में जा कर भिक्षु की महाप्रतिमा धारण करके ध्यानस्थ खड़े हो गये।

'इसके बाद उन गजसुकुमाल मुनि को एक पुरुष ने देखा और देखकर उन पर बड़ा क्रुद्ध हुआ।

पूर्व का वैर-भाव उसमें जागृत हुआ। वह क्रोध एवं वैर से प्रेरित होकर पास के तालाब से गीली मिट्टी लाया और उन गजसुकुमाल अणगार के सिर पर धारा और उस मिट्टी से पाल बांधी। फिर पास में ही जलती हुई किसी की चिता से धधकते हुए लाल २ अंगारों को किसी खप्पर में या किसी फूटे हुए मिट्टी के बरतन के टुकड़े में भरकर उन अणगार के सिर पर बांधी गई उस मिट्टी की पाल में डाल दिये।

इससे मुनि को असह्य वेदना हुई। परन्तु फिर भी उन्होंने मन से भी उस घातक पुरुष

[मूल सूत्र पाठ]	[संस्कृत छाया]
तएणं अरहा अरिट्ठणेमी	ततः अर्हन् अरिष्टनेमिः
कण्हं वासुदेवं एवं वयासी–	कृष्णं वासुदेवं एवमवादीत्
मा णं कण्हा ! तुमं तस्स	मा खलु कृष्ण ! त्वं तस्य
पुरिसस्स पओसमावज्जाहि,	पुरुषस्य उपरि द्वेषं कुरु
एवं खलु कण्हा ! तेणं पुरिसेणं	एवं खलु कृष्ण ! तेन पुरुषेण
गयसुकुमालस्स अणगारस्स	गजसुकुमालाय अनगाराय
साहिज्जे दिण्णे।	साहाय्यं दत्तम् ।

सूत्र २७

कहण्णं भंते ! तेणं पुरिसेणं	कथं भदन्त ! तेन पुरुषेण
गयसुकुमालस्स साहिज्जे	गजसुकुमालस्य साहाय्यं
दिण्णे ? तए णं अरहा अरिट्ठणेमी	दत्तम् ? ततः खलु अर्हन् अरिष्ट
कण्हं वासुदेवं एवम् वयासी—	नेमिः कृष्णं वासुदेवम् एवम् अवदत्—
से णूणं कण्हा ! तुमं ममं	अथ नूनं कृष्ण ! त्वं मम
पायवंदए हव्वमागच्छमाणे	पादवंदनाय शीघ्रमागच्छन्
वारवईए णयरीए एगं पुरिसं	द्वारावत्यां नगर्याम् एकं पुरुषं
पाससि जाव अणुप्पवेसिए ।	पश्यसि, यावत् अनुप्रवेशितः ।

[हिन्दी शब्दार्थ]

तब अरिहंत अरिष्टनेमिनाथ

कृष्ण वासुदेव को इस प्रकार बोले-

हे कृष्ण ! तुम उस पुरुष के

ऊपर द्वेष मत करो,

हे कृष्ण ! इस प्रकार उस

पुरुष ने निश्चय ही गजसुकुमाल

मुनि को सहायता प्रदान की है।

[हिन्दी भावार्थ]

के प्रति किंचित मात्र भी द्वेष भाव नहीं किया। वे समभावपूर्वक उस भयंकर वेदना को सहते रहे और इस तरह अत्यन्त शुभ परिणामों, शुभ भावों एवं शुभ अध्यवसायों से सम्पूर्ण केवल ज्ञान और केवल दर्शन प्राप्त करके सिद्ध, बुद्ध और मुक्त हो गये। इस प्रकार हे कृष्ण ! उन गजसुकुमाल मुनि ने अपना प्रयोजन सिद्ध कर लिया। अपना आत्म कार्य सिद्ध कर लिया।"

यह सुनकर वह कृष्ण वासुदेव भगवान् नेमिनाथ को इस प्रकार पूछने लगे—

"हे पूज्य ! वह अप्रार्थनीय का प्रार्थी यानि मृत्यु को चाहने वाला यावत् निर्लज्ज पुरुष कौन है जिसने मेरे सहोदर लघु भ्राता गजसुकुमाल मुनि का असमय में ही प्राण-हरण कर लिया ?"

तब अर्हत् अरिष्टनेमि कृष्ण वासुदेव से इस प्रकार बोले—"हे कृष्ण ! तुम उस पुरुष पर द्वेष-रोष मत करो क्योंकि इस प्रकार उस पुरुष ने सुनिश्चितरूपेण गजसुकुमाल मुनि को अपना आत्म कार्य, अपना प्रयोजन सिद्ध करने में सहायता प्रदान की है।"

सूत्र २७

कैसे हे पूज्य ! उस पुरुष ने

गजसुकुमाल को सहायता

दी ? तब भगवान् अरिष्टनेमी

ने कृष्ण वासुदेव को इस प्रकार कहा—

हे कृष्ण ! मेरे चरण वन्दन को

शीघ्र आते हुए तुमने द्वारिका

नगरी में एक वृद्ध पुरुष को देखा यावत्

ईंट की ढेरी उसके घर में रख दी।

यह सुनकर कृष्ण वासुदेव ने पुनः प्रश्न किया—"हे पूज्य ! उस पुरुष ने गजसुकुमाल मुनि को सहायता दी यह कैसे ?"

इस पर अर्हत् अरिष्टनेमि ने कृष्ण वासुदेव को इस प्रकार स्पष्ट किया—

'हां कृष्ण ! निश्चय ही उसने सहायता की। मेरे चरण वंदन हेतु शीघ्रतापूर्वक आते समय तुमने द्वारिका नगरी में एक वृद्ध पुरुष को देखा और उसके घर के बाहर राजमार्ग पर पड़ी हुई ईंटों की विशाल राशि में से तुमने एक ईंट उस वृद्ध के घर में ले जाकर

[मूल सूत्र पाठ]	[संस्कृत छाया]
जहा णं कण्हा तुमं तस्स पुरिसस्स साहिज्जे दिण्णे। एवमेव कण्हा ! तेणं पुरिसेणं गयसुकुमालस्स अणगारस्स अणेगभवसयसहस्स-संचियं कम्मं उदीरेमाणेणं वहुकम्मणिज्जरट्ठं साहिज्जे दिण्णे ।	यथा खलु कृष्ण त्वं तस्मै पुरुषाय साहाय्यं दत्तम् । एवमेव कृष्ण ! तेन पुरुषेण गजसुकुमालस्य अनगारस्य अनेक भवशतसहस्रसंचितं कर्म उदीरयता वहुकर्मनिर्जरार्थं साहाय्यं दत्तम् ।
तए णं से कण्हे वासुदेवे अरहं अरिट्ठणेमिं एवं वयासी— से णं भंते ! पुरिसे मए कहं जाणियव्वे ? तए णं अरहा अरिट्ठणेमी कण्हं वासुदेवं एवं वयासी— "जे णं कण्हा ! तुमं वारवईए णयरीए अणुप्पविसमाणं पासित्ता ठियए चेव ठिइभेएणं कालं करिस्सइ तएणं तुमं जाणिज्जासि एस णं से पुरिसे ।"	ततः सः कृष्णः वासुदेवः अर्हन्तम् अरिष्टनेमिं एवम् अवदत् सः भदन्त ! पुरुषः मया कथं ज्ञातव्यः ? ततः अर्हन् अरिष्टनेमिः कृष्णं वासुदेवं एवमवदत्— "यः खलु कृष्ण ! त्वां द्वारावत्यां नगर्याम् अनुप्रविशन्तम् दृष्ट्वा स्थितः एव स्थितिभेदेन कालं करिष्यति ततो नु त्वं ज्ञास्यसि एव सः पुरुषः ।"

सूत्र २८

तए णं से कण्हे वासुदेवे अरहं अरिट्ठणेमिं वंदइ, णमंसइ, वंदित्ता, णमंसित्ता, जेणेव	ततः कृष्णः वासुदेवः अर्हन्तम् अरिष्टनेमिं वन्दते, नमस्यति, वंदित्वा, नमस्यित्वा, यत्रैव

[हिन्दी शब्दार्थ]

हे कृष्ण ! जैसे तुमने उस पुरुष
के लिये सहायता दी,
इस ही प्रकार हे कृष्ण ! उस पुरुष ने
गजसुकुमाल मुनि को अनेक
सैंकड़ों-हजारों जन्मों के संचित
कर्मों की उदीरणा करते हुए
बहुत कर्म की निर्जरा के लिये
सहयोग प्रदान किया है ।
फिर कृष्ण वासुदेव ने भगवान्
अरिष्टनेमी को इस प्रकार कहा—
हे भगवन् ! मैं उस पुरुष
को कैसे जान सकूंगा ?
तब भगवान् अरिष्टनेमी ने
कृष्ण वासुदेव को इस प्रकार कहा—
हे कृष्ण ! जो तुम को द्वारिका
नगरी में प्रवेश करते हुए
देखकर खड़ा-खड़ा ही
स्थितिपूर्ण हो जाने से मृत्यु प्राप्त
करेगा तब तू जानेगा कि
यह ही वह पुरुष है ।

[हिन्दी अर्थ]

रख दी। तुम्हे एक ईंट रखते देखकर तुम्हारे साथ के सब पुरुषों ने भी उन ईंटो को उठा उठा कर उस वृद्ध के घर में पहुँचा दिया और ईंटों की वह विशाल राशि इस तरह तत्काल राज मार्ग से उठकर उस वृद्ध के घर मे चली गई। इस तरह तुम्हारे इस सत्कर्म से उस वृद्ध पुरुष का उस ढेर की एक २ ईंट करके लाने का कष्ट दूर हो गया।"

"हे कृष्ण ! वस्तुत जिस तरह तुमने उस पुरुषका दुःख दूर करने में उसकी सहायता की उसी तरह हे कृष्ण ! उस पुरुष ने भी अनेकानेक लाखों करोड़ों भवों के संचित कर्म की राशि की उदीरणा करने में सलग्न गजसुकुमाल मुनि को उन कर्मों की सम्पूर्ण निर्जरा करने में सहायता प्रदान की है। तदनन्तर कृष्ण वासुदेव ने अर्हत् अरिष्टनेमि से इस प्रकार पूछा—

"हे भगवन् ! मैं उस पुरुष को किस प्रकार जान अथवा पहिचान सकूंगा ?"

तब भगवान् अरिष्टनेमि कृष्ण वासुदेव से इस प्रकार बोले— हे कृष्ण ! जो पुरुष तुम्हें द्वारिका नगरी में प्रवेश करते हुए को देखकर खड़ा खड़ा ही आयु स्थिति पूर्ण हो जाने से मृत्यु को प्राप्त हो जाय—उसी को तुम समझ लेना कि निश्चय रूपेण यही वह पुरुष है।"

सूत्र २८

तदनन्तर कृष्ण वासुदेव भगवान्
अरिष्टनेमिनाथ को वन्दना नम-
स्कार करता है, वन्दना नमस्कार
करके जहा पर (गजराज पद पर)

तदनन्तर कृष्ण वासुदेव अरिहन्त अरिष्टनेमि को वन्दना नमस्कार कर जहां अभिषेक-योग्य हस्तिरत्न था वहां पहुंच कर उस हाथी पर आरूढ़ हुए और द्वारिका नगरी मे स्थित अपने राजप्रासाद की ओर चल पड़े।

[मूल सूत्र पाठ]

आभिसेयं हत्थिरयणं
तेणेव उवागच्छइ,
उवागच्छित्ता हत्थि दुरुहइ
दुरुहित्ता जेणेव वारवई णयरी, जेणेव
सए गिहे तेणेव
पहारेत्थ गमणाए ।

[संस्कृत छाया]

आभिषेक्यं हस्तिरत्नं
तत्रैव उपागच्छति,
उपागत्य हस्तिनं दूरोहति
दुरुह्य यत्रैव द्वारावती नगरी
यत्रैव स्वकं गृहम् तत्रैव
प्राधारयद् गमनाय ।

तए णं तस्स सोमिलस्स माहणस्स
कल्लं जाव जलंते
अयमेयारूवे अज्झत्थिए
जाव समुप्पण्णे ।
एवं खलु कण्हे वासुदेवे
अरहं अरिट्ठणेमि,
पायवंदए णिग्गए
तं णायमेयं अरहया,
विण्णायमेयं अरहया,
सुयमेयं अरहया

ततः तस्य सोमिलस्य ब्राह्मणस्य
कल्ये यावत् ज्वलति
अयमेतद्रूपः अध्याहारः
यावत् समुत्पन्नः ।
एवं खलु कृष्णो वासुदेवः
अर्हन्तम् अरिष्टनेमिं
पादवंदनाय निर्गतः
तत् ज्ञातमेतद् अर्हता,
विज्ञातमेतत् अर्हता,
श्रुतमेतद् अर्हता

सिद्धमेयं अरहया भविस्सइ
कण्हस्स वासुदेवस्स ।

शिष्टमेतद् अर्हता भविष्यति
कृष्णाय वासुदेवाय ।

तं ण णज्जइ णं कण्हे वासुदेवे
ममं केण वि कुमारेणं मारिस्सइ
त्ति कट्टु भीए सयाओ गिहाओ
पडिणिक्खमइ,
पडिणिक्खमित्ता कण्हस्स
वासुदेवस्स वारवईं णयरीं

तद् न ज्ञायते खलु कृष्णो वासुदेवः
मां केनापि कुमारेण मारयिष्यति
इति कृत्वा भीतः स्वकात् गृहात्
प्रतिनिष्क्रामति,
प्रतिनिष्क्रम्य कृष्णस्य
वासुदेवस्य द्वारावत्यां नगर्याम्

[हिन्दी अन्वय]

अभिषेक योग्य हस्तिरत्न था
यहीं पर ही आता है,
आकर हाथी पर आरूढ़ होता है
आरूढ होकर जहां द्वारिका नगरी है
तथा जहां गृह का घर है वहां
जाने का निश्चय किया अर्थात् चल दिये।

उधर उस सोमिल ब्राह्मण
को (दूसरे दिन) सुबह होते ही
इस प्रकार का मानसिक संकल्प
उत्पन्न हुआ।
निश्चय ही कृष्ण वासुदेव
अर्हन्त अरिष्टनेमि की पादवन्दना
के लिये गये होंगे तब सर्वज्ञ होने
से यह सब भगवान् ने अवश्य
जान लिया होगा, विशेष रूप से
सब जान लिया होगा।
भगवान् ने यह सब सुन लिया है
और अवश्य ही कृष्णवासुदेव को
कह दिया होगा।
तो न मालूम कृष्ण वासुदेव
मुझे किस कुमौत से मारेंगे!
इस विचार से डरा हुआ अपने
घर से निकलता है,
निकलकर कृष्ण वासुदेव
के द्वारिका नगरी में

[हिन्दी अर्थ]

उधर उस सोमिल ब्राह्मण के मन में दूसरे दिन सूर्योदय होते ही इस प्रकार विचार उत्पन्न हुआ—निश्चय ही कृष्ण वासुदेव अरिहन्त अरिष्टनेमि के चरणों में वन्दन करने के लिये गये होंगे। भगवान तो सर्वज्ञ हैं उनसे कोई बात छिपी नहीं है। उन प्रभु गजसुकुमाल की मृत्यु सम्बन्धी मेरे कुकृत्य को अरिष्टनेमि ने उन्होंने सब वृत्तान्त जान लिया होगा, (भलीभांति) पूर्णतः विदित कर लिया होगा, यह सब भगवान से स्पष्ट समझ सुन लिया होगा। अर्हन्त अरिष्टनेमि ने अवश्यमेव कृष्ण वासुदेव को यह सब कुछ बता दिया होगा।

'तो ऐसी स्थिति में कृष्ण वासुदेव रुष्ट होकर मुझे न मालूम किस प्रकार की कुमौत से मारेंगे।' ऐसा विचार कर वह डरा और नगर से कहीं दूर भागने का निश्चय किया। उसने सोचा कि शायद कृष्ण वासुदेव राजमार्ग से लौटेंगे। इसलिए मैं किसी गली के रास्ते से निकल जाऊँ और उनके लौटने से पूर्व ही निकल जाऊँ। ऐसा सोच कर वह अपने घर से निकला और गली के रास्ते से भागा।

इधर कृष्ण वासुदेव भी अपने लघु सहोदर भाई गजसुकुमाल मुनि की मरण-वार्ता के शोक से विह्वल होकर वापस राजमार्ग छोड़कर उसी गली के रास्ते से लौट रहे थे।

[मूल सूत्र पाठ]	[संस्कृत छाया]
अणुप्पविसमाणस्स पुरओ	अनुप्रविशन्तं पुरतः
सपक्खिं सपडिदिसं	सपक्षं सप्रतिदिशम्
हव्वमागए ।	शीघ्रमागतः ।

सूत्र २६

तए णं से सोमिले माहणे कण्हं	ततः सः सोमिलः ब्राह्मणः कृष्णं
वासुदेवं सहसा पासित्ता भीए,	वासुदेवं सहसा दृष्ट्वा भीतः,
ठियए चेव ठिइभेएणं कालं	स्थितः एव स्थितिभेदेन कालं
करेइ,	करोति,
करित्ता धरणितलंसि	कृत्वा धरणीतले
सव्वंगेहिं धसत्ति सण्णिवडिए ।	सर्वांगैः 'धस' इति संनिपतितः ।
तएणं से कण्हे वासुदेवे सोमिलं	ततः सः कृष्णः वासुदेवः सोमिलं
माहणं पासइ,	ब्राह्मणं पश्यति,
पासित्ता एवं वयासी—	दृष्ट्वा एवमवादीत्—
एस णं भो देवाणुप्पिया ! से सोमिले	एष भो देवानुप्रियाः ! सः सोमिलः
माहणे अपत्थिय पत्थए	ब्राह्मणः अप्रार्थित प्रार्थकः
जाव परिवज्जिए ।	यावत् परिवर्जितः ।
जेण ममं सहोयरे कणीयसे भायरे	येन मम सहोदरः कनीयान् भ्राता
गयसुकुमाले अणगारे अकाले	गजसुकुमालः अनगारः अकाले
चेव जीवियाओ ववरोविए,	चैव जीवितात् व्यपरोपितः,
त्ति कट्टु सोमिलं माहणं	इति उक्त्वा सोमिलं ब्राह्मणं
पाणेहिं कड्ढावेइ,	पाणैः कर्षयति,
कड्ढावित्ता, तं भूमिं पाणिएणं	कर्षयित्वा, तां भूमिं पानीयेन
अब्भुक्खावेइ,	अभ्युक्षयति,
अब्भुक्खावित्ता, जेणेव सए	अभ्युक्ष्य, यत्रैव स्वकं

[हिन्दी शब्दार्थ]

प्रवेश करते हुए के सामने बराबर दिशा और पथ में शीघ्र आ गया ।

[हिन्दी अर्थ]

जिससे सयोगवश कृष्ण वासुदेव के द्वारिका नगरी में प्रवेश करते समय उनके सामने ही वह आ निकला ।

सूत्र २६

तब वह सोमिल ब्राह्मण कृष्ण वासुदेव को अचानक देखकर भयभीत हुआ खड़ा-खड़ा ही स्थितिभेद से मृत्यु को प्राप्त हो गया तथा मरकर पृथ्वीतल पर सब अंगों से 'धम' से गिर गया । तब कृष्ण वासुदेव ने सोमिल ब्राह्मण को देखा देखकर इस प्रकार कहा— हे देवानुप्रियो ! यह वह सोमिल ब्राह्मण अप्रार्थनीय(मृत्यु) को चाहने वाला (लज्जा व शोभा से रहित है।) जिसने मेरे सहोदर छोटे भाई गजसुकुमाल मुनि को असमय में ही जीवन से विमुक्त कर दिया । यह कह कर सोमिल ब्राह्मण को चाण्डालों से घिसटवाकर हटवाया, हटवाकर, उस भूमि को जल से धुलवाते हैं धुलवा कर जहां अपना

तब उस समय वह सोमिल ब्राह्मण कृष्ण वासुदेव को सहसा सम्मुख देखकर भयभीत हुआ और वहीं-का-वहीं स्तम्भित खड़ा रह गया और वहीं खड़े-खड़े ही स्थिति भेद से अपना आयुष्य पूर्ण हो जाने से सर्वांग शिथिल हो वह सोमिल 'धम' शब्द करते हुए मर कर वहीं भूमि-तल पर गिर पड़ा ।

उस समय कृष्ण वासुदेव सोमिल ब्राह्मण को मर कर गिरता हुआ देखते हैं और देख-कर इस प्रकार बोलते हैं—

"अरे ओ देवानुप्रियो ! यही वह अप्रार्थ-नीय को चाहने वाला मृत्यु की इच्छा करने वाला तथा लज्जा एवं शोभा से रहित सोमिल ब्राह्मण है, जिसने मेरे सहोदर छोटे भाई गजसुकुमाल मुनि को असमय में ही काल का ग्रास बना डाला।" ऐसा कहकर कृष्ण वासु-देव ने सोमिल ब्राह्मण के उस शव को चाण्डालों के द्वारा घसीटवा कर नगर के बाहर फिकवा दिया और उसके शव को फिकवा कर उस शव से स्पृष्ट की गई सारी भूमि को पानी से धुलवाया। उस भूमि को पानी से धुलवाकर कृष्ण वासुदेव अपने राजप्रासाद में पहुंचे और अपने आगार में प्रवेश किया ।

[मूल सूत्र पाठ]	[संस्कृत छाया]
गिहे तेणेव उवागए	गृहं तत्रैव उपागतः
सयं गिहं अणुप्पविट्ठे ।	स्वकं गृहं अनुप्रविष्टः ।
एवं खलु जम्बू ! समणेणं	एवं खलु जम्बू ! श्रमणेन
भगवया जाव संपत्तेणं	भगवता यावत् संप्राप्तेन
अट्ठमस्स अंगस्स अंतगडदसाणं	अष्टमस्य अंगस्य अन्तकृद्दशानाम्
तच्चस्स वग्गस्स अट्ठमस्स	तृतीयस्य वर्गस्य अष्टमस्य
अज्झयणस्स अयमट्ठे पण्णत्ते ।	अध्ययनस्य अयमर्थः प्रज्ञप्तः ।

इति अष्टमाध्ययनं समाप्तम्

अथ नवमाध्ययनम्

णवमस्स उक्खेवओ ।	नवमस्य उत्क्षेपकः ।
एवं खलु जम्बू ! तेणं कालेणं	एवं खलु जम्बू ! तस्मिन् काले
तेणं समएणं बारवईए णयरीए	तस्मिन् समये द्वारावत्यां नगर्यां
जहा पढमे जाव विहरइ ।	यथा प्रथमे यावत् विहरति ।
तत्थ णं बारवईए बलदेवे	तत्र द्वारावत्यां बलदेवो
णामं राया होत्था,	नाम राजा अभवत्,
वण्णओ ।	वर्ण्यः ।
तस्स णं बलदेवस्स रण्णो	तस्य बलदेवस्य राज्ञः
धारिणी णामं देवी होत्था,	धारिणी नामा देवी (राज्ञी) आसीत्,
वण्णओ ।	वर्ण्या ।
तए णं सा धारिणी सीहं	ततः सा धारिणी सिंहं

[हिंदी शब्दार्थ]	[हिंदी अर्थ]
घर है वहां आये, और अपने घर में (महल में) चले गये। इस प्रकार हे जम्बू ! श्रमण भगवान् जो मोक्ष पधारे हैं, उन प्रभु ने आठवें अंग अन्तगडदशा सूत्र के तीसरे वर्ग के आठवें अध्य-यन का यह अर्थ कहा है।	इस प्रकार हे जम्बू ! श्रमण भगवान् महावीर ने, जो कि सिद्ध, बुद्ध मुक्त हुए, आठवें अङ्ग के तीसरे वर्ग के आठवें अध्याय का यह भाव श्रीमुख से कहा।

अष्टमाध्ययनम् समाप्तम्

नवमां अध्ययन

नवम अध्ययन का प्रारम्भ। इस प्रकार हे जम्बू ! उस काल व उस समय द्वारिका नगरी में जैसा प्रथम अध्ययन में कहा गया है उसी प्रकार भगवान् नेमिनाथ विचरण करते हुए वहां पधारे। वहां द्वारिका नगरी में बलदेव नामक राजा था, जो कि वर्णनीय था। उस बलदेव राजा के धारिणी नाम की रानी थी, वह बहुत वर्णनीय थी, फिर उस धारिणी रानी ने सिंह का स्वप्न देखा, तदनन्तर पुत्र जन्म आदि का वर्णन	यहां उत्क्षेपक शब्द के प्रयोग से यह आशय समझना चाहिए कि श्री जम्बू स्वामी अपने स्वामी सुधर्मा से पूर्वानुसार फिर आगे पूछते हैं कि "हे भगवन् ! श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने अन्तगडदशांग सूत्र के तीसरे वर्ग के आठवें अध्ययन के जो भाव कहे वे मैंने आपसे सुने। हे भगवन् ! अब आगे नवमें अध्ययन के उन्होंने क्या भाव कहे हैं ? यह भी मुझे बताने की कृपा करें।" श्री सुधर्मा स्वामी—हे जम्बू ! उस काल उस समय में द्वारिका नामक एक नगरी थी जिसका वर्णन पूर्व में किया जा चुका है। एक दिन भगवान् अरिष्टनेमि तीर्थंकर परम्परा से विचरते हुए उस नगरी में पधारे। द्वारिका नगरी में बलदेव नाम के एक राजा थे। उनकी रानी का नाम 'धारिणी' था, वह अत्यन्त सुकोमल सुंदर एवं गुण सम्पन्न थी। एक समय सुकोमल शय्या पर सोई हुई उस धारिणी ने रात को स्वप्न में सिंह देखा। स्वप्न देखकर वह जग गई। उसी समय अपने पति के पास जाकर स्वप्न का वृत्तांत उन्हें सुनाया। गर्भ समय पूर्ण होने पर स्वप्न के

[मूल सूत्र पाठ]	[संस्कृत छाया]
सुमिणे, जहा गोयमे	स्वप्ने, यथा गौतमः
णवरं सुमुहे णामं कुमारे,	(नवीनम्) विशेषस्तु सुमुखो नाम कुमारः
पण्णासं कण्णाओ,	पञ्चाशत् कन्यकाः (परिणीतवान्)
पण्णासं दाओ,	(परिणये) पञ्चाशत् दायः,
चोद्दस पुव्वाइं अहिज्जइ,	चतुर्दश पूर्वाणि अधीते,
वीसं वासाइं परियाओ,	विंशति वर्षाणि (दीक्षा) पर्यायः,
सेसं तं चेव जाव सेत्तुंजे	शेषं तदेव यावत् शत्रुञ्जये
सिद्धे निक्खेवओ।	सिद्धः निक्षेपकः।

इति नवमाध्ययनम्

अथ अध्ययन १०, ११, १२, एवं १३

एवं दुम्मुहे वि, कूवदारए वि।	एवं दुर्मुखोऽपि कूपदारकोऽपि।
दोण्हं वि बलदेवे पिया,	द्वयोरपि बलदेवः पिता,
धारिणी माया। १०-११।	धारिणी माता। १०-११।
दारुए वि एवं चेव,	दारुकः अपि एवमेव
णवरं वसुदेवे पिया,	विशेषः वसुदेवः पिता,
धारिणी माया। १२।	धारिणी माता। १२।
एवं अणादिट्ठी वि,	एवं अनादृष्टिः अपि
वसुदेवे पिया धारिणी माया। १३।	वसुदेवः पिता धारिणी माता। १३।
एवं खलु जम्बू !	एवं खलु जम्बू !
समणेणं जाव सम्पत्तेणं	श्रमणेन यावत् (मुक्ति) सम्प्राप्तेन
अट्ठमस्स अंगस्स अंतगडदसाणं	अष्टमस्य अंगस्य अन्तकृद्दशानां

[हिन्दी शब्दार्थ]

गौतम कुमार की तरह जानना चाहिये। विशेष, कुमार का नाम सुमुख रखा गया, पचास कन्याओं का पाणिग्रहण किया, पचास (करोड़) दहेज प्राप्त हुआ, चौदह पूर्व का अध्ययन किया बीस वर्ष दीक्षा पर्याय चला शेष उसी प्रकार यावत् शत्रुञ्जय पर्वत पर सिद्ध हुए। निक्षेपक।

[हिन्दी भाव]

अनुसार उनके यहाँ एक पुण्यशाली पुत्र उत्पन्न हुआ। इसके जन्म, बाल्यकाल आदि का वर्णन गौतम कुमार के समान समझना। विशेष में उस बालक का नाम 'सुमुख' रक्खा गया। युवा होने पर पचास कन्याओं के साथ उसका पाणिग्रहण संस्कार हुआ। विवाह में पचास-पचास करोड़ सोनैया आदि का दहेज उसे मिला। भ० अरिष्टनेमि के किसी समय यहाँ पधारने पर उनका धर्मोपदेश सुन-कर सुमुख कुमार उनके पास दीक्षित हो गया। दीक्षित होकर चौदह पूर्व का ज्ञान पढ़ा। बीस वर्ष तक श्रमण दीक्षा पाली। अन्त में गौतम कुमार की तरह संलेखना

नवमाध्ययन समाप्त

अध्ययन १०, ११, १२, एवं १३

इसी प्रकार दुर्मुख और कूपदारक कुमार का वर्णन जानना चाहिये। दोनों के भी बलदेव पिता और धारिणी माता थी। १०-११।

दारुक भी इसी प्रकार है विशेष यह है कि वासुदेव पिता और धारिणी माता है। १२।

इसी प्रकार अनावृष्टि कुमार भी वासुदेव पिता धारिणी माता है। १३।

इस प्रकार हे जम्बू! श्रमण यावत् मुक्ति प्राप्त प्रभु ने आठवें अंग अंतगडदशा

यावत् संथारा करके शत्रुञ्जय पर्वत पर सिद्ध हुए। हे जम्बू! श्रमण भगवान् महावीर ने अन्तगडदशा के तीसरे वर्ग के नव में अध्ययन का उपरोक्त भाव कहा।"

जिस प्रकार प्रभु ने नवमें अध्ययन का भाव फरमाया है उसी प्रकार दसवें 'दुर्मुख' और ग्यारहवें 'कूपदारक' का भी वर्णन समझना। फर्क इतना सा है कि दोनों के 'बलदेव' महाराज पिता और 'धारिणी' माता थी बाकी इनका सारा वर्णन 'सुमुख' के वर्णन के समान ही है।

इसी तरह बारहवें 'दारुक' और तेरहवें 'अनावृष्टि कुमार' का वर्णन भी समझना। इसमें अन्तर केवल इतना ही है कि इनके 'वसुदेव' पिता और 'धारिणी' माता थी।

श्री सुधर्मा—"इस तरह हे जम्बू! श्रमण यावत् मुक्ति प्राप्त प्रभु ने आठवें अंग अन्तगड-

[मूल सूत्र पाठ]	[संस्कृत छाया]
तच्चस्स वग्गस्स तेरसमस्स अज्झयणस्स अयमट्ठे पण्णत्ते ।	तृतीयस्य वर्गस्य त्रयोदशस्य अध्ययनस्य अयमर्थः प्रज्ञप्तः ।

तृतीय वर्गः समाप्तः

अथ चतुर्थः वर्गः

जइणं भंते ! समणेणं जाव संपत्तेणं अट्ठमस्स अंगस्स अंतगडदसाणं तच्चस्स वग्गस्स अयमट्ठे पण्णत्ते । चउत्थस्स णं भंते! वग्गस्स अन्तगडदसाणं समणेणं जाव संपत्तेणं के अट्ठे पण्णत्ते ?	यदि खलु भदन्त ! श्रमणेन यावत् संप्राप्तेन अष्टमस्य अंगस्य अंतकृद्दशानां तृतीयस्य वर्गस्य अयमर्थः प्रज्ञप्तः । चतुर्थस्य खलु भदन्त ! वर्गस्य अन्तकृद्दशानां श्रमणेन यावत् संप्राप्तेन कोऽर्थः प्रज्ञप्तः ?
एवं खलु जम्बू ! समणेणं जाव संपत्तेणं चउत्थस्स वग्गस्स अन्तगडदसाणं दस अज्झयणा पण्णत्ता तं जहा—	एवं खलु जम्बू ! श्रमणेन यावत् संप्राप्तेन चतुर्थस्य वर्गस्य अंतकृद्दशानां दशानि अध्ययनानि प्रज्ञप्तानि तानि यथा—
जालि मयालि उवयालि, पुरिससेणे य वारिसेणे य । पज्जुण्ण संब अणिरुद्धे, सच्चणेमी य दढणेमी ।१।	जालिर्मयालिरुवयालिः, पुरुषसेनश्च वारिसेनश्च । प्रद्युम्नः साम्बोऽनिरुद्धः सत्यनेमिश्च दृढनेमिः ।१।
जइणं भन्ते ! समणेणं जाव संपत्तेणं चउत्थस्स वग्गस्स दस अज्झयणा पण्णत्ता ।	यदि भदन्त ! श्रमणेन यावत् संप्राप्तेन चतुर्थस्य वर्गस्य दशानि अध्ययनानि प्रज्ञप्तानि ।

[हिन्दी शब्दार्थ]

सूत्र के तीसरे वर्ग के तेरहवें अध्ययन का यह भाव कहा है।

[हिन्दी अर्थ]

दशा सूत्र के तीसरे वर्ग के एक से लेकर तेरह अध्ययनों का यह भाव फरमाया है।

तृतीय वर्ग समाप्त

अथ चतुर्थ वर्ग

सूत्र १

यदि हे भगवन् ! श्रमण यावत् मुक्ति प्राप्त प्रभु ने आठवें अंग अंतगडदशासूत्र के तीसरे वर्ग का यह अर्थ फरमाया है। हे पूज्य ! श्रमण भगवान यावत् मुक्ति प्राप्त प्रभु ने अंतगडदशा सूत्र के चतुर्थ वर्ग का क्या अर्थ (भाव) कहा है।

इस प्रकार हे जम्बू ! श्रमण यावत् मुक्ति प्राप्त प्रभु ने अन्तगडदशासूत्र के चतुर्थ वर्ग के दस अध्ययन कहे हैं। जो इस प्रकार हैं—

१ जालि, २ मयालि, ३ उपयालि, ४ पुरुषसेन और ५ वारिसेन। ६ प्रद्युम्न, ७ साम्ब, ८ अनिरुद्ध, ९ सत्यनेमि और १० दृढनेमि।

श्री जम्बू स्वामी—"हे भगवन् ! श्रमण यावत् मुक्ति प्राप्त प्रभु ने आठवें अंग अंतकृतदशा के तीसरे वर्ग का जो वर्णन किया वह आपके श्रीमुख से सुना।

अब अंतगडदशा के चौथे वर्ग के हे पूज्य ! श्रमण भगवान् ने क्या भाव दर्शाये हैं यह भी मुझे बताने की कृपा करें।"

श्री सुधर्मा—"हे जम्बू ! श्रमण यावत् मुक्ति प्राप्त प्रभु ने अंतगडदशा के चौथे वर्ग में दस अध्ययन कहे हैं जो इस प्रकार हैं—

१ जालि कुमार, २ मयालि कुमार, ३ उवयालि कुमार ४ पुरुषसेन कुमार, ५ वारिसेन कुमार, ६ प्रद्युम्न कुमार, ७ शाम्ब कुमार, ८ अनिरुद्ध कुमार, ९. सत्यनेमि कुमार, १० दृढ़नेमि कुमार।

श्री जम्बू—"हे भगवन् ! श्रमण यावत् मुक्ति प्राप्त प्रभु ने चौथे वर्ग में दस अध्ययन कहे हैं। तो उनमें से हे पूज्य ! प्रथम अध्ययन का श्रमण यावत् मुक्ति प्राप्त प्रभु ने क्या अर्थ बताया है।"

सूत्र २

हे भगवन् ! यदि श्रमण यावत् मुक्ति प्राप्त प्रभु ने चतुर्थ वर्ग के दस अध्ययन कहे हैं।

[मूल सूत्र पाठ]	[संस्कृत छाया]
पढमस्स णं भन्ते ! अज्झयणस्स समणेणं जाव संपत्तेणं के अट्ठे पण्णत्ते ?	प्रथमस्य खलु भदन्त ! अध्ययनस्य श्रमणेन यावत् संप्राप्तेन कः अर्थः प्रज्ञप्तः ?
एवं खलु जम्बू ! तेणं कालेणं तेणं समएणं वारवई णाम णयरी होत्था, जहा पढमे । कण्णे वासुदेवे आहेवच्चं जाव विहरइ ।	एवं खलु जम्बू ! तस्मिन् काले तस्मिन् समये द्वारावती नाम नगरी अभवत्, यथा प्रथमे । कृष्णःवासुदेवःआधिपत्यं यावत् विहरति।

सूत्र ३

तत्थ णं वारवईए णयरीए वसुदेवे राया, धारिणी देवी । वण्णओ । जहा गोयमो, णवरं जालि कुमारे पण्णासओ दाओ ।	तत्र खलु द्वारावत्यां नगर्यां वसुदेवः राजा धारिणी देवी । वर्ण्य : । यथा गौतमः, विशेषस्तु जालिकुमार : पंचाशत् दायः
वारसंगी सोलस्स वासा परियाओ सेसं जहा गोयमस्स	द्वादशांगी, षोडश वर्षाणि पर्यायः शेषं यथा गौतमस्य
जाव सेत्तुंजे सिद्धे ।	यावत् शत्रुंजये सिद्धः ।
एवं मयालि, उवयालि, पुरिससेणे, वारिसेणे य ।	एवं मयालिः उववालिः पुरुषसेनः वारिसेनश्च ।

[हिन्दी शब्दार्थ]

तो हे भगवन् ! प्रथम
अध्ययन का श्रमण यावत्
मुक्ति प्राप्त प्रभु ने क्या अर्थ कहा है?
इस प्रकार हे जम्बू !
उस काल उस समय में
द्वारिका नाम की नगरी थी,
जैसे प्रथम अध्याय में वर्णन
किया गया है उसी प्रकार।
कृष्ण वासुदेव वहां राज्य करते थे।२।

[हिन्दी अर्थ]

श्री सुधर्मा स्वामी—"हे जम्बू ! उस काल व उस समय में द्वारिका नाम की एक नगरी थी, जिसका वर्णन प्रथम वर्ग के प्रथम अध्ययन में किया जा चुका है। श्री कृष्ण वासुदेव वहां राज्य कर रहे थे।"

"उस द्वारिका नगरी में महाराज 'वसुदेव' और रानी 'धारिणी' निवास करते थे।

रानी धारिणी अत्यन्त सुकुमार, सुन्दर और सुशीला थी। एक समय कोमल सेज पर सोती हुई उस धारिणी रानी ने सिंह का स्वप्न देखा। उस स्वप्न का वृत्तान्त अपने पतिदेव को सुनाया।

सूत्र ३

वहां द्वारिका नगरी में
वसुदेव राजा धारिणी रानी,
जो कि वर्णन योग्य थे।
गौतम कुमार के समान
विशेष यह कि जालिकुमार ने
युवावस्था प्राप्तकर पचास कन्याओं
से विवाह किया तथा पचास
करोड़ का दहेज मिला।
जालि मुनि ने भी बारह अंगों का
ज्ञान सीखा, सोलह वर्ष की
दीक्षा पर्याय का पालन किया,
शेष सब जैसे गौतम कुमार की
तरह यावत् शत्रुंजय पर्वत
पर जाकर सिद्ध हुए।
इसी प्रकार मयालि कुमार
उवयालि कुमार, पुरुषसेन
और वारिसेन का वर्णन
जानना चाहिये।

इसके बाद पूर्व में वर्णित गौतम कुमार की तरह उनके एक तेजस्वी पुत्र का जन्म हुआ, जिसका नाम 'जालि कुमार' रखा गया। जब वह युवावस्था को प्राप्त हुआ, तब उसका विवाह पचास कन्याओं के साथ किया गया और उन्हें पचास-पचास करोड़ सोनैया आदि का दहेज मिला।

एक समय भगवान् अरिष्टनेमि वहां पधारे। उनकी अमोघ वाणी द्वारा धर्मोपदेश सुनकर जालि कुमार को संसार से विरक्ति हो गई। माता पिता की आज्ञा लेकर उन्होंने अर्हन्त अरिष्टनेमि के पास प्रव्रज्या दीक्षा अंगीकार की। उन्होंने बारह अंगों का अध्ययन किया और १६ वर्ष पर्यन्त श्रमण दीक्षा पर्याय पाली।

फिर गौतम कुमार की तरह इन्होंने भी संलेखना आदि करके शत्रुंजय पर्वत पर एक मास का संथारा किया और सब कर्मों से मुक्त होकर सिद्ध हुए।

इसी प्रकार मयालिकुमार २ उवयालि कुमार ३, पुरुष सेन कुमार ४, और वारिसेन कुमार ५, के जीवन वर्णन भी समझने

[मूल सूत्र पाठ]	[संस्कृत छाया]
एवं पज्जुण्णे वि	एवं प्रद्युम्नोऽपि,
णवरं कण्हे पिया, रुप्पिणी माया।	विशेषः कृष्णः पिता रुक्मिणी माता।
एवं संबे वि णवरं जंबवई माया।	एवं साम्बः अपि विशेषः जाम्बवती माता।
एवं अणिरुद्धे वि णवरं पज्जुण्णे पिया, वेदब्भी माया!	एवं अनिरुद्धोऽपि विशेषः प्रद्युम्नः पिता वैदर्भी माता।
एवं सच्चणेमी, णवरं समुद्दविजए पिया सिवा माया।	एवं सत्यनेमिः विशेषः समुद्रविजयः पिता शिवा माता
एवं दढ़णेमी वि।	एवं दृढनेमिरपि।
सव्वे एगगमा चउत्थस्स वग्गस्स णिक्खेवओ।	सर्वाणि (अध्ययनानि) एकगमानि चतुर्थस्य वर्गस्य निक्षेपकः।[23]

इति चतुर्थः वर्गः

पंचमः वर्गः

सूत्र १

जइ णं भंते ! समणेणं जाव संपत्तेणं चउत्थस्स वग्गस्स अयमट्ठे पण्णत्ते, पंचमस्स णं भंते ! वग्गस्स अन्तगडदसाणं समणेणं जाव संपत्तेणं के अट्ठे पण्णत्ते ?	यदि खलु भदन्त ! श्रमणेन यावत् संप्राप्तेन चतुर्थस्य वर्गस्य अयमर्थः प्रज्ञप्तः, पंचमस्य भदन्त ! वर्गस्य अन्तकृद्दशानां श्रमणेन यावत् संप्राप्तेन कोऽर्थः प्रज्ञप्तः ?

[हिन्दी शब्दार्थ]

इसी प्रकार छठे प्रद्युम्न कुमार
का वर्णन भी जानना चाहिए।
विशेष—कृष्ण पिता और रुक्मिणी
देवी माता है।
इसी प्रकार साम्ब कुमार भी,
विशेष—जाम्बवती माता है।
ये दोनों श्री कृष्ण के पुत्र थे।
इसी प्रकार अनिरुद्धकुमार का भी
है विशेष यह है कि प्रद्युम्न पिता और
वैदर्भी उसकी माता है।
इसी प्रकार वर्णन सत्यनेमि कुमार का है
विशेष है—समुद्र विजय पिता और
शिवा देवी माता।
इसी प्रकार दृढनेमी का हाल भी
समझना। ये सभी अध्ययन एक सरीखे
हैं। इस प्रकार हे जम्बू ? चौथे
वर्ग का प्रभु ने यह भाव कहा है।

[हिन्दी अर्थ]

चाहिये। ये सभी 'वसुदेव' जी के पुत्र एवं 'धारिणी' रानी के अंगजात थे।

इसी तरह छठे प्रद्युम्न कुमार का जीवन चरित्र भी जानना चाहिये। केवल अन्तर इतना जानना कि इनके 'श्री कृष्ण' पिता और 'रुक्मिणी' माता थी।

ऐसे ही सातवें शाम्ब कुमार का जीवन वर्णन समझना। केवल अन्तर इतना कि इनके पिता 'श्री कृष्ण' एवं माता 'जाम्बवती' थी।

इसी प्रकार आठवें अध्ययन में 'अनिरुद्ध कुमार' का जीवन वर्णन समझना चाहिये इनके पिता प्रद्युम्न कुमार' और माता 'वदर्भी' थी।

ऐसे ही नवमें अध्ययन में 'सत्यनेमी कुमार' और दशवें अध्ययन में 'दृढनेमी कुमार' का वर्णन समझना चाहिये। इनमें विशेष यह कि 'समुद्र विजय' थी इनके पिता थे और 'शिवा' इनकी माता थी।

ये सब अध्ययन समान वर्णन वाले हैं यह चौथे वर्ग का निक्षेपक है।[२३]

श्री सुधर्मा—"इस प्रकार हे जम्बू ! दस अध्ययनों वाले इस चौथे वर्ग का श्रवण यावत् मोक्ष प्राप्त प्रभु ने यह अर्थ कहा है।"

इति चतुर्थ वर्ग

पंचम वर्ग

सूत्र १

यदि भगवन् ! श्रमण भगवान
यावत् मुक्ति प्राप्त प्रभु ने
चौथे वर्ग का यह भाव कहा है,तो
हे भगवन् ! अन्तकृतदशासूत्र
के पंचमवर्ग का श्रमण
यावत् मुक्ति प्राप्त प्रभु ने
क्या अर्थ कहा है ?

श्री जम्बू स्वामी—"हे भगवन् ! श्रमण यावत् मुक्ति प्राप्त प्रभु ने चौथे वर्ग का यह भाव फरमाया है तो अन्तगडदशा के पंचम वर्ग का श्रमण यावत् मुक्ति प्राप्त प्रभु ने क्या अर्थ कहा है ?"

आर्य सुधर्मा—"हे जम्बू ! इस प्रकार निश्चय ही श्रमण यावत् मुक्ति प्राप्त प्रभु ने

[मूल सूत्र पाठ]	[संस्कृत छाया]
एवं खलु जम्बू !	एवं खलु जम्बू !
समणेणं जाव संपत्तेण	श्रमणेन यावत् संप्राप्तेन
पंचमस्स वग्गस्स दस	पंचमस्य वर्गस्य दशानि
अज्झयणा पण्णत्ता । तं जहा—	अध्ययनानि प्रज्ञप्तानि । तानि यथा—
पउमावई य गोरी,	पद्मावती च गौरी,
गंधारी लक्खणा सुसीमा य ।	गांधारी लक्ष्मणा सुषीमा च ।
जंववई सच्चभामा	जाम्बवती सत्यभामा
रुप्पिणी मूलसिरी मूलदत्ता य।।	रुक्मिणी मूलश्रीः मूलदत्ता च ।
जइणं भन्ते ! समणेणं	यदि खलु भदन्त ? श्रमणेन
जाव संपत्तेणं	यावत् संप्राप्तेन
पंचमस्स वग्गस्स दस	पंचमस्य वर्गस्य दशानि
अज्झयणा पण्णत्ता ।	अध्ययनानि प्रज्ञप्तानि ।
पढमस्स णं भंते ! अज्झयणस्स	प्रथमस्य खलु भदन्त ! अध्ययनस्य
समणेणं जाव संपत्तेणं	श्रमणेन यावत् संप्राप्तेन
के अट्ठे पण्णत्ते ?	कोऽर्थः प्रज्ञप्तः ?

सूत्र २

एवं खलु जंबू !	एवं खलु जम्बू ?
तेणं कालेणं तेणं समयेणं	तस्मिन् काले तस्मिन् समये
वारवई णामं णयरी होत्था,	द्वारावति नामा नगरी आसीत्,
जहा पढमे,	यथा प्रथमे,
जाव कण्हे वासुदेवे आहेवच्चं	यावत् कृष्णः वासुदेवः आधिपत्यं
जाव विहरइ ।	यावत् विहरति ।
तस्स णं कण्हस्स वासुदेवस्स	तस्य खलु कृष्णस्य वासुदेवस्य
पउमावई णामं देवी होत्था,	पद्मावती नाम देवी आसीत् ,
वण्णओ ।	वर्ण्या ।
तेणं कालेणं तेणं समएणं	तस्मिन् काले तस्मिन् समये

[हिन्दी शब्दार्थ]

इस प्रकार हे जम्बू ?
श्रमण यावत् मुक्ति प्राप्त प्रभु ने
पंचम वर्ग के दस अध्याय कहे हैं
वे इस प्रकार हैं—
पद्मावती और गौरी और
गांधारी लक्ष्मणा और सुसीमा
जाम्बवती सत्यभामा
रुक्मिणी मूलश्री और मूलदत्ता।
यदि हे भगवन्! श्रमण
यावत् मुक्ति को प्राप्त प्रभु ने
पंचम वर्ग के दस
अध्याय कहे हैं।
तो हे भगवन्! प्रथम अध्ययन का
श्रमण यावत् सम्प्राप्त प्रभु ने
क्या अर्थ कहा है ?

[हिन्दी अर्थ]

पंचम वर्ग के दश अध्ययन कहे हैं, जो इस प्रकार हैं "१ पद्मावती, २ गौरी, ३ गांधारी, ४ लक्ष्मणा, ५ सुसीमा देवी, ६ जाम्बवती, ७ सत्यभामा, ८ रुक्मिणी, ९ मूलश्री, १० मूलदत्ता।"

श्री जम्बू स्वामी—"पूज्य! श्रमण यावत् मुक्ति प्राप्त प्रभु ने पंचम वर्ग के दश अध्ययन कहे हैं, तो प्रथम अध्ययन का श्रमण यावत् मुक्ति प्राप्त प्रभु महावीर ने क्या अर्थ कहा है?"

सूत्र २

इस प्रकार हे जम्बू!
उस काल उस समय में
द्वारिका नाम की नगरी थी,
जैसे पहले अध्याय में कहा है,
यावत् वहाँ कृष्ण वासुदेव
राज्य कर रहे थे।
उस कृष्ण वासुदेव की
पद्मावती नाम की रानी थी,
जो वर्णन करने योग्य थी।
उस काल उस समय में अर्हन्

श्री सुधर्मा स्वामी—"इस प्रकार हे जम्बू! उस काल उस समय में द्वारिका नाम की एक नगरी थी, जिसका वर्णन प्रथम अध्ययन में किया जा चुका है। यावत् श्री कृष्ण वासुदेव वहां राज्य कर रहे थे। श्री कृष्ण वासुदेव की पद्मावती नाम की महारानी थी, जो अत्यन्त सुकुमार सुरूपा, और वर्णन करने योग्य थी।

उस काल उस समय में अरिहन्त अरिष्टनेमि यावत् तीर्थंकर परम्परा से

[मूल सूत्र पाठ]	[संस्कृत छाया]
अरहा अरिट्ठणेमी समोसढ़े जाव विहरइ ।	अर्हन् अरिष्टनेमिः समवसृत : यावत् विहरति ।
कण्हे णिग्गए जाव पज्जुवासइ ।	कृष्णः निर्गतः यावत् पर्युपासते ।
तएणं सा पउमावई देवी इमीसे कहाए लद्धट्ठा समाणी हट्ठतुट्ठहिअआ जहा देवई जाव पज्जुवासइ ।	ततः खलु सा पद्मावती देवी अस्याः कथायाः लब्धार्था सती हृष्टतुष्टहृदया यथा देवकी यावत् पर्युपासते ।
तएणं अरहा अरिट्ठणेमी कण्हस्स वासुदेवस्स पउमावईए देवीए जाव धम्मकहा, परिसा पडिगया । तएणं कण्हे वासुदेवे अरहं अरिट्ठणेमिं वंदइ णमंसइ, वंदित्ता णमंसित्ता एवं वयासी—	ततः खलु अर्हन् अरिष्टनेमिः कृष्णस्य वासुदेवस्य पद्मावत्याः देव्याः यावत् धर्मकथा (कथिता) परिषद् प्रतिगता । ततः खलु कृष्णः वासुदेवः अर्हन्तम् अरिष्टनेमिनम् वंदते नमस्यति वन्दित्वा नमस्यित्वा एवमवदत्—
इमीसे णं भन्ते ! बारवईए णयरीए दुवालस— जोयण आयामाए णवजोयण वित्थिण्णाए जाव पच्चक्खं देवलोग भूयाए किंमूलए विणासे भविस्सइ ? कण्हाए ! अरहा अरिट्ठणेमी कण्हं वासुदेवं एवं वयासी—	अस्याः खलु भदन्त ! द्वारावत्याः नगर्याः द्वादश— योजनायामायाः नवयोजन विस्तीर्णायाः यावत् प्रत्यक्षं देवलोक भूतायाः किंमूलो विनाशो भविष्यति ? हे कृष्ण ! अर्हन् अरिष्टनेमिः कृष्णं वासुदेवमेवमवदत्—

[हिन्दी शब्दार्थ]

अरिष्टनेमी द्वारिका नगरी में
पधारे यावत् (संयम तप से
आत्मा को भावित करते हुए)
विचरने लगे ।

श्री कृष्ण वंदन को निकले यावत् वे श्री नेमनाथ भ० की सेवा करने लगे। उस समय पद्मावती देवी ने भगवान के पधारने की बात सुनी और मन में बहुत प्रसन्न हुई तथा जैसे देवकी महारानी वंदन करने गई वैसे ही पद्मावती भी यावत् श्री नेमनाथ भगवानकी सेवा करने लगी। तब अरिहंत अरिष्टनेमी ने कृष्ण वासुदेव और पद्मावती देवी आदि के सम्मुख धर्म कथा कही, सभासद् कथा सुनकर चले गये। तदनन्तर कृष्ण वासुदेव भ० श्रीनेमिनाथ को वन्दना नमस्कार करते हैं, वंदना नमस्कार करके इस प्रकार बोले-हे पूज्य ! इस बारह योजन लम्बी नौ योजन फैली हुई प्रत्यक्ष देवलोक के समान द्वारिका नगरी का किस कारण से विनाश होगा ? कृष्णादि को सम्बोधित कर भ० अरिष्टनेमी ने कृष्ण वासुदेव को इस प्रकार कहा—

[हिन्दी अर्थ]

विचरते हुए द्वारिका नगरी मे पधारे। श्री कृष्ण वदन नमस्कार करने हेतु अपने राज प्रासाद से निकल कर प्रभु के पास पहुँचे यावत् प्रभु अरिष्टनेमि की पर्युपासना करने लगे।

उस समय पद्मावती देवी ने भगवान् के आने की खबर सुनी तो वह अत्यन्त प्रसन्न हुई। वह भी देवकी महारानी के समान धर्मरथ पर आरूढ होकर भगवान् को वदन करने गई। यावत् नेमिनाथ की पर्युपासना करने लगी। अरिहंत अरिष्टनेमि ने कृष्ण वासुदेव, पद्मावती देवी और जन-परिषद् को धर्मोपदेश दिया, धर्मकथा कही धर्मोपदेश एवं धर्मकथा सुनकर जन-परिषद् अपने अपने घर लौट गई।

तब कृष्ण वासुदेव ने भगवान् नेमिनाथ को वदन नमस्कार करके उनसे इस प्रकार पृच्छा की—"हे भगवन् बारह योजन लम्बी और नव योजन चौडी यावत् साक्षात् देवलोक के समान इस द्वारिका नगरी का विनाश किस कारण से होगा ?"

[मूल सूत्र पाठ]	[संस्कृत छाया]
एवं खलु कण्हा ! इमीसे वारवईए णयरीए दुवालसजोयण आयामाए णवजोयण वित्थिण्णाए जाव पच्चक्खं देवलोगभूयाए सुरग्गिदीवायणमूलाए विणासे भविस्सइ।	एवं खलु कृष्ण ! अस्याः द्वारावत्याः नगर्याः द्वादशयोजनायामायाः नवयोजन विस्तृतायाः यावत् प्रत्यक्षं देवलोकभूतायाः सुराग्निद्वैपायनमूलकः विनाशः भविष्यति।

सूत्र ३

तए णं कण्हस्स वासुदेवस्स अरहओ अरिट्ठणेमिस्स अंतिए एयमट्ठं सोच्चा अयमेयारूवे अज्झत्थिए समुप्पण्णे— धण्णा णं ते जालि-मयालि-उवयालि-पुरिससेण-वारिसेण पज्जुण्ण-संब-अणिरुद्ध-दढणेमि-सच्चणेमिप्पभियओ कुमारा जे णं चिच्चा हिरण्णं जाव परिभाइत्ता अरहओ अरिट्ठणेमिस्स अन्तियं मुंडा जाव पव्वइया। अहण्णं अधण्णे अकयपुण्णे रज्जे य जाव अन्तेउरे य माणुस्सएसु य कामभोगेसु मुच्छिए। णो संचाएमि अरहओ अरिट्ठणेमिस्स अन्तिए जाव पव्वइत्तए। कण्हाइ ! अरहा अरिट्ठणेमी	ततः खलु कृष्णस्य वासुदेवस्य अर्हतः अरिष्टनेमिनः अन्तिके एतदर्थं श्रुत्वा अयमेवंरूपः अध्यवसायः समुत्पन्न :— धन्या : खलु ते जालिः, मयालिः उपयालिः, पुरुषसेनः, वारिसेनः प्रद्युम्नः, साम्वः, अनिरुद्धः दृढनेमिः सत्यनेमिः प्रभृतयः कुमाराः ये खलु त्यक्त्वा हिरण्यं यावत् परिभाज्य अर्हतः अरिष्टनेमिनः अन्तिके मुंडाः यावत् प्रव्रजिताः। अहं खलु अधन्यः अकृतपुण्यः राज्ये च यावत् अन्तःपुरे च मानुष्येषु च कामभोगेषु मूर्च्छितः (अस्मि) न संचरामि अर्हतः अरिष्ट नेमेरन्तिके यावत् प्रव्रजितुम्। कृष्ण ! (इति संबोध्य) अर्हन् अरिष्टनेमि

[हिन्दी शब्दार्थ]

हे कृष्ण ! निश्चय ही इस बारह योजन लम्बी तथा नौ योजन फैली हुई प्रत्यक्ष देव लोक के समान द्वारिका नगरी का सुरा, अग्नि और द्वैपायन के कारण विनाश होगा ।

[हिन्दी भाव]

कृष्ण आदि को सबोधित करते हुए *अरिहंत अरिष्ट नेमि प्रभु ने इस प्रकार उत्तर* दिया—"हे कृष्ण ! निश्चय ही बारह योजन लम्बी और नव योजन चौडी यावत् प्रत्यक्ष स्वर्गपुरी के समान इस द्वारिका नगरी का विनाश मदिरा (सुरा), अग्नि और द्वैपायन ऋषि के कोप के कारण से होगा ।"

सूत्र ३

तब कृष्ण वासुदेव को भ०अरिष्टनेमी के पास से (द्वारिका के नाशरूप) इस अर्थ को सुनकर इस प्रकार का मानसिक अध्यवसाय उत्पन्न हुआ-

धन्य हैं वे जालि, मयालि, उपयालि, पुरुषसेन, वारिसेन, प्रद्युम्न, साम्ब, अनिरुद्ध, दृढनेमी सत्यनेमी आदि कुमार।

जिन्होंने स्वर्णादि सम्पत्ति को त्यागकर यावत् देयभाग देकर भगवान अरिष्टनेमी के पास मुंडित हुए यावत् दीक्षा ग्रहण की । मैं निश्चय ही अधन्य हूँ, अकृत-पुण्य हूँ इसलिए कि राज्य, अन्त पुर और मनुष्य सम्बन्धी कामभोगों में मैं मूर्छित हूँ ।

पूज्य भगवान अरिष्टनेमी के पास प्रव्रज्या लेने के लिये नहीं आ रहा हूँ ।

हे कृष्ण ! (यह सम्बोधन कर) भगवान्

अर्हन्त अरिष्टनेमि के श्री मुख से द्वारिका नगरी के विनाश का कारण जानकर श्रीकृष्ण वासुदेव के मन में ऐसा विचार उत्पन्न हुआ कि वे जालि, मयालि, उवयालि, पुरिससेन, वीरसेन प्रद्युम्न, शाम्ब, अनिरुद्ध, दृढनेमि और सत्यनेमि प्रभृति कुमार धन्य हैं जिन्होंने हिरण्यादि सपदा और परिजन छोडकर यावत् देयभाग देकर, नेमिनाथ प्रभु के पास मुंडित हुए यावत् प्रव्रजित हो गये । मैं अधन्य हूँ, अकृत-पुण्य हूँ इसलिये कि राज्य अन्त पुर और मनुष्य सम्बन्धी काम भोगों में मूर्च्छित हूँ, इन्हे त्यागकर भगवान् नेमिनाथ के पास प्रव्रज्या लेने में *समर्थ नहीं* हूँ ।

भगवान् नेमिनाथ प्रभु ने अपने ज्ञान बल से कृष्ण वासुदेव के मन में आये इन विचारों को जान कर आर्तध्यान में डूबे हुए कृष्ण वासुदेव से इस प्रकार कहा—

[मूल सूत्र पाठ]	[संस्कृत छाया]
कण्हं वासुदेवं एवं वयासी—	कृष्णं वासुदेवम् एवमवदत्
से णूणं कण्हा ! तव अयम्	तत् नूनं कृष्ण ! तव अयम्
अज्झत्थिए समुप्पण्णे—	अध्यवसायः समुत्पन्नः—
"धण्णा णं ते जालि जाव पव्वइत्तए!	धन्याः खलु ते जालि यावत् प्रव्रजितुम्
से णूणं कण्हा ! अयमट्ठे समट्ठे ?"	तत् नूनं कृष्ण ! अयमर्थः समर्थः?
'हंता अत्थि' ।३।	हंत अस्ति ।३।

सूत्र ४

"तं णो खलु कण्हा! एवं भूयं वा	तत् न खलु कृष्ण ! एवं भूतं वा
भव्वं वा भविस्सइ वा जण्णं	भव्यं वा भविष्यति वा यत् न
वासुदेवा चइत्ता हिरण्णं जाव	वासुदेवाः त्यक्त्वा हिरण्यं यावत्
पव्वइस्संति ।"	प्रव्रजिष्यन्ति ।
से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ	अथ केनार्थेन भदन्त ! एवमुच्यते
ण एवं भूयं वा जाव पव्वइस्संति ?	न एवं भूतं वा यावत् प्रव्रजिष्यन्ति ?
कण्हाइ ! अरहा अरिट्ठणेमी	कृष्ण ! अर्हन् अरिष्टनेमी
कण्हं वासुदेवं एवं वयासी—	कृष्णं वासुदेवम् एवमवदत्—
एवं खलु कण्हा ! सव्वे वि य णं	एवं खलु कृष्ण ! सर्वेऽपि च खलु
वासुदेवा पुव्वभवे णियाणकडा,	वासुदेवाः पूर्वभवे कृतनिदानाः,
से एएणट्ठेणं कण्हा एवं वुच्चइ-	अथ एतदर्थेन कृष्ण ! एवमुच्यते-
ण एवं भूयं जाव पव्वइस्संति ।४।	न एवं भूतं यावत् प्रव्रजिष्यन्ति ।४।

[हिन्दी शब्दार्थ]	[हिन्दी अर्थ]
अरिष्टनेमीने कृष्ण को इस प्रकार कहा अवश्य ही हे कृष्ण ! तुझे यह मानसिक विचार उत्पन्न हुआ है— कि जालि आदि कुमार धन्य हैं जिन्होंने मुनिव्रत ग्रहण किया है। मैं अधन्य हूं मुनिव्रत नहीं ले पा रहा हू । हे कृष्ण ! क्या यह बात सही है ? श्री कृष्ण ने कहा—हां भगवन् ठीक है ।	"निश्चय ही हे कृष्ण ! तुम्हारे मन में ऐसा विचार उत्पन्न हुआ—'वे जालि मयालि आदि कुमार धन्य हैं जिन्होंने धन वैभव एवं स्वजनों को त्यागकर मुनिव्रत ग्रहण किया और मैं अधन्य हू अकृतपुण्य हू जो राज्य अन्तःपुर और मनुष्य सम्बन्धी काम भोगों में ही गृद्ध हू । मैं प्रभु के पास प्रव्रज्या नहीं ले सकता ।

सूत्र ४

हे कृष्ण ! ऐसा न हुआ है, न होता है और न होगा कि वासुदेव हिरण्यादि छोड़कर यावत् दीक्षा ग्रहण करें । (श्री कृष्ण ने पूछा)—भगवन् ! ऐसा क्यों कहा जाता है कि ऐसा कभी नहीं हुआ और कभी होगा भी नहीं कि यावत् वासुदेव प्रव्रज्या ग्रहण करेंगे ? श्री कृष्ण को सबोधित कर भगवान ने कृष्ण वासुदेव को इस प्रकार कहा— हे कृष्ण ! निश्चय ही सब वासुदेव पूर्व जन्म में निदान किये हुए होते हैं इसलिये कृष्ण ! ऐसा कहा जाता है— कभी ऐसा हुआ नहीं कि यावत् वासुदेव प्रव्रज्या दीक्षा ग्रहण करेंगे ।	हे कृष्ण ! क्या यह बात सही है ?" श्री कृष्ण—"हां भगवन् ! आपने जो कहा वह सभी यथार्थ है । आप सर्वज्ञ हैं । आप से कोई बात छिपी हुई नहीं है । " प्रभु ने फिर कहा—"तो हे कृष्ण ! ऐसा कभी हुआ नहीं, होता नही और होगा भी नही कि वासुदेव अपने भव मे धन धान्य-स्वर्ण आदि सम्पत्ति छोड़कर मुनिव्रत ले लें वासुदेव दीक्षा लेते ही नहीं, ली नहीं एवं भविष्य में कभी लेंगे भी नहीं ।" श्री कृष्ण—"भगवन् ! ऐसा क्यों कहा जाता है कि ऐसा कभी हुआ नही होता नहीं और होगा भी नहीं । इसका क्या कारण है ? " अर्हन्त नेमिनाथ ने कृष्ण वासुदेव को इसप्रकार उत्तर दिया—"हे कृष्ण ! निश्चय ही सभी वासुदेव पूर्व भव में निदान कृत (नियाणा करने वाले) होते हैं इसलिए मैं ऐसा कहता हू ! कि ऐसा कभी हुआ नही, होता नहीं और होगा भी नहीं कि वासुदेव कभी अपनी सम्पत्ति को छोड़कर प्रव्रज्या अंगीकार करें ।"

[मूल सूत्र पाठ]	[संस्कृत छाया]

सूत्र ५

तए णं से कण्हे वासुदेवे अरहं	ततः खलु सः कृष्णः वासुदेवः अर्हन्तम्
अरिट्ठणेमिं एवं वयासी—	अरिष्टनेमिनम् एवमवादीत्–
अहं णं भन्ते! इओ कालमासे	अहं खलु भदन्त ! इतः कालमासे
कालं किच्चा कहिं गमिस्सामि ?	कालं कृत्वा कुत्र गमिष्यामि ?
कहिं उववज्जिस्सामि ?	कुत्र च उत्पत्स्ये ?
तए णं अरहा अरिट्ठणेमी कण्हं	ततः खलु अर्हन् अरिष्टनेमी कृष्णं
वासुदेवं एवं वयासी—	वासुदेवम् एवम् अवादीत्–
एवं खलु कण्हा ! तुमं बारवईए	एवं खलु कृष्ण ! त्वं द्वारावत्यां
णयरीए सुरग्गिदीवायण-कोव-	नगर्यां सुराग्निर्द्वैपायन कोप–
णिद्दड्ढाए अम्मापिइणियगविप्पहूणे	निर्दग्धायाम् अम्बापितृकनिजकविप्रहीनः
रामेण बलदेवेण सद्धिं दाहिणवेयालिं	रामेण बलदेवेन सार्द्धं दक्षिणवेलाया
अभिमुहे जोहिट्ठिल्लपामोक्खाणं	अभिमुखे युधिष्ठिर प्रमुखानाम्
पंचण्हं पंडवाणं पंडुरायपुत्ताणं	पंचानां पाण्डवानां पाण्डुराजपुत्राणां
पासं पंडुमहुरं संपत्थिए	पार्श्वं पांडुमथुरां संप्रस्थितः
कोसंववणकाणणे णग्गोहवर-	कोशाम्बवन कानने न्यग्रोधवर
पायवस्स अहे पुढविसिलापट्टए	पादपस्य अधः पृथ्वी शिलापट्टके
पीयवत्थपच्छाइयसरीरे	पीतवस्त्रप्रच्छादितशरीरः
जरकुमारेणं त्तिक्खेणं	जरकुमारेण तीक्ष्णेन
कोदंड-विप्पमुक्केणं इसुणा	कोदंड विप्रमुक्तेन इषुणा
वामे पाए विद्धे समाणे कालमासे	वामे पादे विद्धः सन् कालमासे
कालं किच्चा तच्चाए	कालं कृत्वा तृतीयस्यां
वालुयप्पभाए पुढवीए जाव उववज्जिहिसि	वालुकाप्रभायां पृथिव्यां यावत् उत्पत्स्यसे

[हिन्दी शब्दार्थ]

सूत्र ५

तब कृष्ण वासुदेव ने भगवान् अरिष्टनेमी को इस प्रकार निवेदन किया— हे भगवन् ! मैं यहाँ से काल के समय काल करके कहाँ जाऊँगा ? तथा कहाँ उत्पन्न होऊँगा ? तदनन्तर भगवान् अरिष्टनेमी ने कृष्ण वासुदेव को इस प्रकार कहा— इस प्रकार हे कृष्ण ! तुम सुरा, अग्नि और द्वैपायन के क्रोध से द्वारिका नगरी के जलने पर माता-पिता और स्वजनों से विमुक्त होकर राम बलदेव के साथ दक्षिण

समुद्र तट की ओर युधिष्ठिर आदि पांडुराज के पुत्र पाँचों पाण्डवों के पास पांडुमथुरा को जाते हुए कोशांबवन-उद्यान में वटवृक्ष के नीचे पृथ्वी शिला के पट्ट पर पीताम्बर ओढ़े हुए (सोओगे) तब जराकुमार के द्वारा धनुष से छोड़े हुए तीक्ष्ण बाण से बायें पैर में बींधे हुए होकर काल के समय काल करके तीसरी बालुका प्रभा पृथ्वी में उत्पन्न होवोगे ।

[हिन्दी भाष]

तब कृष्ण वासुदेव अर्हन्त अरिष्टनेमि को इस प्रकार बोले—"हे भगवन् ! यहाँ से काल के समय काल करके मैं कहाँ जाऊँगा, कहाँ उत्पन्न होऊँगा ?"

इस पर अर्हन्त नेमिनाथ ने कृष्ण वासुदेव को इस तरह कहा—" हे कृष्ण ! तुम सुरा, अग्नि और द्वायन [illegible] क्रोध के कारण इस द्वारिका नगरी के जल कर नष्ट हो जाने पर और अपने माता पिता एव स्वजनों का वियोग हो जाने पर रामबलदेव के साथ दक्षिणी समुद्र के तट की ओर पाण्डुराजा के पुत्र युधिष्ठिर, भीम, अर्जुन, नकुल और सहदेव इन पाचों पांडवों के समीप पाण्डु मथुरा की ओर जाओगे । रास्ते में विश्राम लेने के लिए कौशाम्ब वन-उद्यान में अत्यन्त विशाल एक वटवृक्ष के नीचे, पृथ्वी शिलापट्ट पर पीताम्बर ओढकर तुम सो जाओगे । उस समय मृग के भ्रम में जराकुमार द्वारा चलाया हुआ तीक्ष्ण तीर तुम्हारे बाएं पर में लगेगा । इस तीक्ष्ण तीर से बिद्ध होकर तुम काल के समय काल करके बालुकाप्रभा नामक तीसरी पृथ्वी में जन्म लोगे । प्रभु के श्रीमुख से अपने आगामी भव की यह बात सुनकर कृष्ण वासुदेव खिन्न मन होकर आर्त्त ध्यान करने लगे ।

[मूल सूत्र पाठ]	[संस्कृत छाया]
तएणं कण्हे वासुदेवे अरहओ	ततः कृष्णो वासुदेवः
अरिट्ठणेमिस्स अंतिए	अर्हंतः अरिष्टनेमिनः अंतिके
एयमट्ठं सोच्चा णिसम्म	एतमर्थं श्रुत्वा निशम्य
ओहय जाव झियाइ ।	अपहतो यावत् ध्यायति ।
"कण्हाइ !" अरहा अरिट्ठणेमी	कृष्ण ! अर्हन् अरिष्टनेमिः
कण्हं वासुदेवं एवं वयासी—	कृष्णं वासुदेवं एवमवदत्—
"मा णं तुमं देवाणुप्पिया !	मा खलु त्वं देवानुप्रिय !
ओहय जाव झियाहि ।	अवहत यावत् ध्यायस्व ।
एवं खलु तुमं देवाणुप्पिया !	एवं खलु त्वं देवानुप्रिय !
तच्चाओ पुढवीओ उज्जलियाओ	तृतीयस्याः पृथिव्याः उज्ज्वलितायाः
अणंतरं उव्वट्टित्ता इहेव	अनन्तरं उद्वृत्य इहैव जम्बूद्वीपे भारते
जंबूद्दीवे भारहेवासे	वर्षे आगमिष्यन्त्याम् उत्सर्पिण्याम्
आगमिस्साए उस्सप्पिणीए	
पुंडेसु जणवएसु सयदुवारे	पुण्ड्रेषु जनपदेषु शतद्वारे (नगरे)
वारसमे अममे णामं अरहा	द्वादशमो अममो नाम अर्हन्
भविस्ससि । तत्थ तुमं बहूइं वासाइं	भविष्यसि । तत्र त्वं बहूनि वर्षाणि
केवलपरियायं पाउणित्ता सिज्झिहिसि"	केवलपर्यायं पालयित्वा सेत्स्यसि ।

सूत्र ७

तएणं से कण्हे वासुदेवे अरहओ	ततः सः कृष्णः वासुदेवः
अरिट्ठणेमिस्स अन्तिए	अर्हतः अरिष्टनेमिनः अन्तिके
एयमट्ठं सोच्चा णिसम्म हट्ठतुट्ठ०	एतदर्थं श्रुत्वा निशम्य हृष्टतुष्ट०
अप्फोडइ, अप्फोडित्ता वग्गइ,	आस्फोटयति, आस्फोट्य वल्गति,
वग्गित्ता तिवइं छिंदइ,	वल्गित्वा त्रिपदीं छिनत्ति,
छिंदित्ता सीहणायं करेइ, करित्ता	छित्वा सिंहनादं करोति, कृत्वा
अरहं अरिट्ठणेमि वंदइ णमंसइ,	अर्हन्तम् अरिष्टनेमिनम् वन्दते नमस्यति
वंदित्ता णमंसित्ता तमेव	वन्दित्वा नमस्यित्वा तदेव
अभिसेक्कं हत्थिरयणं दुरुहइ	आभिषेक्यं हस्तिरत्नं दूरोहति,

[हिंदी भावार्थ]

तब श्री कृष्ण वासुदेव
भगवान् अरिष्टनेमी के पास से
इस बात को सुनकर एवं धारण कर
उदास मन होकर आर्त्तध्यान करने लगे।
कृष्ण को सम्बोधित कर भगवान
अरिष्टनेमी ने कृष्ण वासुदेव को ऐसे कहा,
हे देवानुप्रिय ! तुम उदास
होकर आर्त्तध्यान मत करो।
निश्चय ही हे देवानुप्रिय !
तीसरी पृथ्वी की उत्कट वेदना के अनन्तर
(वहां से) निकलकर यहां ही जम्बूद्वीप
में भारतवर्ष में आनेवाली उत्सर्पिणी
काल में पौण्ड्र जनपद में शतद्वार नगर
में बारहवें अमम नामक अर्हन्त बनोगे।
वहां पर बहुत वर्षों तक केवलीपर्याय
का पालन कर सिद्ध बुद्ध मुक्त बनोगे।

[हिन्दी अर्थ]

तब अर्हन्त अरिष्टनेमि पुनः इस प्रकार बोले—"हे देवानुप्रिय ! तुम खिन्नमन होकर आर्त्तध्यान मत करो। निश्चय से हे देवानुप्रिय ! कालान्तर में तुम तीसरी पृथ्वी से निकल कर इसी जम्बूद्वीप के भरत क्षेत्र में आने वाले उत्सर्पिणी काल में पुण्ड्र जनपद के शत द्वार नाम के नगर में 'अमम' नाम के बारहवें तीर्थंकर बनोगे। वहां बहुत वर्षों तक केवली पर्याय का पालन कर तुम सिद्ध-बुद्ध-मुक्त होओगे।

सूत्र ७

तदनन्तर वह कृष्ण वासुदेव भगवान
अरिष्टनेमि के पास से यह बात सुनकर
समझकर प्रसन्न होते हुए भुजाओं पर
ताल ठोकने लगे, ताल ठोक कर जयनाद
करते हैं, जयनाद करके समवसरण
में त्रिपदी का छेदन करते हैं, पीछे
हटकर सिंहनाद करते हैं सिंहनाद करके
भगवान अरिष्टनेमि को वन्दना
नमस्कार करते हैं वन्दना नमस्कार
करके उसी अभिषेक योग्य हाथी पर चढ़े,

अर्हत प्रभु के मुखारविन्द से अपने भविष्य का यह वृत्तान्त सुनकर कृष्ण वासुदेव बड़े प्रसन्न हुए, और अपनी भुजा पर ताल ठोकने लगे। जयनाद करके त्रिपदी का छेदन किया। थोड़ा पीछे हटकर सिंहनाद किया और फिर भगवान् नेमिनाथ को वंदन नमस्कार करके अपने अभिषेक-योग्य हस्तिरत्न पर आरूढ़ हुए और द्वारिका नगरी के मध्य से होते हुए अपने राजप्रासाद में आये। अभिषेक योग्य हाथी से नीचे उतरे और फिर जहां बाहर की उपस्थान शाला थी और

[हिन्दी शब्दार्थ]

आरूढ होकर जहाँ द्वारिका नगरी है तथा जहाँ अपना प्रासाद है वहाँ आते हैं। आभिषेक्य हस्तिरत्न से उतरते हैं, उतरकर जहाँ बाहरी उपस्थान शाला तथा जहाँ स्वय का सिंहासन है वहाँ पर आते हैं, वहाँ आकर श्रेष्ठ सिंहासन पर पूर्व की तरफ मुख करके विराजमान होते हैं, बैठ कर आज्ञाकारी पुरुषों को बुलाते हैं, बुलाकर कहते हैं—

हे देवानुप्रियो! तुम लोग जाओ व द्वारिका में शृ गाटक यावत् राजमार्ग पर घोषणा करते हुए इस प्रकार कहो—

हे द्वारिकावासी देवानुप्रियो ! बारह योजन में फैली हुई प्रत्यक्ष देवलोक के समान इस द्वारिका नगरी का सुरा अग्नि व द्वैपायन के कारण नाश होगा, इस कारण हे देवानुप्रियो ! जो भी कोई इस द्वारिका पुरी में, नगरी का राजा हो या युवराज हो अधिपति हो, श्रेष्ठ तल वाला सैनिक हो, माडबिक हो, कौटुम्बिक (घरेलू नौकर) हो, धनी हो, सेठ हो, रानी हो, कुमार हो, कुमारी हो, भगवान अरिष्ट नेमिनाथ के पास मु डित यावत् दीक्षा लेना चाहता हो, उसको कृष्ण वासुदेव विदा करते हैं

[हिन्दी अर्थ]

जहाँ अपना सिंहासन था वहां आये। वे सिंहासन पर पूर्वाभिमुख विराजमान हुए फिर अपने आज्ञाकारी पुरुषों राज सेवकों को बुलाकर इस प्रकार बोले—"हे देवानुप्रियो! तुम द्वारिका नगरी शृ गाटक यावत् चतुष्पथ आदि सभी राजमार्गों पर जाकर मेरी इस आज्ञा को प्रचारित करो कि—

"हे द्वारिकावासी नगरजनों! इस बारह योजन लम्बी यावत् प्रत्यक्ष स्वर्गपुरी के समान द्वारिका नगरी का सुरा, अग्नि एव द्वैपायन के कोप के कारण नाश होगा, इसलिये हे देवानुप्रियो ! द्वारिका नगरी में जिसकी भी इच्छा हो, चाहे वह राजा हो, युवराज हो, ईश्वर (स्वामी या मन्त्री) हो, तलवर (राजा का प्रिय अथवा राजा के समान) हो, माडम्बिक (छोटे गांव का स्वामी) हो, कौटुम्बिक (दो तीन कुटुम्बों का स्वामी) हो, इभ्य सेठ हो, रानी हो, कुमार हो, कुमारी हो, राजरानी हो, राजपुत्री हो, इन में से जो भी प्रभु नेमिनाथ के पास मु डित होकर यावत् दीक्षा लेना चाहता हो, उसको कृष्ण वासुदेव ऐसा करने की सहर्ष आज्ञा देते हैं। दीक्षार्थी के पीछे उसके आश्रित सभी कुटुम्बीजनों की भी श्री कृष्ण यथा योग्य व्यवस्था करेंगे और बड़े ऋद्धि सत्कार के साथ उसका दीक्षा-महोत्सव भी वे ही सपन्न करेंगे।" "इस प्रकार दो तीन बार घोषणा को दोहरा कर पुन: मुझे सूचित करो।"

[हिन्दी शब्दार्थ]	[हिन्दी अर्थ]
और दीक्षार्थी के पीछे कुटुम्बीजनों को भी कृष्ण यथा योग्य व्यवस्था से पूर्ण ऋद्धिसत्कार के साथ उसका निष्क्रमण (दीक्षा सत्कार) करायेंगे दूसरी बार तीसरी बार भी ऐसी घोषणा करो, घोषणा करके मेरी आज्ञा को वापस अर्पण करो तब उन आज्ञाकारी पुरुषों ने घोषणा कर आज्ञा वापस लौटाई।	कृष्ण का यह आदेश पाकर उन आज्ञाकारी राज पुरुषों ने वैसी ही घोषणा दो तीन बार करके लौट कर इसकी सूचना श्री कृष्ण को दी।

सूत्र ८

तदनन्तर वह पद्मावती महारानी भगवान् अरिष्टनेमि के पास धर्मकथा सुनकर, समझकर अत्यन्त प्रसन्न हृदय होती हुई भगवान नेमिनाथ को वन्दना नमस्कार करती है, वन्दना नमस्कार करके इस प्रकार बोली— हे भगवन्! निर्ग्रन्थ प्रवचन पर मैं श्रद्धा रखती हू जैसा आप कहते हैं (वैसा ही है)। विशेष— हे देवानुप्रिय! कृष्ण वासुदेव को पूछूंगी, तदनन्तर मैं देवानुप्रिय के पास मुंडित यावत् दीक्षा ग्रहण करूंगी। (प्रभु ने कहा-) देवानुप्रिय! जैसा सुख हो करो धर्म कार्य में विलम्ब मत करो	इसके बाद वह पद्मावती महारानी भगवान् नेमिनाथ से धर्मोपदेश सुनकर एवं उसे हृदय में धारण करके बड़ी प्रसन्न हुई हृदय उसका प्रफुल्लित हो उठा। यावत् वह प्रभु नेमिनाथ को भावपूर्ण हृदय से वन्दना नमस्कार कर इस प्रकार बोली— "हे पूज्य! निर्ग्रन्थ प्रवचन पर मैं श्रद्धा करती हूं जैसा आप कहते हैं वह तत्त्व वैसा ही है। आपका धर्मोपदेश यथार्थ है। हे भगवन्! मैं कृष्ण वासुदेव की आज्ञा लेकर फिर देवानुप्रिय के पास मुण्डित होकर दीक्षा ग्रहण करना चाहती हूं।" प्रभु ने कहा जैसा तुम्हारी आत्मा को सुख हो वैसा करो। हे देवानुप्रिय! धर्म-कार्य में विलम्ब मत करो।"

सूत्र ६

[मूल सूत्र पाठ]	[संस्कृत छाया]
तएणं सा पउमावई देवी धम्मियं	ततः खलु सा पद्मावती देवी धार्मिकं
जाणप्पवरं दुरूहइ	यानप्रवरं दूरोहति,
दुरुहित्ता जेणेव वारवई णयरी	दूरुह्य यत्रैव द्वारावती नगरी
जेणेव सए गिहे तेणेव उवागच्छइ,	यत्रैव स्वकं गृहं तत्रैव उपागच्छति,
उवागच्छित्ता धम्मियाओ जाणप्पवराओ	उपागत्य धार्मिकात् यानप्रवरात्
पच्चोरुहइ, पच्चोरुहित्ता जेणेव	प्रत्यवरोहति, प्रत्यवरुह्य यत्रैव
कण्हे वासुदेवे तेणेव उवागच्छइ,	कृष्णः वासुदेवः तत्रैव उपागच्छति,
उवागच्छित्ता करयल जाव कट्टु	उपागत्य करयुगलं (करतल) यावत्
कण्हं वासुदेवं एवं वयासी—	कृत्वा कृष्णं वासुदेवम् एवमवादीत्—
इच्छामि णं देवाणुप्पिया !	इच्छामि खलु देवानुप्रियाः!
अब्भणुण्णायासमाणी अरहओ	युष्माभिरभ्यनुज्ञाता सती अर्हतः
अरिट्ठणेमिस्स अंतिए मुंडा जाव	अरिष्टनेमेः अन्तिके मुंडा यावत्
पव्वयामि । (कण्हे–)	प्रव्रजामि । (कृष्णः—)
अहासुहं देवाणुप्पिए !	यथासुखं देवानुप्रिये !
तएणं से कण्हे वासुदेवे कोडुंविए	ततः खलु सः कृष्णः वासुदेवः कौटुंबिक
पुरिसे सद्दावेइ, सद्दावित्ता एवं वयासी–	पुरुषान् शब्दयति, शब्दयित्वैवमवदत्
खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया !	"क्षिप्रमेव भो देवानुप्रियाः !
पउमावईए देवीए महत्थं	पद्मावत्याः देव्या : महार्थं
णिक्खमणाभिसेयं उवट्ठवेइ,	निष्क्रमणाभिषेकम् उपस्थापयत,
उवट्ठवित्ता एयं आणत्तियं पच्चप्पिणह ।	उपस्थाप्य, एतामाज्ञप्तिकां प्रत्यर्पयत,
तएणं ते कोडुंविया जाव पच्चप्पिणंति।	ततः ते कौटुम्बिकाः यावत् प्रत्यर्पयन्ति

[हिन्दी शब्दार्थ]

सूत्र ६

प्रभु के ऐसा कहने के बाद पद्मावतीदेवी धार्मिक यानप्रवर पर आरूढ होती है, आरूढ होकर जहां द्वारिका नगरी है जहां स्वयं का घर है वहां आती है, आकर धार्मिक श्रेष्ठ रथ से उतरती है, उतरकर जहां कृष्ण वासुदेव थे वहां आती है, वहां आकर दोनों हाथ जोडकर कृष्ण वासुदेव को इस प्रकार बोली- हे देवानुप्रिय! आपकी आज्ञा हो तो मैं अर्हन्त नेमिनाथ के पास मुंडित होकर दीक्षा ग्रहण करना चाहती हूँ। (कृष्ण ने कहा-) हे देवानुप्रिये! जैसे सुख हो वैसा करो। तब कृष्ण वासुदेव ने आज्ञाकारियों को बुलाया, बुलाकर इस प्रकार कहा— "हे देवानुप्रियो! शीघ्र ही पद्मावती महारानी के लिए बहुमूल्य दीक्षा महोत्सव की तैयारी करो, तैयारी कर, इस आज्ञापूर्ति की सूचना मुझे वापस करो।" तब आज्ञाकारियों ने वैसा ही किया।

[हिन्दी अर्थ]

नेमिनाथ प्रभु के ऐसा कहने के बाद पद्मावतीदेवी धार्मिक श्रेष्ठ रथ पर आरूढ होकर द्वारिका नगरी में अपने घर आकर धार्मिक रथ से नीचे उतरी और जहां पर कृष्ण वासुदेव थे वहां आकर उनको दोनों हाथ जोडकर कृष्ण वासुदेव से इस प्रकार बोली—

"हे देवानुप्रिय! आपकी आज्ञा हो तो मैं अर्हन्त नेमिनाथ के पास मुंडित होकर दीक्षा ग्रहण करना चाहती हूँ।"

कृष्ण ने कहा- "हे देवानुप्रिये! जैसा तुम्हें सुख हो वैसा करो।"

तब कृष्ण वासुदेव ने अपने आज्ञाकारी पुरुषों को बुला कर इस प्रकार आदेश दिया —

"हे देवानुप्रियो! शीघ्र ही महारानी पद्मावती के लिए दीक्षा महोत्सव की विशाल तैयारी करो और तैयारी हो जाने की मुझे वापस सूचना दो।"

तब आज्ञाकारी पुरुषों ने वैसा ही किया और दीक्षा महोत्सव की तैयारी की सूचना उनको दी।

[हिन्दी पद्यानुवाद]

तदनन्तर कृष्णवासुदेव ने पद्मावती
देवी को पट्टे (पाटा) पर बैठाया
बैठाकर एक सौ आठ सुवर्णकलशों से
यावत् दीक्षा सम्बन्धी अभिषेक किया।
अभिषेक करके सर्वविध (सब तरह के)
अलंकारों से उन्हें विभूषित कराया इस
प्रकार सजाकर हजार पुरुषों से उठाई
जाने वाली पालकी पर चढ़ाते हैं,
चढ़ाकर द्वारावती नगरी के
मध्य मध्य भाग से निकले,
निकलकर जहाँ रैवतक पर्वत है तथा
जहाँ सहस्राम्रवन नामक बगीचा है
वहाँ पर आये।
आकर शिविका को रख देते हैं
रखने के बाद पद्मावती देवी
उस शिविका से उतरती है।
तदनन्तर कृष्ण वासुदेव
पद्मावती देवी को आगे करके
जहाँ भगवान् अरिष्ट नेमिनाथ थे वहाँ
आये, आकर
भगवान् नेमिनाथ को तीन बार
दक्षिण तरफ से प्रदक्षिणा करके
वन्दना नमस्कार करते हैं,
वन्दना नमस्कार करके इस प्रकार
बोले— हे पूज्य! यह मेरी प्रधान रानी
पद्मावती नाम की देवी जो कि मुझे इष्ट

[हिन्दी अर्थ]

सूत्र १०

इसके बाद कृष्ण वासुदेव ने पद्मावती-देवी को पट्ट पर बिठाया और एक सौ आठ सुवर्ण-कलशों से उसे स्नान कराया यावत् दीक्षा सम्बन्धी अभिषेक किया।

फिर सभी प्रकार के अलंकारों से उसे विभूषित करके हजार पुरुषों द्वारा उठायी जाने वाली शिविका- (पालकी) में बिठाकर द्वारिका नगरी के मध्य से होते हुए निकले और जहां रैवतक पर्वत और सहस्राम्र उद्यान था वहां आकर पालकी नीचे रखी। तब पद्मावती देवी पालकी से नीचे उतरी।

फिर कृष्ण वासुदेव पद्मावती महारानी को आगे करके भगवान् नेमिनाथ के पास आये और भगवान् नेमिनाथ को तीन बार दक्षिण तरफ से प्रदक्षिणा करके वंदन नमस्कार किया। वन्दन नमस्कार करके इस प्रकार बोले—

"हे भगवन् यह पद्मावती देवी मेरी पटरानी है। यह मेरे लिए इष्ट है कान्त है, प्रिय है, मनोज्ञ है, और मन के अनुकूल चलने वाली है अभिराम (सुन्दर) है। हे भगवन्! यह मेरे जीवन में श्वासोच्छ्वास के समान मुझे प्रिय है, मेरे हृदय को आनन्द देने वाली है।

इस प्रकार का स्त्री रत्न उदुम्बर (गूलर) के पुष्प के समान सुनने के लिए भी दुर्लभ है, तब देखने की तो बात ही क्या है? हे देवानुप्रिय! मैं ऐसी अपनी प्रिय पत्नी की भिक्षा शिष्यणी रूप में आपको देता हूँ। आप उसे स्वीकार करें।"

[मूल सूत्र पाठ]	[संस्कृत छाया]
पिया, मणुण्णा, मणामा,	प्रिया, मनोज्ञा, मनोरमा,
अभिरामा, जीवियऊसासा,	अभिरामा, जीवितोच्छ्वासा,
हिययाणंदजणिया, उंबरपुप्फंविव	हृदयानन्दजनिका, उदम्बरपुष्पमिव
दुल्लहा, सवणयाए किमंग !	दुर्लभा श्रवणतायै किमंग!
पुण पासणयाए ।	पुनर्दर्शनतायै
तएणं अहं देवाणुप्पिया !	ततः खलु अहं देवानुप्रिय!
सिस्सिणी भिक्खं दलयामि,	शिष्या-भिक्षाम् ददामि,
पडिच्छंतु णं देवाणुप्पिया !	प्रतीच्छन्तु खलु देवानुप्रिय !
सिस्सिणीभिक्खं ।	शिष्याभिक्षाम् ।
अहासुहं !	यथासुखम् !
तएणं सा पउमावई देवी	ततः खलु सा पद्मावती देवी
उत्तरपुरच्छिमं दिसिभागं अवक्कमइ	उत्तरपौरस्त्यां दिग्भागम् अवक्राम्यति
अवक्कमित्ता सयमेव आभरणालंकारं	अवक्रम्य स्वयमेव आभरणालंकारम्
ओमुयइ, ओमुइत्ता सयमेव	अवमुंचति, अवमुच्य स्वयमेव
पंचमुट्ठियं लोयं करेइ,	पंचमौष्टिकम् (लुञ्चनं) लोचं करोति
करित्ता जेणेव अरहा अरिट्ठणेमी	कृत्वा यत्रैव अर्हन् अरिष्टनेमी
तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता	तत्रैव उपागच्छति, उपागत्य
अरहं अरिट्ठणेमिं वंदइ णमंसइ,	अर्हन्तम् अरिष्टनेमिनम् वन्दते नमस्यति,
वंदित्ता णमंसित्ता एवं वयासी–	वन्दित्वा नमस्यित्वा एवमवदत्–
आलित्ते णं भन्ते ! जाव धम्म-	आलिप्तो भदन्त ! यावत् धर्मं
माइक्खिउं ।	आख्यातुम् ।

[हिन्दी पद्यानुवाद]

कान्त, प्रिय, मनोज्ञ, मन के अनुकूल चलने वाली होने से सुन्दर है। यह जीवन के

लिए श्वासोच्छ्वास के समान है

हृदय को आनन्द देने वाली है उदम्बर पुष्प के समान जिसका नाम सुनना भी दुर्लभ है तो देखने की तो बात ही क्या?

हे देवानुप्रिय! मैं उस प्रिय पत्नी की शिष्यिणी रूप भिक्षा (आपको) देता हूँ

हे देवानुप्रिय! आप शिष्यिणी रूप भिक्षा को ग्रहण करें।

"जैसा सुख हो वैसा करो।"

तदनन्तर वह पद्मावती देवी ईशान कोण में जाती है तथा वहाँ जाकर

खुद ही आभूषण एवं अलकारों को उतारती है उतार कर खुद ही

पाँच मुट्ठी का लोंच करती है

करके जहाँ भगवान अरिष्टनेमी थे

वहाँ आई, आकर भगवान्

नेमिनाथ को वदना नमस्कार करती है,

वन्दना नमस्कार करके बोली—

हे भगवन्! यह लोक जन्म मरणादि

दु:खों से आलिप्त है अत: यावत्

सयम धर्म की दीक्षा दें।

[हिन्दी अर्थ]

कृष्ण वासुदेव की प्रार्थना सुनकर प्रभु बोले-हे देवानुप्रिय! तुम्हें जिस प्रकार सुख हो वैसा करो।

तब उस पद्मावती देवी ने ईशान-कोण में जाकर स्वय अपने हाथों से अपने शरीर पर धारण किए हुए सभी आभूषण एव अलकार उतारे और स्वय ही अपने केशों का पचमौष्टिक लोच किया। फिर भगवान नेमिनाथ के पास आकर वदना की। वदन नमस्कार करके इस प्रकार बोली- "हे भगवन्! यह ससार जन्म, जरा, मरण आदि दुख रूपी आग में जल रहा है।

अत इन दुखों से छुटकारा पाने और जलती हुई आग से बचने के लिए, मैं आपसे सयम-धर्म की दीक्षा अगीकार करना चाहती हू। अत कृपा करके मुझे प्रव्रजित कीजिये यावत् चारित्र-धर्म सुनाइये।"

[मूल सूत्र पाठ]	[संस्कृत छाया]

सूत्र ११

तएणं अरहा अरिट्ठणेमी पउमावइं	ततः अर्हन् अरिष्टनेमिः पद्मावतीं
देविं सयमेव पव्वावेइ,	देवीं स्वयमेव प्रव्राजयति,
सयमेव जक्खिणीए अज्जाए	स्वयमेव यक्षिण्यैः आर्यायै
सिस्सिणीं दलयइ ।	शिष्यां ददाति ।
तएणं सा जक्खिणी अज्जा पउमावइं	ततः खलु सा यक्षिणी आर्या पद्मावतीं
देविं सयं पव्वावेइ,	देवीं स्वयं प्रव्राजयति,
जाव संजमियव्वं,	यावत् संयन्तव्यम्
तएणं सा पउमावई जाव संजमइ ।	ततः सा पद्मावती यावत् संयच्छते ।
तए णं सा पउमावई अज्जा जाया,	ततः सा पद्मावती आर्या जाता,
ईरियासमिया जाव गुत्तबम्भयारिणी।१।	ईर्यासमिता यावत् गुप्तब्रह्मचारिणी ।१

सूत्र १२

तए णं सा पउमावई अज्जा जक्खिणीए	ततः सा पद्मावती आर्या यक्षिण्याः
अज्जाए अंतिए सामाइयमाइयाइं	आर्यायाः अंतिके सामायिकादीनि
एक्कारस अंगाइं अहिज्जइ,	एकादशांगानि अधीते,
बहूहिं चउत्थछट्ठट्ठमदसमदुवालसेहिं	बहुभिः चतुर्थषष्ठाष्टमदशमद्वादशभिः
मासद्धमासखमणेहिं	मासार्द्धमासक्षपणैः
विविहेहिं तवोकम्मेहिं अप्पाणं	विविधैः तपः कर्मभिः आत्मानं
भावेमाणा विहरइ ।	भावयन्ती विहरति ।
तएणं सा पउमावई अज्जा	ततः सा पद्मावती आर्या
बहुपडिपुण्णाइं वीसं वासाइं	बहुप्रतिपूर्णानि विंशति वर्षाणि
सामण्णपरियागं पाउणित्ता,	श्रामण्य-पर्यायं पालयित्वा

[हिन्दी शब्दार्थ] [हिन्दी धर्म]

सूत्र ११

इसके बाद भगवान् नेमिनाथ ने पद्मावती देवी को स्वयमेव प्रव्रज्या दी। और स्वयमेव यक्षिणी आर्या को शिष्या रूप में प्रदान की।
तब उस यक्षिणी आर्या ने पद्मावती देवी को स्वयं दीक्षा दी और संयम में यत्न करने की शिक्षा दी,
तब वह पद्मावती संयम में यत्न करने लगी। तब वह पद्मावती आर्या बन गई,
और ईर्या समिति आदि पाँचों
समितियों से युक्त हो यावत् ब्रह्मचारिणी हो गई।

पद्मावती के ऐसा कहने पर भगवान् नेमिनाथ ने स्वयमेव पद्मावती को प्रव्रजित एवं मुंडित करके यक्षिणी आर्या को शिष्या रूप में सौंप दिया।

तब यक्षिणी आर्या ने पद्मावती देवी को प्रव्रजित किया श्रमणी-धर्म की दीक्षा दी और संयम क्रिया में सावधानी पूर्वक यत्न करते रहने की हित शिक्षा देते हुए कहा- "हे पद्मावती! तुम संयम में सदा सावधान रहना।" पद्मावती भी यक्षिणी गुरुणी की हित शिक्षा मानते हुए सावधानीपूर्वक संयम-पथ पर चलने का यत्न करने लगी। एवं ईर्या समिति आदि पांचो समिति से युक्त होकर यावत् ब्रह्मचारिणी आर्या बन गई।

सूत्र १२

तदनन्तर उस पद्मावती आर्या ने यक्षिणी आर्या के पास सामायिक आदि ग्यारह अंगों का अध्ययन किया
बहुत से उपवास-बेले-तेले-चोले-पचोले-मास और अर्धमास आदि
विविध तपस्या से आत्मा को भावित करती हुई विचरने लगी।
इसके बाद वह पद्मावती आर्या पूरे बीस वर्ष श्रमणी चारित्र धर्म का पालन कर,

तत् पश्चात् उस पद्मावती आर्या ने अपनी यक्षिणी गुरुणी के पास सामायिक आदि ग्यारह अंगों का अध्ययन किया, साथ ही साथ उपवास-बेले-तेले-चौले-पचोले, पन्द्रह पन्द्रह दिन और महीने महीने तक की विविध प्रकार की तपस्या से अपनी आत्मा को भावित करती हुई विचरने लगी।

इस तरह पद्मावती आर्या ने पूरे बीस वर्ष तक चारित्र धर्म का पालन किया। अन्त में एक मास की संलेखना की और साठ भक्त अनशन पूर्ण करके जिस कार्य (मोक्ष

[मूल सूत्र पाठ]	[संस्कृत छाया]
मासियाए संलेहणाए अप्पाणं	मासिक्या संलेखनया आत्मानं
झोसेइ, झोसित्ता सट्ठिभत्ताइं	जोषयति जोषित्वा षष्ठिंभक्तानि—
अणसणाइं छेदेइ, छेदित्ता	अनशनानि छिनत्ति, छित्वा
जस्सट्ठाए कीरई णग्गभावे—	यस्यार्थाय क्रियते नग्नभावः
जाव तमट्ठं आराहेइ	यावत् तमर्थम् आराधयति
चरिमुस्सासेहिं सिद्धा ।१२।	चरमोच्छ्वासैः सिद्धा ।१२।

इति प्रथमं अध्ययनम्

अध्ययन २–८

सूत्र १

उक्खेवओ य अज्झयणस्स ।	उत्क्षेपकः अध्ययनस्य ।
तेणं कालेणं तेणं समयेणं	तस्मिन् काले तस्मिन् समये
बारवई णयरी, रेवयए पव्वए	द्वारावती नगरी, रैवतकः पर्वतः
उज्जाणे णंदणवणे ।	उद्यानं नन्दनवनम् ।
तत्थणं बारवईए णयरीए	तत्र खलु द्वारावत्याः नगर्याः
कण्हे वासुदेवे राया होत्था	कृष्णः वासुदेवः राजा आसीत्
तस्स णं कण्हस्स वासुदेवस्स	तस्य खलु कृष्णस्य वासुदेवस्स
गोरी देवी, वण्णओ,	गौरी देवी, वर्ण्या,
अरहा अरिट्ठणेमी समोसढे ।	अर्हन् अरिष्टनेमी समवसृतः ।
कण्हे णिग्गए, गोरी जहा	कृष्णः निर्गतः, गौरी यथा
पउमावई तहा णिग्गया,	पद्मावती तथा निर्गता,
धम्मकहा, परिसा पडिगया,	धर्मकथा, परिषद् प्रतिगता,
कण्हे वि पडिगए ।	कृष्णोऽपि प्रतिगतः ।

[हिन्दी शब्दार्थ]

एक मासकी संलेखणासे आत्मा को युक्त कर साठ भक्त अनशन पूर्ण कर जिस कार्य के लिये नग्नभाव अपरिग्रह रूप संयम स्वीकार किया, उसी अर्थ का आराधन कर अन्तिम श्वास से सिद्ध-बुद्ध-मुक्त हो गई ।

[हिन्दी अर्थ]

प्राप्ति के लिए संयम स्वीकार किया था उसकी आराधना करके अन्तिम श्वास के बाद सिद्ध-बुद्ध और सब दुखों से मुक्त होकर सिद्ध पद को प्राप्त कर लिया ।

इति प्रथममध्ययनम्

अध्ययन २—८

सूत्र १

श्री जम्बू—हे भगवन् ! प्रथम अध्ययन के जो भाव कहे थे, मैंने सुने । अब द्वितीय, तृतीय आदि अध्ययनों में प्रभु ने क्या भाव कहे हैं सो कृपाकर फरमाइये ?

श्री सुधर्मा—उस काल उस समय हे जम्बू! द्वारिकानगरी के पास रैवतक पर्वत और नन्दन वन नामक उद्यान था। वहां द्वारिका नगरी के कृष्ण वासुदेव राजा थे उस कृष्ण वासुदेव की गौरी नामकी महारानी थी, वर्णनीया थी, किसी समय भगवान् नेमिनाथ द्वारिका के नन्दन वन उद्यान में पधारे। श्री कृष्ण वन्दन को गये, पद्मावती की तरह गौरी भी वन्दन करने गई। भगवान ने धर्म कथा फरमाई। सभाजन लौट गये, कृष्ण भी वापस आ गये।

आर्य जम्बू 'हे भगवन् ! श्रमण भ० महावीर स्वामी ने प्रथम अध्ययन के जो भाव कहे वे आपके मुखारविन्द से मैंने सुने। अब दूसरे एवं उससे आगे के अध्ययनों में क्या भाव कहे हैं? कृपा करके कहिये ।'

श्री सुधर्मा स्वामी 'हे जम्बू' उस काल उस समय में द्वारिका नगरी थी। उसके समीप एक रैवतक नाम का पर्वत था। उस पर्वत पर नन्दन वन नामक एक मनोहारी एवं विशाल उद्यान था। उस द्वारिका नगरी में श्री कृष्ण वासुदेव राज्य करते थे। उन कृष्ण वासुदेव की 'गौरी' नाम की महारानी थी जो वर्णन करने योग्य थी।

एक समय उस नन्दन वन उद्यान में भगवान् अरिष्टनेमि पधारे। कृष्ण वासुदेव भगवान् के दर्शन करने के लिए गये। जन-परिषद् भी गई। गौरी रानी भी पद्मावती रानी के समान प्रभु-दर्शन के लिए गई। भगवान् ने धर्म-कथा धर्मोपदेश दिया। धर्मोपदेश सुनकर जन परिषद् अपने भवन पर गई। कृष्ण वासुदेव भी अपने राज भवन में लौट गए।

[मूल सूत्र पाठ]	[संस्कृत छाया]
तए णं सा गोरी जहा पउमावई तहा णिक्खंता जाव सिद्धा । एवं गंधारी, लक्खणा, सुसीमा, जम्ववई, सच्चभामा, रुप्पिणी, अट्ठवि पउमावई सरिसयाओ अट्ठ अज्झयणा ।१।	ततः सा गौरी यथा पद्मावती तथा निष्क्रान्ता यावत् सिद्धा । एवं गांधारी, लक्ष्मणा, सुसीमा, जाम्ववती, सत्यभामा, रुक्मिणी, अष्टावपि पद्मावती सदृशानि अष्ट-अध्ययनानि (समाप्तानि) ।१।

२–८ अध्ययनानि समाप्तानि

अथ नवम अध्ययन

सूत्र २

उक्खेवओ य णवमस्स ।	उत्क्षेपकश्च नवमस्य ।
तेणं कालेणं तेणं समयेणं वारवईए णयरीए, रेवयए पव्वए, णंदणवणे उज्जाणे, कण्हे राया । तत्थ णं वारवईए णयरीए कण्हस्स वासुदेवस्स पुत्ते जंववईए देवीए अत्तए संवे णामं कुमारे होत्था । अहीण० ।	तस्मिन् काले तस्मिन् समये द्वारावत्यां नगर्यां, रैवतकः पर्वतः, नन्दनवनमुद्यानं, कृष्णः राजा । तत्र खलु द्वारावत्यां नगर्यां कृष्णस्य वासुदेवस्य पुत्रः जाम्ववत्याः देव्याः आत्मजः शाम्वः नाम कुमारः आसीत् । अहीनः ।
तस्स णं संवस्स कुमारस्स मूलसिरी णामं भारिया होत्था वण्णओ, अरहा अरिट्ठणेमी समोसढे ।	तस्य खलु शाम्वस्य कुमारस्य मूलश्रीः नामा भार्या आसीत्, वर्ण्या । अर्हन् अरिष्टनेमिः समवसृतः ।

[हिन्दी शब्दार्थ]

तब गौरी पद्मावती की तरह दीक्षित हुई यावत् सिद्ध हो गई।

इसी तरह गांधारी, लक्ष्मणा, सुसीमा जाम्बवती, सत्यभामा, रुक्मिणी, (ये) आठों अध्ययन पद्मावती के समान समझना।

[हिन्दी अर्थ]

तत्पश्चात् 'गौरी' देवी पद्मावती रानी की तरह दीक्षित हुई यावत् सिद्ध हो गई।

इसी तरह बाकी ३ गांधारी ४ लक्ष्मणा, ५ सुसीमा ६ जाम्बवती, ७ सत्यभामा, ८ रुक्मिणी के भी ८ अध्ययन 'पद्मावती' के समान समझें।

इन आठों महारानियों का वर्णन इनके अध्ययनों में समान रूप से जानना चाहिये। ये सभी एक समान प्रव्रजित होकर सिद्ध बुद्ध और मुक्त हुईं। ये सभी श्री कृष्ण वासुदेव की पटरानियां थीं।

अथ नवम अध्ययन

सूत्र २

नवम अध्ययन का उत्क्षेपक—

हे भगवन् ! श्रमण भगवान् महावीर ने आठवें अध्ययन का भाव फरमाया सो सुना अब नवम में क्या अर्थ कहा है ? कृपा कर बतलाइये।

उस काल उस समय द्वारिका नगरी, रैवतक पर्वत, नन्दनवन नामक उद्यान, कृष्ण-वासुदेव राजा (हुए) वहाँ द्वारिका नगरी में कृष्ण वासुदेव का पुत्र तथा जाम्बवती देवी का आत्मज साम्ब नामक कुमार था। जो प्रतिपूर्ण इन्द्रियवाला एवं सुरूप था। उस साम्ब कुमार की मूलश्री नामकी पत्नी थी, जो कि वर्णन करने योग्य थी। एकदा भगवान अरिष्टनेमी वहाँ पधारे

श्री जम्बू - हे भगवन् ! श्रमण भगवान महावीर ने आठवें अध्ययन के जो भाव कहे- वे मैंने आपके मुखारविन्द से सुने। आगे श्रमण भगवान् महावीर ने नवम अध्ययन का क्या अर्थ बताया है। यह कृपाकर बताइये।"

श्री सुधर्मा स्वामी- 'हे जम्बू! उस काल उस समय में द्वारिका नगरी के पास एक रैवतक नाम का पर्वत था जहाँ एक नन्दन वन उद्यान था। वहाँ कृष्ण-वासुदेव राज्य करते थे। उन कृष्ण वासुदेव के पुत्र और रानी जाम्बवती देवी के आत्मज साम्ब नामक कुमार थे जो सर्वांग सुन्दर थे।

उन साम्ब कुमार के मूलश्री नाम की भार्या थी, जो वर्णन योग्य थी अत्यन्त सुन्दर एवं कोमलांगी थी।

उस समय अरिष्टनेमि वहाँ पधारे। कृष्ण वासुदेव उनके दर्शनार्थ गये। 'मूल श्री' देवी भी पद्मावती के पूर्व वर्णन के समान प्रभु के दर्शनार्थ गई।

भगवान् ने धर्मोपदेश दिया धर्म कथा कही। जिसे सुनने को जन परिषद् भी आई। धर्म कथा सुनकर जन परिषद् एवं श्री कृष्ण तो अपने भवन पर लौट गये। मूल श्री ने वहीं रहकर भगवान से प्रार्थना की कि "हे भगवन्! मैं कृष्ण वासुदेव की आज्ञा लेकर आपके पास श्रमण धर्म में दीक्षित होना चाहती हूं।"

[मूल सूत्र पाठ]	[संस्कृत छाया]
कण्हे णिग्गए। मूलसिरी वि णिग्गया।	कृष्णः निर्गतः मूलश्रीरपि निर्गता।
जहा पउमावई।	यथा पद्मावती।
णवरं देवाणुप्पिया!	विशेषः (नवीनम्) देवानुप्रिया!
कण्हं वासुदेवं आपुच्छामि	कृष्णं वासुदेवम् आपृच्छामि।
जाव सिद्धा।	यावत् सिद्धा।
एवं मूलदत्ता वि।	एवं मूलदत्ता अपि।

इति पंचमः वर्गः

षष्ठम वर्गः

सूत्र १

जइणं भंते! छट्ठमस्स	यदि खलु हे भदन्त! षष्ठमस्य
उक्खेवओ।	उत्क्षेपकः।
णवरं	विशेषः (नवीनम्)
सोलस अज्झयणा	षोडशानि अध्ययनानि
पण्णत्ता, तंजहा—	प्रज्ञप्तानि, तानि यथा—
मंकाई किकमे चेव,	मङ्काई (ति) किकमश्चैव,
मोग्गरपाणी य कासवे।	मुद्गरपाणिश्च काश्यपः।
खेमए धितिधरे चेव,	क्षेमको धृतिधरश्चैव,
केलासे हरिचन्दणे ।१।	कैलाशो हरिचन्दनः ।१।

[हिन्दी शब्दार्थ]

कृष्ण वन्दन करने गये, मूलश्री भी गईं पद्मावती की तरह।
विशेष- बोली- "हे देवानुप्रिय! कृष्ण वासुदेव को पूछती हूं" (पूछकर) (दीक्षित हुईं) यावत् सिद्ध हो गईं।
इसी प्रकार मूलदत्ता भी।

[हिन्दी भाव]

भगवान् ने कहा- "हे देवानुप्रिय! जैसा तुम्हें सुख हो वैसा करो।"

इसके बाद 'मूल श्री' अपने भवन को लौटी। 'मूल श्री' के पति श्री शाम्ब कुमार चूंकि पहले ही प्रभु के चरणों में दीक्षित हो गये थे अतः 'मूल श्री' अपने श्वसुर श्रीकृष्ण वासुदेव की आज्ञा लेकर 'पद्मावती' के समान दीक्षित हुई। एवं उन्हीं के समान तप संयम की आराधना करके सिद्ध पद को प्राप्त किया।

'मूल श्री' के ही समान "मूल दत्ता" का भी सारा वृत्तान्त जानना चाहिये। यह शाम्ब कुमार की दूसरी रानी थी।

इति पंचम वर्ग

षष्ठम वर्ग

सूत्र १

"यदि खलु हे भदन्त!" छठे का प्रारम्भ है। हे भगवन्! पांचवें वर्ग का भाव सुना अब छठे वर्ग में श्रमण भगवान महावीर ने क्या भाव प्रकट किये हैं कृपाकर बतलाइये--
सुधर्मा स्वामी - हे जम्बू!
विशेष, इस वर्ग में भगवान ने सोलह अध्ययन कहे हैं वे इस प्रकार हैं---
१. मकाई २ किंकम ३ मुद्गरपाणि ४ काश्यप। ५ क्षेमक ६ धृतिधर ७ कैलाश, तथा ८ हरिचन्दन।

श्री जम्बू- "हे भगवन्! पांचवें वर्ग का भाव सुना, अब छठे वर्ग के श्रमण भगवान् महावीर ने क्या भाव कहे हैं सो कृपा कर कहिये।"

श्री सुधर्मा स्वामी "हे जम्बू! श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने छठे वर्ग के सोलह अध्ययन कहे हैं, जो इस प्रकार हैं-

१ मकाई, २ किंकम, ३ मुद्गरपाणि ४ काश्यप, ५ क्षेमक, ६ धृतिधर ७ कैलाश, ८ हरिचन्दन, ९ वारत्त,

[मूल सूत्र पाठ]

वारत्तसुदंसरण-पुण्णभद्द,
सुमणभद्द सुपइट्ठे मेहे ।
अइमुत्ते य अलक्खे,
अज्झयणाणं तु सोलसयं ।२।

जइ णं भन्ते! सोलस अज्झयणा
पण्णत्ता, पढमस्स अज्झयणस्स
के अट्ठे पण्णत्ते ?

एवं खलु जम्बू ! तेणं कालेणं
तेणं समएणं रायगिहे णयरे ।
गुण-सिलए चेइए, सेणिए राया ।
तत्थ णं मंकाई णामं गाहावई
परिवसइ, अड्ढे जाव
अपरिभूए ।

तेणं कालेणं तेणं समएणं
समणे भगवं महावीरे आइगरे
गुणसिलए जाव विहरइ,
परिसा णिग्गया ।

तए णं से मंकाई गाहावई
इमीसे कहाए लद्धट्ठे
जहा पण्णत्तीए गंगदत्ते[24] तहेव

[संस्कृत छाया]

वारत्तसुदर्शन-पुण्यभद्रः,
सुमनोभद्रः सुप्रतिष्ठः मेघः ।
अतिमुक्तश्चालक्ष्यो,
अध्ययनानां तु षोडशकम् ।२।

यदि खलु भदन्त ! षोडश अध्ययनानि
प्रज्ञप्तानि, प्रथमस्य अध्ययनस्य
कः अर्थः प्रज्ञप्तः ?

एवं खलु जम्बू ! तस्मिन् काले
तस्मिन् समये राजगृहं नगरम् ।
गुणशिलकं चैत्यम्, श्रेणिकः राजा ।
तत्र खलु मंकाई नाम गाथापतिः
परिवसति, आढ्यः यावत्
अपरिभूतः ।

तस्मिन् काले तस्मिन् समये
श्रमणः भगवान् महावीरः आदिकरः
गुणशिलके यावत् विहरति,
परिषद् निर्गता ।

ततः स मंकाई गाथापतिः
अस्याः कथायाः लब्धार्थः
यथा प्रज्ञप्त्यां गंगदत्तः तथैव

[हिन्दी शब्दार्थ]

९ वारत्त, १० सुदर्शन, ११ पुण्यभद्र
१२ सुमनभद्र, १३ सुप्रतिष्ठ
१४ मेघ १५ अतिमुक्त तथा
१६ अलक्ष्य । ये सोलह अध्ययन हैं ।

यदि हे भगवन्! सोलह अध्ययन कहे हैं तो पहले अध्ययन का क्या अर्थ बतलाया है ? (श्री सुधर्मा)-

हे जम्बू ! उस काल
उस समय में राजगृह नगर,
गुणशील चैत्य एवं श्रेणिक राजा थे ।
वहां पर मकाई नामक गृहस्थ
रहता था जोकि ऋद्धि सम्पन्न तथा
किसी से तिरस्कार प्राप्त नहीं था ।

उस काल उस समय श्रमण भगवान्
महावीर धर्म की आदि करने वाले
गुणशील उद्यान में यावत् पधारे ।
धर्म कथा सुनकर परिषद् लौट गई ।
तब वह मकई गाथापति
प्रभु के आने का वृत्तान्त सुनकर
जैसे भगवती सूत्र में गगदत्त, वैसे ही

[हिन्दी अर्थ]

१० सुदर्शन, ११ पुण्यभद्र, १२ सुमनभद्र, १३ सुप्रतिष्ठ, १४ मेघ कुमार, १५ अतिमुक्त-कुमार, १६ अलक्ष्य कुमार ।

श्री जम्बू—"हे भगवन् ! श्रमण भगवान् महावीर ने छट्ठे वर्ग के १६ अध्ययन कहे हैं तो प्रथम अध्ययन का क्या अर्थ बताया है । कृपा कर कहिये ।

आर्य श्री सुधर्मा स्वामी-"हे जम्बू ! उस काल उस समय में राजगृह नामक नगर था । वहां गुणशीलक नाम का चैत्य-उद्यान था । उस नगर में श्रेणिक राजा राज्य करते थे । वहां मकाई नाम का एक गाथापति रहता था, जो अत्यन्त समृद्ध यावत् अपरिभूत था यानि दूसरों से पराभूत होने वाला नहीं था ।

उस काल उस समय मे धर्म की आदि करने वाले श्रमण भ० महावीर गुणशीलक उद्यान में यावत् पधारे ।

प्रभु महावीर का आगमन सुन कर जन परिषद् दर्शनार्थ एवं धर्मोपदेश श्रवणार्थ प्रभु की सेवामें आई ।

मकाई गाथापति भी भगवती सूत्र में वर्णित गगदत्त के वर्णन के समान भगवान् के दर्शनार्थ एवं धर्मोपदेश श्रवणार्थ अपने घर से निकला । भगवान् ने धर्मोपदेश दिया, जिसे सुनकर मकाई गाथापति संसार से विरक्त हो गया । उसने घर आकर अपने

[मूल सूत्र पाठ]	[संस्कृत छाया]
इमो वि	अयमपि
जेट्ठपुत्तं कुडुंबे ठवित्ता	ज्येष्ठपुत्रं कुटुम्बे स्थापयित्वा
पुरिससहस्सवाहिणीए सीयाए	पुरुषसहस्रवाहिन्या शिविकया
णिक्खंते।	निष्क्रान्तः।
जाव अणगारे जाए	यावत् अनगारो जातः।
ईरियासमिए जाव गुत्तबंभयारी	ईर्यासमितो यावत् गुप्तब्रह्मचारी।
तए णं से मंकाई अणगारे	ततः सः मंकाई अनगारः
समणस्स भगवओ महावीरस्स	श्रमणस्य भगवतः महावीरस्य
तहारूवाणं थेराणं अंतिए	तथारूपाणां स्थविराणामन्तिके
सामाइय-माइयाइं एक्कारस	सामायिकादीनि एका
अंगाइं अहिज्जइ।	दशाङ्गानि अधीते।
सेसं जहा खंदयस्स।	शेषं यथा स्कंदकस्य।[25]
गुणरयणं तवोकम्मं	गुणरत्नं तपः कर्म
सोलस वासाइं परियाओ,	षोडश वर्षाणि पर्यायः,
तहेव विपुले सिद्धे।	तथैव विपुले सिद्धः।

प्रथम अध्ययन समाप्त

द्वितीय अध्ययन

सूत्र २

दोच्चस्स उक्खेवओ,	द्वितीयस्य उत्क्षेपकः।
किंकमे वि एवं चेव।	किंकमः अपि एवम् चैव।
जाव विपुले सिद्धे।२।	यावत् विपुले सिद्धः।२।

तृतीय अध्ययन

सूत्र १

तच्चस्स उक्खेवओ।	तृतीयस्य उत्क्षेपकः।

[हिन्दी अन्वाय]

यह भी ज्येष्ठ पुत्र को कुटुम्ब का कार्यभार सौंपकर हजारपुरुषों से उठाई जाने वाली पालकी में बैठकर दीक्षार्थ निकल पड़े। यावत् अनगार हो गए।
ईर्यासमिति युक्त यावत्
गुप्त ब्रह्मचारी बन गये।
तब वह मकाई अनगार श्रमण महावीर के तथारूप स्थविरों के पास सामायिक आदि ग्यारह अंगों का अध्ययन करता है। शेष वर्णन स्कंदक[28] के समान जानना चाहिये। उन्होंने स्कंदक के समान गुणरत्न तप का आराधन किया।
सोलह वर्ष की दीक्षा पाली और उसी तरह विपुल पर्वत पर सिद्ध हो गये।

[हिन्दी अर्थ]

ज्येष्ठ पुत्र को घर का भार सौंपा और स्वयं हजार पुरुषों से उठाई जाने वाली शिविका (पालकी) में बैठकर श्रमण दीक्षा अंगीकार करने हेतु भगवान् की सेवा में आये। यावत् वे अणगार हो गये। ईर्या आदि समितियों से युक्त एवं गुप्तियों से गुप्त ब्रह्मचारी बन गये।

इसके बाद मकाई मुनि ने श्रमण भगवान् महावीर के गुण सम्पन्न तथा रूप स्थविरों के के पास सामायिक आदि ग्यारह अंगों का अध्ययन किया और स्कन्दकजी के समान, गुण रत्न संवत्सर तप का आराधन किया। सोलह वर्ष की दीक्षा पर्याय पाली और अन्त में विपुल गिरि पर स्कन्दकजी के समान ही संथारादि करके सिद्ध हो गये।

प्रथम अध्ययन समाप्त

द्वितीय अध्ययन

सूत्र २

दूसरे अध्ययन का प्रारम्भ—किंकम भी मकाई के समान ही दीक्षा लेकर विपुलाचल पर सिद्ध बुद्ध मुक्त हो गये।

दूसरे अध्ययन में 'किंकम' गाथापति का वर्णन है। वे भी 'मकाई' गाथापति के समान ही प्रभु महावीर के पास प्रव्रजित होकर विपुल गिरि पर सिद्ध-बुद्ध और सब दुःखों से मुक्त होकर सिद्ध शिला के वासी बन गये।

तृतीय अध्ययन

सूत्र ३

तीसरे अध्ययन का प्रारम्भ—

[मूल सूत्र पाठ]	[संस्कृत छाया]
एवं खलु जंबू ! तेणं कालेणं तेणं	एवं खलु जम्बू ! तस्मिन् काले
समएणं रायगिहे णयरे गुण सिलए	तस्मिन् समये राजगृहं नगरम्
चेइए, सेणिए राया । चेल्लणा देवी ।	गुणशिलकंचैत्यम् श्रेणिको राजा,
	चेल्लना देवी ।
तत्थणं रायगिहे णयरे अज्जुणए णामं	तत्र खलु राजगृहे नगरे
मालागारे	अर्जुनो नाम मालाकरः
परिवसइ । अड्ढे जाव	परिवसति (स्म) । आढ्यः यावत्
अपरिभूए ।	अपराभूतः ।
तस्स णं अज्जुणयस्स बंधुमई	तस्य खलु अर्जुनस्य बंधुमती
णामं भारिया होत्था सुकुमाल	नामा भार्या आसीत् सुकुमार
पाणिपाया ।	पाणिपादा ।
तस्स णं अज्जुणयस्स मालागारस्स	तस्य खलु अर्जुनस्य मालाकारस्य
रायगिहस्स णयरस्स वहिया	राजगृहस्य नगराद् वहिः
एत्थ णं महं एगे पुप्फारामे	अत्र खलु महान् एकः पुष्पारामः
होत्था । कण्हे जाव णिकुरंबभूए	आसीत् । कृष्णः यावत् निकुरंवभूतः
दसद्धवण्ण कुसुम कुसुमिए,	दशार्द्ध वर्णकुसुमकुसुमितः
पासाइए ।	प्रासादीयः ।
तस्स णं पुप्फारामस्स अदूर सामंते	तस्य खलु पुष्पारामस्य अदूरसामन्ते
तत्थणं अज्जुणयस्स मालागारस्स	तत्र खलु अर्जुनकस्य मालाकारस्य
अज्जयपज्जयपिइपज्जयागए	आर्यक प्रार्यक पितृपर्यायागतम्
अणेगकुलपुरिसपरंपरागए	अनेक कुल पुरुषपरंपरागतम्
मोग्गरपाणिस्स जक्खस्स	मुद्गरपाणेः यक्षस्य
जक्खाययणे होत्था ।	यक्षायतनं आसीत् ।
पोराणे दिव्वे, सच्चे जहा पुण्णभद्दे ।	पुराणं दिव्यं सत्यं यथा पूर्णभद्रम् ।

[हिन्दी शब्दार्थ]

हे भगवन् ! श्रमण भगवान् महावीर ने छठे वर्ग के दूसरे अध्ययन का जो भाव फरमाया वह सुना, अब तीसरे अध्ययन का प्रभु ने क्या भाव प्रकट किया है ? इस प्रकार हे जम्बू ! उस काल उस समय में राजगृह नगर में गुणशील उद्यान था। श्रेणिक राजा था उसकी चेलना रानी थी। वहाँ राजगृह नगर में अर्जुन नाम वाला मालाकार रहता था। वह धन-सम्पन्न तथा अपराजित था। उस अर्जुन मालाकार के बंधुमति नाम की भार्या थी, जो कोमल हाथ पैर (शरीर) वाली थी। उस अर्जुन मालाकार का राजगृह नगर के बाहर एक विशाल फूलों का बगीचा था। वह उद्यान काला यावत् हरा भरा था वहाँ पाँच वर्ण के फूल खिले हुए थे। वह उद्यान मन को प्रसन्न करने वाला था। उस फूलों के बगीचे के पास ही वहाँ उस अर्जुन मालाकार के पिता पितामह प्रपितामह से चला आया अनेक, कुलपुरुषों की परंपरा से सेवित मुद्गरपाणियक्ष का यक्षायतन था। वह यक्षायतन प्राचीन दिव्य और सत्यप्रभाव वाला था जैसे पूर्णभद्र।[११]

[हिन्दी भाव]

श्री जम्बू स्वामी—"हे भगवन्! श्रमण भगवान् महावीर ने छट्ठे वर्ग के दूसरे अध्ययन का भाव बताया सो सुना। अब तीसरे अध्ययन का प्रभु ने क्या अर्थ कहा है ? कृपा कर वह भी बताइये।"

श्री सुधर्मा स्वामी—"हे जम्बू! उस काल उस समय में राजगृह नामका एक नगर था। वहा गुणशीलक नामक एक उद्यान था। उस नगर में राजा श्रेणिक राज्य करते थे उनकी रानी का नाम 'चेलना' था।

उस राजगृह नगर में 'अर्जुन' नाम का एक माली रहता था। उसकी पत्नी का नाम 'बन्धुमती' था, जो अत्यन्त सुन्दर एवं सुकुमार थी।

उस अर्जुनमाली का राजगृह नगर के बाहर एक बड़ा पुष्पाराम (फूलों का बगीचा) था। वह बगीचा नीले एवं सघन पत्तों से आच्छादित होने के कारण आकाश में चढ़ी घनघोर घटाओं के समान श्याम कान्ति से युक्त प्रतीत होता था। उसमें पाचों वर्णों के फूल खिले हुए थे। वह बगीचा इस भांति हृदय को प्रसन्न एवं प्रफुल्लित करने वाला बड़ा दर्शनीय था।

उस पुष्पाराम यानि फुलवाड़ी के समीप ही मुद्गरपाणि नामक एक यक्ष का यक्षायतन था जो उस अर्जुन माली के पुरखाओं बाप-दादों से चली आई कुल परम्परा से सम्बन्धित था। वह 'पूर्णभद्र' चैत्य के समान पुराना, दिव्य एवं सत्य प्रभाव वाला था। उसमें 'मुद्गर पाणि' नामक

[मूल सूत्र पाठ]	[संस्कृत छाया]
तत्थ णं मोग्गरपाणिस्स पडिमा	तत्र खलु मुद्गरपाणेः प्रतिमा
एगं महं पलसहस्सणिप्फण्णं	एकं महान्तं पलसहस्रनिष्पन्नम्
अयोमयं मोग्गरं गहाय चिट्ठइ।	अयोमयं मुद्गरं गृहीत्वा तिष्ठति।

सूत्र २

तए णं से अज्जुणए मालागारे	ततः खलु सः अर्जुनकः मालाकारः
बालप्पभिइं चेव मोग्गरपाणि	बालप्रभृत्येव मुद्गरपाणियक्षस्य
जक्खभत्ते यावि होत्था।	भक्तश्चाप्यभवत्
कल्लाकल्लिं पच्छिपिडगाइं	प्रतिदिनं पच्छिपिटकानि
गिण्हइ, गिण्हित्ता रायगिहाओ	गृह्णाति, गृहीत्वा राजगृहात्
णयराओ पडिणिक्खमइ,	नगरात् प्रतिनिष्क्राम्यति,
पडिणिक्खमित्ता जेणेव पुप्फारामे	प्रतिनिष्क्रम्य यत्रैव पुष्पारामः
तेणेव उवागच्छइ।	तत्रैव उपागच्छति।
उवागच्छित्ता पुप्फुच्चयं करेइ,	उपागत्य पुष्पोच्चयं करोति,
करित्ता अग्गाइं वराइं पुप्फाइं गहाय	कृत्वा अग्राणि वराणि पुष्पाणि गृहीत्वा
जेणेव मोग्गरपाणिस्स जक्खाययणे	तत्रैव मुद्गरपाणेः यक्षायतनम्
तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता	तत्रैव उपागच्छति, उपागत्य
मोग्गरपाणिस्स जक्खस्स महरिहं	मुद्गरपाणेः यक्षस्य महार्हम्
पुप्फच्चणं करेइ करित्ता	पुष्पार्चनकम् करोति, कृत्वा
जण्णुपायवडिए पणामं करेइ,	जानुपादपतितः प्रणामं करोति
करित्ता तओ पच्छा रायमग्गंसि	कृत्वा तत्पश्चात् राजमार्गे
वित्तिं कप्पेमाणे विहरइ।	वृत्तिं कल्पमानः विहरति।

सूत्र ३

तत्थ णं रायगिहे णयरे ललिया णामं	तत्र खलु राजगृहे नगरे ललिता-नाम
गोट्ठी परिवसइ,	गोष्ठी परिवसति,

[हिन्दी शब्दार्थ]

वहाँ पर मुद्गरपाणि की प्रतिमा
एक हजार पल भार वाला
बड़ा लोहमय मुद्गर लिये हुए खड़ी थी।

[हिन्दी भाव]

यक्ष की एक प्रतिमा थी, जिसके हाथ में एक हजार पल-परिमाण (वर्तमान तोल के अनुसार लगभग ६२।। सेर तदनुसार लगभग ५७किलो) भारवाला लोहे का एक मुद्गर था।

सूत्र २

वह अर्जुन मालाकार
बचपन से ही मुद्गरपाणि
यक्ष का भक्त हो गया था।
वह प्रतिदिन बाँस की छाबड़ी
उठाता तथा उठाकर राजगृह
नगर से बाहर निकलता
व निकलकर जहाँ फूलों का बगीचा है
वहाँ पर आता।
आकर पुष्पों का चयन करता,
करके अपनी श्रेष्ठ फूलों को लेकर
जहाँ पर मुद्गरपाणि का यक्षायतन था
वहाँ आता आकर
मुद्गरपाणि यक्ष का उत्तमोत्तम
फूलों से अर्चन करता, करके
पचाङ्गप्रणाम करता,
इसके बाद राजमार्ग पर फूल बेचकर
अपनी आजीविका चलाया करता था।

वह अर्जुन माली बचपन से ही उस मुद्गर पाणि यक्ष का अनन्य उपासक था। प्रतिदिन बांस की छबड़ी लेकर वह राजगृह नगर से बाहर स्थित अपनी उस फुलवाड़ी में जाता था और फूलों को चुन-चुन कर एकत्रित करता था।

फिर उन फूलों में से उत्तम २ फूलों को छांटकर उन्हें उस मुद्गर पाणि यक्ष के ऊपर चढ़ाता था। इस प्रकार वह उत्तमोत्तम फूलों से उस यक्ष की पूजा अर्चना करता और भूमि पर दोनों घुटने टेककर उसे प्रणाम करता।

इसके बाद राजमार्ग के किनारे बाजार में बैठकर उन फूलों को बेचकर अपनी आजीविका उपार्जन करता हुआ सुखपूर्वक वह अपना जीवन बिता रहा था।

सूत्र ३

वहाँ राजगृह नगर में ललिता नाम की
गोष्ठी (मित्र मंडली) रहती थी, वह
ऋद्धि संपन्न यावत् किसी से पराभव
पाने वाली नहीं थी, जो राजा के

उस राजगृह नगर में 'ललिता' नाम की एक गोष्ठी (मित्र मंडली) थी। जिसके अत्यन्त समृद्ध और दूसरों से अपराभूत ऐसे कुछ व्यक्ति सदस्य थे। किसी समय नगर के राजा का कोई हित कार्य सम्पादन करने के

[मूल सूत्र पाठ]	[संस्कृत छाया]
अड्ढा जाव अपरिभूया,	आढ्याः यावत् अपरिभूता,
जं कय सुकया यावि होत्था।	यत्कृतसुकृता चापि आसीत्।
तए णं रायगिहे णयरे अण्णया	ततः खलु राजगृहे नगरे अन्यदा
कयाइं पमोए घुट्ठे यावि होत्था।	कदाचित् प्रमोदोघुष्टः चापि अभवत्।
तए णं से अज्जुणए मालागारे	तत्र खलु सः अर्जुनः मालाकारः
'कल्लं पभूयतरएहिं पुप्फेहिं कज्जं'	'कल्ये प्रभूततरकैः पुष्पैः कार्यम्'
इति कट्टु पच्चूस काल समयंसि	इति कृत्वा प्रत्यूष : काले
बंधुमईए भारियाए सद्धि	बन्धुमत्या भार्यया सार्द्धम्
पच्छिपिडगाइं गिण्हइ, गिण्हित्ता,	पच्छिपिटकानि गृह्णाति, गृहीत्वा
सयाओ गिहाओ पडिणिक्खमइ,	स्वकात् गृहात् प्रतिनिष्क्राम्यति
पडिणिक्खमित्ता रायगिहं	प्रतिनिष्क्रम्य राजगृहम्
णयरं मज्झं मज्झेणं णिग्गच्छइ,	नगरं मध्यं मध्येन निर्गच्छति,
णिग्गच्छित्ता जेणेव पुप्फारामे	निर्गत्य यत्रैव पुष्पारामः
तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता	तत्रैव उपागच्छति, उपागत्य,
बंधुमईए भारियाए सद्धि	बंधुमत्या भार्यया सार्द्धम्
पुप्फुच्चयं करेइ ।३।	पुष्पोच्चयम् करोति ।३।

सूत्र ४

तए णं तीसे ललियाए गोट्ठीए	ततः खलु ललितायाः गोष्ठ्याः
छ, गोट्ठिल्ला पुरिसा जेणेव	षड् गौष्ठिकाः पुरुषाः यत्रैव
मोग्गरपाणिस्स जक्खस्स	मुद्गरपाणेर्यक्षस्य
जक्खाययणे तेणेव उवागया	यक्षायतनं तत्रैव उपागताः,
अभिरममाणा चिट्ठंति।	अभिरममाणाः तिष्ठन्ति।
तए णं से अज्जुणए मालागारे	ततः खलु सः अर्जुनः मालाकारः
वन्धुमईए भारियाए सद्धिं	वन्धुमत्या भार्यया सार्द्धं
पुप्फुच्चयं करेइ, करित्ता	पुष्पोच्चयं करोति, कृत्वा
अग्गाइं वराइं पुप्फाइं गहाय	अग्राणि वराणि पुष्पाणि गृहीत्वा

[हिन्दी अनुवाद]

अनुग्रह के कारण मनमाने काम करने में स्वच्छन्द थी।
फिर राजगृह नगर में बाद में किसी दिन प्रमोदोत्सव की घोषणा हुई।
तत्पश्चात् अर्जुन मालाकार ने सोचा "कल बहुत फूलों की मांग होगी" यह सोचकर उसने प्रातः काल जल्दी उठकर बन्धुमती भार्या को साथ लिया, बांस की छाब (टोकरी) ली लेकर अपने घर से निकला, निकलकर राजगृह नगर के मध्य-मध्य से चलता हुआ निकल जाता है तथा निकलकर जहां फूलों का बगीचा है वहां आता है, वहां आकर अपनी बन्धुमती पत्नी के साथ पुष्पों का चयन शुरु कर देता है ॥३॥

[हिन्दी भाष्य]

कारण राजा ने उस मित्र मंडली पर प्रसन्न होकर अभयदान दे दिया कि वे अपनी इच्छानुसार कोई भी कार्य करने में स्वतन्त्र हैं। राज्य की ओर से उन्हें पूरा संरक्षण था इस कारण यह गोष्ठी बहुत उच्छृंखल और स्वच्छन्द बन गई।

एक दिन राजगृह नगर में एक उत्सव मनाने की घोषणा हुई।

इस पर अर्जुनमाली ने अनुमान लगाया कि कल इस उत्सव के अवसर पर पुष्पों की भारी मांग होगी। इसलिए उस दिन वह प्रातःकाल में जल्दी ही उठा और बांस की छबड़ी लेकर अपनी पत्नी बन्धुमती के साथ जल्दी घर से निकल कर नगर में होता हुआ अपनी फुलवाड़ी में पहुंचा और अपनी पत्नी के साथ पुष्पों को चुन चुन कर एकत्रित करने लगा।

सूत्र ४

तब उसी समय 'ललिता' मंडली के छः गोष्ठिक पुरुष, जहां मुद्गरपाणि यक्ष का यक्षायतन था वहां आये और आपस में परिहास क्रीडादि करने लगे।
उस समय अर्जुन माली ने बन्धुमती भार्या के साथ पुष्पों का चयन किया करके श्रेष्ठ फूलों को ग्रहण कर (लेकर)

उस समय पूर्वोक्त ललिता गोष्ठी के छः गोष्ठिक पुरुष मुद्गरपाणि यक्ष के यक्षायतन में आकर आमोद प्रमोद तथा परस्पर हंसी-ठट्ठा करने लगे।

उधर अर्जुनमाली अपनी पत्नी बन्धुमती के साथ पुष्प-संग्रह करके उनमें से कुछ उत्तम पुष्प छांटकर उनसे नित्य नियम के अनुसार मुद्गरपाणि यक्ष की पूजा करने के लिये यक्षायतन की ओर चला।

[मूल सूत्र पाठ]	[संस्कृत छाया]
जेणेव मोग्गरपाणिस्स	यत्रैव मुद्गरपाणेर्यक्षस्य
जक्खस्स जक्खाययणे तेणेव उवागच्छइ।	यक्षायतनं तत्रैव उपागच्छति।
तए णं ते छ गोट्ठिल्ला पुरिसा	ततः खलु ते षट् गौष्ठिकाः पुरुषाः
अज्जुणयं मालागारं	अर्जुनम् मालाकारम्
बंधुमईए भारियाए सद्धि	बन्धुमत्या भार्यया सार्द्धम्
एज्जमाणं पासइ पासित्ता	एजमानम् (आगच्छंतं) पश्यति, दृष्ट्वा
अण्णमण्णं एवं वयासी	अन्योन्यम् एवम् अवदत्
एस खलु देवाणुप्पिया !	एष खलु देवानुप्रियाः !
अज्जुणए मालागारे बंधुमईए	अर्जुनः मालाकारः बन्धुमत्या
भारियाए सद्धि इहं हव्व-	भार्यया सार्द्धम् इह हव्व
मागच्छइ, तं सेयं खलु	मागच्छति, तत् श्रेयः खलु
देवाणुप्पिया ! अज्जुणयं मालागारं	देवानुप्रियाः ! अर्जुनं मालाकारम्
अवओडयबंधणयं करित्ता	अवकोटकबंधनकं कृत्वा
बंधुमईए भारियाए सद्धि	बन्धुमत्या भार्यया सार्द्धम्
विउलाइं भोगभोगाइं	विपुलान् भोग भोगान्
भुंजमाणाणं विहरित्तए।	भुंजमानानां (मध्ये) विहर्तुम्।
त्तिकट्टु एयमट्ठं अण्णमण्णस्स	इति कृत्वा एनमर्थम् अन्योन्यस्य
पडिसुणेंति, पडिसुणित्ता कवाडंतरेसु	प्रतिशृण्वन्ति, प्रतिश्रुत्य कपाटान्तरेषु
णिलुक्कंति, णिच्चला णिप्फंदा,	निलुक्कन्ति, निश्चलाः निस्पंदाः
तुसिणीया पच्छण्णा चिट्ठंति।४।	तुष्णीकाः प्रच्छन्नाः तिष्ठन्ति।४।

सूत्र ५

तए णं से अज्जुणए मालागारे	ततः खलु स अर्जुनः मालाकारः
बंधुमईए भारियाए सद्धि	बंधुमत्या भार्यया सार्द्धम्
जेणेव मोग्गरपाणिस्स जक्खाययणे	यत्रैव मुद्गरपाणेर्यक्षायतनम्
तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता,	तत्रैव उपागच्छति, उपागत्य
आलोए,पणामं करेइ, करित्ता	आलोकयन् प्रणामं करोति, कृत्वा

[हिन्दी शब्दार्थ]

जहाँ मुद्गरपाणि यक्ष का यक्षायतन
था वहाँ पर आया (आता है)।
तब उन छह ललित गौष्ठिक पुरुषों ने
अर्जुन मालाकार को
बन्धुमती भार्या के साथ
आते हुए देखा और देखकर
आपस में यों बोले—
हे देवानुप्रियो !
यह अर्जुन मालाकार बन्धुमती
भार्या के साथ यहाँ शीघ्र
आ रहा है, इसलिये हे देवानुप्रियो !
आनन्द इसी में है कि अर्जुन मालाकार
को उल्टी मुश्क से बाँधकर उसकी
बन्धुमती स्त्री के साथ अनेक भोगों को
भोगते हुए विचरण करें।
इस प्रकार विचार कर उन्होंने परस्पर
एक दूसरे की बात सुनी व सुनकर
कपाट के पीछे छिप गये बिलकुल
चुपचाप अचल व स्पन्दन रहित होकर
छिपकर बैठ गये।

[हिन्दी अर्थ]

उन छह गौष्ठिक पुरुषों ने अर्जुनमाली को बन्धुमती भार्या के साथ यक्षायतन की ओर आते हुए देखा। देखकर परस्पर विचार करके निश्चय किया—"हे मित्रों ! यह अर्जुनमाली अपनी बन्धुमती भार्या के साथ इधर ही आ रहा है। हम लोगों के लिये यह उत्तम अवसर है कि ऐसे मौके पर इस अर्जुन माली को तो औंधी मुश्किया (दोनों हाथों को पीठ पीछे) से बलपूर्वक बाँधकर एक ओर पटक दें और फिर इसकी इस सुन्दर स्त्री बन्धुमती के साथ खूब काम-क्रीड़ा करें।"

यह निश्चय करके वे छहों उस यक्षायतन के किवाड़ों के पीछे छिप कर निश्चल खड़े हो गये और उन दोनों के यक्षायतन के भीतर प्रविष्ट होने की स्वास रोककर प्रतीक्षा करने लगे।

सूत्र ५

तदनन्तर वह अर्जुन मालाकार
बन्धुमती भार्या के साथ
जहाँ पर मुद्गरपाणियक्ष का यक्षायतन
था वहाँ आया और आकर
मुद्गरपाणी को देखता हुआ प्रणाम

इधर अर्जुनमाली अपनी बन्धुमती भार्या के साथ यक्षायतन में प्रविष्ट हुआ और भक्तिपूर्वक प्रफुल्लित मन से मुद्गरपाणि यक्ष की ओर देखा। फिर चुने हुए उत्तमोत्तम फूल उस पर चढ़ाकर दोनों घुटने भूमि पर टेककर साष्टांग प्रणाम करने लगा। उसी

[मूल सूत्र पाठ]

महरिहं पुप्फच्चयणं करेइ
करित्ता, जाणुपायपडिए
पणामं करेइ ।
तए णं ते छ गोट्ठिल्ला पुरिसा
दवदवस्स कवाडंतरोहितो
णिग्गच्छंति, णिग्गच्छित्ता,
अज्जुणयं मालागारं गिण्हित्ता
अवओडयबंधणं करेंति
करित्ता, बंधुमईए मालागारीए
सद्धि विउलाइं भोगभोगाइं
भुंजमाणा विहरंति ।
तए णं तस्स अज्जुणयस्स
मालागारस्स अयमज्झत्थिए
समुप्पण्णे—
"एवं खलु अहं बालप्पभिइं
चेव मोग्गरपाणिस्स भगवओ
कल्लाकल्लि जाव वित्ति
कप्पेमाणे विहरामि ।
तं जई णं मोग्गरपाणिजक्खे
इह सण्णिहिए होंते
सेणं किं ममं एयारूवं आवत्ति
पावेज्जमाणं पासंते,
तं णत्थि णं मोग्गरपाणिजक्खे
इह सण्णिहिए, सुव्वत्तं
तं एस कट्ठे ।"

[संस्कृत छाया]

महार्हं पुष्पोच्चयं करोति,
कृत्वा जानुपादपतितः
प्रणामम् करोति ।
ततः खलु ते षड् गौष्ठिकाः पुरुषाः
द्रुतद्रुतेन कपाटान्तरात्
निर्गच्छन्ति, निर्गत्य
अर्जुनं मालाकारं गृहीत्वा
अवकोटक बंधनं कुर्वन्ति
कृत्वा बंधुमत्या मालाकारिण्या
सार्द्धम् विपुलान् भोगभोगान्
भुंजमानाः विहरन्ति ।
ततः खलु तस्य अर्जुनस्य माला-
कारस्य अयम् आध्यात्मिकः (विचारः)
समुत्पन्नः—
एवं खलु अहं बाल प्रभृत्यैव
मुद्गरपाणेः भगवतः
कल्याकल्यि यावत् वृत्ति
कल्पयन् विहरामि ।
तद् यदि खलु मुद्गरपाणियक्षः
इह सन्निहितः भवेत्
सः खलु किं माम् एतद्रूपाम् आपत्तिम्
प्राप्नुवन्तम् पश्येत्?
तत् नास्ति खलु मुद्गरपाणियक्षः
इह सन्निहितः सुव्यक्तं
तत् एतत् काष्ठमेव । (न तु यक्षः)

[हिन्दी शब्दार्थ]

करता है, करके बहुमूल्य पुष्प चढाये
चढ़ाकर घुटनों के बल गिरकर
प्रणाम किया ।
तब वे छ ही गोष्ठिक पुरुष
जल्दी जल्दी किंवाड के पीछे से
निकले और निकलकर
अर्जुन मालाकार को पकडकर
औंधी मुश्की से बांध दिया ।
बांधकर बन्धुमती मालिनी के साथ
अनेक प्रकार के भोगों को
भोगते हुए विचरण करने लगे ।
उस समय उस अर्जुन
माली के मन में यह विचार
उत्पन्न हुआ कि—
मैं अपने बचपन से ही
मुद्गरपाणि भगवान की
प्रतिदिन यावत् पूजा करके फिर
आजीविका पूरी करता आ रहा हू ।
अत यदि मुद्गरपाणि यक्ष
यहा मौजूद होता
तो क्या वह मुझे इस प्रकार आपत्ति
में पड़ा देखता ?
इसलिये निश्चय ही यहा मुद्गरपाणि
यक्ष मौजूद नहीं है यह तो स्पष्ट ही
केवल काष्ठ है ।"

[हिन्दी अर्थ]

समय शीघ्रता से उन छ गौष्ठिक पुरुषों ने किवाडों के पीछे से निकल कर अर्जुनमाली को पकड लिया और उसकी औंधी मुश्कें बांधकर उसे एक ओर पटक दिया। फिर उसकी पत्नी बन्धुमती मालिन के साथ विविध प्रकार से काम क्रीडा करने लगे।

यह देखकर उस समय अर्जुनमाली के मन में यह विचार आया—"देखो मैं अपने बचपन से ही इस मुद्गरपाणि को अपना इष्टदेव मानकर इसकी प्रतिदिन भक्तिपूर्वक पूजा करता आ रहा हू। इसकी पूजा करने के बाद ही इन फूलों को बेचकर अपना जीवन-निर्वाह करता रहा हू ।

तो यदि मुद्गरपाणि यक्ष देव यहां वास्तव में ही होता तो क्या मुझे इस प्रकार विपत्ति में पड़े हुए को देखकर चुप रहता ? इसलिये यह निश्चय होता है कि वास्तव में यह मुद्गरपाणि यक्ष नहीं है। यह तो मात्र काष्ठ का पुतला है।

[मूल सूत्र पाठ]	[संस्कृत छाया]

सूत्र ६

तए णं से मोग्गरपाणिजक्खे	ततः खलु सः मुद्गरपाणियक्षः
अज्जुणयस्स मालागारस्स	अर्जुनस्य मालाकारस्य
अयमेयारूवं अज्झत्थियं जाव	इदम् एतद् रूपम् आध्यात्मिकम्
वियाणित्ता, अज्जुणयस्स माला-	यावत् विज्ञाय, अर्जुनस्य माला-
गारस्स सरीरयं अणुप्पविसइ,	कारस्य शरीरम् अनुप्रविशति,
अणुप्पविसित्ता तडतडस्स	अनुप्रविश्य, तडतड इतिशब्देन
बंधाइं छिंदइ,	बन्धनानि छिनत्ति,
तं पलसहस्सणिप्फण्णं अओमयं	तं पलसहस्रनिष्पन्नम् अयोमयं
मोग्गरं गिण्हइ, गिण्हित्ता	मुद्गरं गृह्णाति, गृहीत्वा
ते इत्थिसत्तमे छ पुरिसे घाएइ।	तान् स्त्रीसप्तमान् षट् पुरुषान् घातयति
तए णं से अज्जुणए मालागारे	ततः खलु सः अर्जुनः मालाकारः
मोग्गरपाणिणा जक्खेणं	मुद्गरपाणिना यक्षेन
अणाइट्ठे समाणे रायगिहस्स	अन्वाविष्टः सन् राजगृहस्य
णयरस्स परिपेरंते णं	नगरस्य परिपर्यन्ते खलु
कल्लाकल्लि इत्थिसत्तमे छ पुरिसे	कल्याकल्यि स्त्रीसप्तमान् षट् पुरुषान्
घाएमाणे विहरइ।	घातयन् विहरति।

सूत्र ७

तए णं रायगिहे णयरे सिंघाडग	ततः खलु राजगृहे नगरे शृंगाटक
जाव महापहेसु बहुजणो	यावत् महापथेषु बहुजनः
अण्णमण्णस्स एवमाइक्खइ	अन्योन्यस्य एवमाख्याति
"एवं खलु देवाणुप्पिया ! अज्जुणए	"एवं खलु देवानुप्रिया! अर्जुनः
मालागारे मोग्गरपाणिणा जक्खेणं	मालाकारः मुद्गरपाणिना यक्षेन
अणाइट्ठे समाणे रायगिहे	अन्वाविष्टः सन् राजगृहात्
बहिया इत्थिसत्तमे छ पुरिसे	बहिः स्त्री सप्तमान् षट् पुरुषान्
घाएमाणे विहरइ।"	घातयन् विहरति।"

[हिन्दी शब्दार्थ]	[हिन्दी अर्थ]

सूत्र ६

तब उस मुद्गरपाणि यक्ष ने
अर्जुन मालाकार के
इस प्रकार के मनोगत भावों को
यावत् जानकर, अर्जुन मालाकार
के शरीर में प्रवेश कर लिया
प्रविष्ट होकर तड़ तड़ करके सब
बन्धनों को काट दिया और उस हजार
पलभार से निर्मित लोहे के मुद्गर को
लेकर उन, स्त्री जिनमें सातवीं है ऐसे,
छओं गोष्ठी पुरुषों को मार डालता है।
तब वह अर्जुन मालाकार
मुद्गरपाणी यक्ष से
आविष्ट होकर राजगृह
नगर के आसपास चारों ओर
प्रतिदिन छ पुरुषों और सातवीं
स्त्री को मारता हुआ विचरने लगा।

तब मुद्गरपाणि यक्ष ने अर्जुनमाली के इस प्रकार के मनोगत भावो को जानकर उस के शरीर मे प्रवेश किया और उसके बन्धनों को तड़ातड़ तोड़ डाला।

अब उस मुद्गरपाणि यक्ष से आविष्ट उस अर्जुन माली ने उस हजार पल भार वाले लोहमय मुद्गर को हाथ मे लेकर अपनी बन्धुमति भार्यासहित उन छहों गौष्ठिक पुरुषों को उस मुद्गर के प्रहार से मार डाला।

इस प्रकार इन सातों प्राणियों को मारकर मुद्गरपाणि यक्ष से आविष्ट (वशीभूत) वह अर्जुनमाली राजगृह नगर की बाहरी सीमा के आस पास चारों ओर ६ पुरुष और १ स्त्री मिला कर ७ प्राणियों की प्रतिदिन हत्या करते हुए घूमने लगा।

सूत्र ७

उस समय राजगृह नगर के शृंगाटक
आदि राजमार्गों पर बहुत से लोग
परस्पर इस प्रकार कहने लगे—
"हे देवानुप्रियो ! अर्जुन
माली मुद्गरपाणि यक्ष से
आविष्ट होकर राजगृह नगर के
बाहर छ पुरुषों और सातवीं स्त्री को
मारता हुआ विचरण कर रहा है।"

उस समय राजगृह नगर के शृंगाटकों में राजमार्गों आदि सभी स्थानों मे बहुत से लोग परस्पर इस प्रकार बोलने लगे—'हे देवानुप्रियो ! अर्जुनमाली मुद्गरपाणि यक्ष के वशीभूत होकर राजगृह नगर के बाहर एक स्त्री और ६ पुरुष, इस प्रकार सात व्यक्तियों को प्रतिदिन मार रहा है।'

[मूल सूत्र पाठ]

तए णं से सेणिए राया इमीसे
कहाए लद्धट्ठे समाणे
कोडुंबिय पुरिसे सद्दावेइ,
सद्दावित्ता एवं वयासी—
"एवं खलु देवाणुप्पिया !
अज्जुणए मालागारे जाव
घाएमाणे विहरइ ।
तं माणं तुब्भे केइ तणस्स वा,
कट्ठस्स वा पाणियस्स वा,
पुप्फफलाणं वा अट्ठाए सइरं
णिगच्छउ मा णं तस्स
सरीरस्स वावत्ती भविस्सइ ।
त्ति कट्टु दोच्चं पि तच्चं पि
घोसणं घोसेह,
घोसित्ता खिप्पामेव ममेयं
पच्चप्पिणह ।"
तए णं ते कोडुंबिय पुरिसा
जाव पच्चप्पिणंति ।७।

[संस्कृत छाया]

ततः खलु सः श्रेणिकः राजा अस्याः
कथायाः लब्धार्थः सन्
कौटुम्बिक पुरुषान् शब्दयति,
शब्दयित्वा एवम् अवदत्—
"एवं खलु देवानुप्रियाः !
अर्जुनकः मालाकारः यावत्
घातयन् विहरति ।
तस्मात् मा खलु युष्माकं (मध्ये) कोऽपि
तृणस्य वा काष्ठस्य वा पानीयस्य वा
पुष्पफलानां वा अर्थाय सकृदपि
निर्गच्छतु मा खलु तस्य
शरीरस्य व्यापत्तिः भविष्यति ।
इति कृत्वा द्वितीयमपि तृतीयमपि
घोषणाम् घोषयत,
घोषयित्वा क्षिप्रमेव ममैतामाज्ञाम्
प्रत्यर्पयत ।"
ततः खलु ते कौटुम्बिक पुरुषाः
यावत् प्रत्यर्पयन्ति ।७।

सूत्र ८

तत्थ णं रायगिहे णयरे सुदंसणे
णामं सेठ्ठी परिवसइ, अड्ढे
जाव अपरिभूए ।
तए णं से सुदंसणे समणोवासए
यावि होत्था ।
अभिगयजीवाजीवे जाव विहरइ ।
तेणं कालेणं तेणं समयेणं

तत्र खलु राजगृहे नगरे सुदर्शनः
नाम श्रेष्ठी परिवसति, आढ्यः
यावत् अपरिभूतः ।
ततः खलु सः सुदर्शनः श्रमणोपासकः
चापि अभवत् ।
अभिगत जीवाजीवः यावत् विहरति ।
तस्मिन् काले तस्मिन् समये

[हिन्दी शब्दार्थ]

इसके बाद राजा श्रेणिक को जब
यह बात मालूम हुई तब उन्होंने
अपने सेवकों को बुलाया
और बुलाकर इस प्रकार कहा
"हे देवानुप्रियो !
अर्जुन माली यावत् (सात जनों को)
मारता हुआ घूम रहा है।
इसलिये तुम में से कोई भी घास के
लिए, काष्ठ के लिये, जल के
लिये अथवा फल फूलादि के लिये
एकबार भी बाहर मत निकलो जिससे
कि तुम्हारे शरीर का नाश न होवे।
इस प्रकार दूसरी बार भी
तीसरी बार भी घोषणा करो।
घोषणा करके शीघ्र ही मुझे इस की
वापस सूचना दो।"
तदनन्तर उन आज्ञाकारी पुरुषों ने
यावत् वापस सूचित कर दिया ।७।

[हिन्दी अर्थ]

इसके बाद जब श्रेणिक राजा ने यह बात सुनी तो उन्होंने अपने सेवक पुरुषों को बुलाया और उनको इस प्रकार कहा— 'हे देवानुप्रियो ! राजगृह नगर के बाहर अर्जुनमाली यावत् छः पुरुष और एक स्त्री इस प्रकार सात व्यक्तियों को प्रतिदिन मारता हुआ घूम रहा है।

इसलिये तुम सारे नगर में मेरी आज्ञा को इस प्रकार प्रसारित करो कि यदि नागरिकों की इच्छा जीवित रहने की हो तो कोई तृण के लिये काष्ठ, पानी अथवा फल फूल के लिये राजगृह नगर के बाहर न निकले। यदि वे कहीं बाहर निकले, तो ऐसा न हो कि उनके शरीर का विनाश हो जाय।

हे देवानुप्रियो ! इस प्रकार दो तीन बार घोषणा करके मुझे सूचित करो।'

इस प्रकार राजाज्ञा पाकर राज्याधिकारियों ने राजगृह नगर में घूम घूम कर उपरोक्त राजाज्ञा की घोषणा की और घोषणा करके राजा को सूचित कर दिया।

सूत्र ८

वहाँ राजगृह नगर में सुदर्शन नामक
सेठ रहता था, वह धन सम्पन्न एवं
यावत् अपराजित था।
वह सुदर्शन श्रमणोपासक
भी था। यावत्
वह जीवाजीव का जानकार था
उस काल उस समय में

उस राजगृह नगर में सुदर्शन नाम के एक धनाढ्य सेठ रहते थे, जो अपराभूत थे। श्रमणोपासक श्रावक थे और जीव अजीव आदि नवतत्त्वों के ज्ञाता थे। यावत् श्रमणों को प्रतिलाभ देने वाले थे।

उस काल उस समय श्रमण भगवान् महावीर स्वामी धर्मोपदेश देते हुए राजगृह पधारे और बाहर उद्यान में ठहरे।

[मूल सूत्र पाठ]

समणे भगवं महावीरे
समोसढे जाव विहरइ ।
तए णं रायगिहे णयरे
सिंघाडग जाव महापहेसु
वहुजणो अण्णमण्णस्स
एवमाइक्खइ—जाव किमंग
पुण विउलस्स अट्ठस्स
गहणयाए ?
तए णं तस्स सुदंसणस्स
वहुजणस्स अंतिए एयमट्ठं
सोच्चा णिसम्म अयं अज्झत्थिए
जाव समुप्पण्णे ।
एवं खलु समणे भगवं महावीरे
जाव विहरइ ।
तं गच्छामि णं समणं भगवं
महावीरं वंदामि णमंसामि
एवं संपेहेइ, संपेहित्ता
जेणेव अम्मापियरो तेणेव
उवागच्छइ, उवागच्छित्ता
करयल परिग्गहियं जाव एवं वयासी—
एवं खलु अम्मयाओ ! समणे
भगवं महावीरे जाव विहरइ ।
तं गच्छामि णं समणं भगवं
महावीरं वंदामि णमंसामि
जाव पज्जुवासामि ।८।

[संस्कृत छाया]

श्रमणो भगवान् महावीरः
समवसृतः यावत् विहरति ।
ततः खलु राजगृहे नगरे
शृंगाटक यावत् महापथेषु
वहुजनः अन्योन्यस्मै
एवमाख्याति—यावत् किमंगः।
पुनः विपुलस्य अर्थस्य
ग्रहणेन ?
ततः खलु तस्य सुदर्शनस्य
वहुजनस्य अन्तिके एतमर्थम्
श्रुत्वा निशम्य अयमाध्यात्मिकः
यावत् समुत्पन्नः ।
एवं खलु श्रमणो भगवान् महावीरः
यावत् विहरति ।
तत् गच्छामि खलु श्रमणं भगवन्तं
महावीरम् वन्दामि नमस्यामि
एवं संप्रेक्षते, संप्रेक्ष्य
यत्रैव अम्बापितरौ तत्रैव
उपागच्छति, उपागत्य
करतल परिगृहीतं यावदेवमवदत्-
एवं खलु अम्वा तातौ ! श्रमणः
भगवान् महावीरः यावत् विहरति ।
तत् गच्छामि खलु श्रमणं भगवन्तं
महावीरं वन्दे नमस्यामि
यावत् पर्युपासे ।८।

[हिंदी शब्दार्थ]

श्रमण भगवान् महावीर
पधारे यावत् विचरने लगे ।
तब राजगृह नगर में
शृंगाटक आदि महापथों में
बहुत से लोग परस्पर यह कहने लगे—
जिनका नाम-गोत्र श्रवण ही
महाफलदायी होता है, फिर
उनके प्ररूपित धर्म का विपुल अर्थ
ग्रहण का लाभ तो अवर्णनीय है ।
तब बहुत से व्यक्तियों के मुख से
भगवान के पधारने का वृत्तान्त
सुनकर सुदर्शन के मन में इस प्रकार
का अध्यवसाय यावत् उत्पन्न हुआ ।
श्रमण भगवान् महावीर यावत् राजगृह
नगर के बाहर विचरण कर रहे हैं ।
अत मैं श्रमण भगवान् महावीर को
वन्दन नमस्कार करने हेतु जाऊँ ।
इस प्रकार विचार किया, करके
जहाँ उसके माता पिता थे वहाँ
आया, आकर दोनों हाथ
जोड़कर यावत् यों कहने लगा—
हे माता पिता ! श्रमण भगवान्
महावीर यावत् पधारे हैं । इस कारण
मैं उनकी सेवा में जाऊ और उनको
वदन नमस्कार करू, यावत् सेवा करूँ
ऐसी मेरी इच्छा है ।८।

[हिंदी अर्थ]

उनके पधारने का समाचार सुनकर राजगृह नगर के शृगाटक राजमार्ग आदि स्थानों में बहुत से नागरिक लोग परस्पर इस प्रकार वार्तालाप करने लगे-हे देवानुप्रियो ! श्रमण भगवान् महावीर स्वामी यहा पधारे है, जिनके नाम गोत्र के सुनने से भी महाफल होता है तो उनके दर्शन करने, वाणी सुनने तथा उनके द्वारा प्ररूपित धर्म का विपुल अर्थ ग्रहण करने से जो फल होता है उसका तो कहना ही क्या ? वह तो अवर्णनीय है ।

इस प्रकार बहुत से नागरिकों के मुख से भगवान् के पधारने का समाचार सुनकर उस सुदर्शन सेठ के मन मे इस प्रकार विचार उत्पन्न हुआ-

"निश्चय ही ! श्रमण भगवान् महावीर नगर में पधारे हैं और बाहर गुणशीलक उद्यान में विराजमान है, इसलिये मैं जाऊ और उन श्रमण भगवान् महावीर को वदन-नमस्कार करू !"

ऐसा सोचकर वे अपने माता पिता के पास आये और हाथ जोड़कर इस प्रकार बोले "निश्चय ही हे माता-पिता ! श्रमण भगवान् महावीर स्वामी नगर के बाहर उद्यान में विराज रहे हैं। अत मैं चाहता हू कि उनकी सेवा में जाऊ और उन्हें वदन-नमस्कार करू ।"

[मूल सूत्र पाठ]   [संस्कृत छाया]

सूत्र ९

तए णं तं सुदंसणं सेट्ठिं अम्मापियरो
एवं वयासी—
एवं खलु पुत्ता ! अज्जुणए माला
गारे जाव घाएमाणे विहरइ,
तं मा णं तुमं पुत्ता ! समणं भगवं
महावीरं वंदए णिगच्छाहि,
माणं तव सरीरयस्स वावत्ती
भविस्सइ । तुमं णं इहगए
चेव समणं भगवं महावीरं
वंदाहि णमंसाहि ।
तए णं सुदंसणे सेट्ठी अम्मापियरं
एवं वयासी-
किण्णं अहं अम्मयाओ! समणं
भगवं महावीरं इहमागयं
इह पत्तं इह समोसढं
इह गए चेव वंदिस्सामि णमंसिस्सामि?
तं गच्छामि णं अहं अम्मयाओ !
तुब्भेहिं अब्भणुण्णाए समाणे
समणं भगवं महावीरं वंदामि
जाव पज्जुवासामि ।९।

ततः खलु तं सुदर्शनं श्रेष्ठिनम्
अम्बापितरौ एवमवदताम्—
एवं खलु पुत्र ! अर्जुनकः माला-
कारः यावत् घातयन् विहरति,
तद् मा खलु त्वं हे पुत्र! श्रमणं भगवन्तं
महावीरं वन्दको निर्गच्छ,
मा खलु तव शरीरस्य व्यापत्तिः
भविष्यति । त्वं खलु इहगत
एव श्रमणं भगवन्तं महावीरम्
वन्दस्व, नमस्य ।
ततः खलु सुदर्शनः श्रेष्ठी अम्बापितरौ
एवमवदत्—
किं खलु अहं अम्बातातौ !
श्रमणं भगवन्तं महावीरम् इह
आगतम्, इह प्राप्तम्, इह समवसृतम्,
इहगतैव वन्दिष्ये नमस्यिष्यामि ?
तद् गच्छामि खलु अहम् अम्बातातौ !
युष्माभिः अभ्यनुज्ञातः सन्
श्रमणं भगवन्तं महावीरं वन्दे
यावत् पर्युपासे ।९।

सूत्र १०

तए णं तं सुदंसणं सेट्ठिं
अम्मापियरो जाहे णो संचायंति,
बहूहिं आघवणाहिं ४ जाव परूवेत्तए ।

ततः खलु तं सुदर्शनं श्रेष्ठिनम्
अम्बापितरौ यदा न शक्नुतः बहुभिः
आख्यायनाभिः यावत् प्ररूपणाभिः ।

[हिन्दी शब्दार्थ] [हिन्दी अर्थ]

सूत्र ६

यह सुनकर माता पिता सुदर्शन सेठ को इस प्रकार बोले—

हे पुत्र ! निश्चय अर्जुन मालाकार यावत् मारता हुआ घूम रहा है। इसलिये हे पुत्र ! तुम श्रमण भगवान् महावीर को वन्दन करने हेतु बाहर मत जाओ, कदाचित् तुम्हारे शरीर की हानि हो जाय, अतः तुम यहीं रहते हुए ही श्रमण भगवान महावीर को वन्दना नमस्कार कर लो।

तब सुदर्शन सेठ ने अपने माता पिता को इस प्रकार कहा—

हे माता पिता ! जब श्रमण भगवान् महावीर यहाँ पधारे हैं, यहाँ विराजे हैं, यहाँ समवसृत हुए हैं, तो मैं यहाँ से ही कैसे वन्दन नमस्कार करूँ ? इसलिये हे मातापिता! आप आज्ञा दीजिये, मैं श्रमण भगवान महावीर के पास जाकर वन्दन नमस्कार करूँ और यावत् सेवा करूँ ।६।

सुदर्शन की यह बात सुनकर माता पिता इस प्रकार बोले—"हे पुत्र ! इस नगर के बाहर अर्जुनमाली छह पुरुष और एक स्त्री इस तरह सात व्यक्तियों को नित्यप्रति मारता हुआ घूम रहा है इसलिये हे पुत्र ! तुम श्रमण भगवान् महावीर को वंदन करने के लिये नगर के बाहर मत निकलो। नगर के बाहर निकलने से सम्भव है तुम्हारे शरीर को कोई हानि हो जाय। इसलिये यही अच्छा है कि तुम यहीं से श्रमण भगवान् महावीर को वंदन-नमस्कार करलो।"

तब सुदर्शन सेठ माता पिता से इस प्रकार बोले—"हे माता-पिता ! जब श्रमण भगवान् महावीर यहां पधारे हैं, यहां समवसृत हुए हैं और बाहर उद्यान में विराजे हैं तो मैं उनको यहीं से वंदना-नमस्कार करूं यह कैसे हो सकता है। इसलिए हे माता पिता ! आप मुझे आज्ञा दीजिये कि मैं वहीं जाकर श्रमण भगवान् महावीर को वंदना करू, नमस्कार करू, यावत् उनकी पर्युपासना करू।"

सूत्र १०

तदनन्तर उस सुदर्शन सेठ को माता-पिता जब नहीं समझा सके, अनेक प्रकार की युक्तियों से

उस सुदर्शन सेठ को माता पिता जब अनेक प्रकार की युक्तियों से भी नहीं समझा सके, तब माता-पिता ने अनिच्छा

[हिन्दी अन्वय]

तब माता पिता ने अनिच्छापूर्वक ही
सुदर्शन सेठ को इस प्रकार कहा—
जैसे सुख हो वैसे ही करो ।
तब उस सुदर्शन सेठ ने
माता पिता की आज्ञा पाकर
स्नान किया और धर्म सभा में
जाने योग्य शुद्ध वस्त्र यावत्
धारण किये यावत् अपने घर से
निकला निकलकर
पैदल चलते हुए ही राजगृह
नगर के मध्य से होता हुआ निकला
निकलकर मुद्गरपाणियक्ष के यक्षा-
यतन के पास से होते हुए जहाँ
पर गुणशील नामक उद्यान और जहाँ
श्रमण भगवान् महावीर हैं
उस ओर जाने लगा ।
तब उस मुद्गरपाणियक्ष ने
सुदर्शन श्रमणोपासक को
समीप से ही जाते हुए देखा और
देखकर शीघ्र क्रुद्ध हुआ और उस
हजारपल भारवाले लोहे के
मुद्गर को घुमाते घुमाते
जहाँ सुदर्शन श्रमणोपासक था
वहाँ चलकर आने लगा ।१०।

[हिन्दी अर्थ]

पूर्वक इस प्रकार कहा—"हे पुत्र ! फिर जिस प्रकार तुम्हें सुख उपजे वैसा करो ।"

इस प्रकार सुदर्शन सेठ ने माता-पिता से आज्ञा प्राप्त करके स्नान किया और धर्मसभा में जाने योग्य शुद्ध वस्त्र धारण किये । फिर अपने घर से निकला और पैदल ही राजगृह नगर के मध्य से चलकर मुद्गरपाणि यक्ष के यक्षायतन के न अति दूर से और न अति निकट से ही होते हुए गुणशील उद्यान की ओर, जहाँ श्रमण भगवान् महावीर विराजित थे, निकलने लगे ।

सुदर्शन सेठ को अपने यक्षायतन के पास से निकलते हुए देखकर वह मुद्गरपाणि यक्ष बड़ा क्रुद्ध हुआ और क्रुद्ध होकर उस हजार पल के वजन वाले लोह मुद्गर को घुमाते हुए उसकी ओर दौड़ा ।

सूत्र ११

तब सुदर्शन श्रमणोपासक ने
मुद्गरपाणि यक्ष को आते हुए को

उस समय उस क्रुद्ध मुद्गरपाणि यक्ष को अपनी ओर आता हुआ देखकर वे

[मूल सूत्र पाठ]	[संस्कृत छाया]
पासइ, पासित्ता अभीए,	पश्यति, दृष्ट्वा अभीतः
अतत्थे, अणुव्विग्गे, अक्खुब्भिए,	अत्रस्तः, अनुद्विग्नः, अक्षुब्धः
अचलिए, असंभंते, वत्थं तेणं	अचलितः, असंभ्रान्तः, वस्त्रान्तेन
भूमिं पमज्जइ,	भूमिं प्रमार्जयति,
पमज्जित्ता करयल एवं वयासी—	प्रमार्ज्य करतल परिगृहीतः एवमवदत्
णमोत्थु णं अरिहंताणं	नमोऽस्तु खलु अर्हद्भ्यो
भगवंताणं जाव संपत्ताणं ।	भगवद्भ्यो यावत् संप्राप्तेभ्यः ।
णमोत्थुणं समणस्स जाव	नमोऽस्तु खलु श्रमणाय यावत्
संपाविउकामस्स ।	संप्राप्तुकामाय ।
पुव्विं च णं मए भगवओ	पूर्वं च खलु मया भगवतः
महावीरस्स अंतिए थूलए	महावीरस्य अन्तिके स्थूलकः
पाणाइवाए पच्चक्खाए	प्राणातिपातः प्रत्याख्यातः
जावज्जीवाए ३	यावज्जीवम् । (एवं)
थूलए मुसावाए, थूलए	स्थूलकः मृषावादः, स्थूलकं
अदिण्णादाणे सदारसंतोसे	अदत्तादानं (प्रत्याख्यातम्)
कए जावज्जीवाए,	स्वदारसन्तोषः कृतः यावज्जीवम्
इच्छा परिमाणे कए	इच्छापरिमाणः कृतः
जावज्जीवाए ।	यावज्जीवम् ।
तं इयाणिं पि णं तस्सेव अंतियं	तदिदानीमपि खलु तस्यैव अन्तिके
सव्वं पाणाइवायं, पच्चक्खामि	सर्वं प्राणातिपातं प्रत्याख्यामि
जावज्जीवाए, सव्वं मुसावायं,	यावज्जीवम्, सर्वं मृषावादं
सव्वं अदिण्णादाणं, सव्वं मेहुणं,	सर्वमदत्तादानं, सर्वं मैथुनम्
सव्वं परिग्गहं पच्चक्खामि	सर्वं परिग्रहं प्रत्याख्यामि
जावज्जीवाए,	यावज्जीवम्
सव्वं कोहं जाव मिच्छादंसणसल्लं	सर्वं क्रोधम् यावत् मिथ्या दर्शनशल्यम्
पच्चक्खामि	प्रत्याख्यामि
जावज्जीवाए,	यावज्जीवम् ।

[हिन्दी शब्दार्थ]

देखा और देखकर वह डरा नहीं, त्रास, उद्वेग एव क्षोभ रहित अचल भ्रान्त हुए बिना, वस्त्र के छोर से भूमि का प्रमार्जन किया, करके दोनों हाथ जोडकर इस प्रकार बोला— नमस्कार हो अरिहत भगवान् यावत् मोक्षप्राप्त सिद्धों को नमस्कार हो। नमस्कार हो प्रभु महावीर को। यावत् मुक्ति पाने वाले श्रमणाविकों को मैंने पहले ही श्रमण भगवान महावीर के पास स्थूल प्राणातिपात का आजीवन प्रत्याख्यान अर्थात् त्याग किया है। इस प्रकार स्थूल मृषावाद, स्थूल अदत्तादान का भी त्याग किया है। स्वदार सतोष और इच्छापरिमाण रूप स्थूल परिग्रह विरमण व्रत जीवन भर के लिए ग्रहण किया है। अब भी मैं उन्हीं भगवान के पास (साक्षी से) सर्वथा प्राणातिपात का यावज्जीवन त्याग करता हू तथा सम्पूर्ण मृषावाद, सर्व विध अदत्तादान, सर्वविध मैथुन एव सम्पूर्ण परिग्रह का आजीवन त्याग करता हूँ। मैं सर्वथा क्रोध यावत् मिथ्या दर्शनशल्य तक के समस्त (१८) पापों का भी आजीवन त्याग करता हूँ।

[हिन्दी अर्थ]

सुदर्शन श्रमणोपासक मृत्यु की सभावना को जानकर भी किंचित् भी भय, त्रास, उद्वेग अथवा क्षोभ को प्राप्त नही हुए। उनका हृदय तनिक भी विचलित अथवा भयाक्रान्त नही हुआ।

उन्होंने निर्भय होकर अपने वस्त्र के अचल से भूमि का प्रमाजन किया और मुख पर उत्तरासग धारण किया। फिर पूर्व दिशा की ओर मुह करके बैठ गये। बैठकर बाए घुटने को ऊचा किया और दोनों हाथ जोडकर मस्तक पर अजुलि-पुट रखा।

इसके बाद इस प्रकार बोले—

"सर्वप्रथम मैं उन सभी अरिहन्त भगवन्तों को, जो भूतकाल मे मोक्ष पधार गये हैं, एव श्रमण भगवान् महावीर स्वामी सहित उन सभी अरिहन्तों को, जो भविष्य में मोक्ष में पधारने वाले हैं, नमस्कार करता हू।"

"मैंने पहले श्रमण भगवान् महावीर के पास स्थूल प्राणातिपात का आजीवन त्याग (प्रत्याख्यान) किया, स्थूल मृषावाद, स्थूल अदत्तादान का त्याग किया स्वदार सतोष और इच्छा परिमाण रूप स्थूल परिग्रह विरमण व्रत जीवन भर के लिये ग्रहण किया,अब उन्ही भगवान् महावीर स्वामी की साक्षी से प्राणातिपात, मृषावाद, अदत्तादान, मैथुन और सपूर्ण-परिग्रह का सर्वथा आजीवन त्याग करता हू। क्रोध मान माया लोभ यावत् मिथ्यात्व दर्शन शल्य तक १८ पापों का भी सर्वथा आजीवन त्याग करता हू। सब प्रकार का अशन पान, खादिम और स्वादिम इन चारों प्रकार के आहार का भी त्याग करता हू।

यदि मैं इस आसन्न मृत्यु उपसर्ग से बच गया तो इस त्याग का पारण करके-

[हिन्दी शब्दार्थ]

मैं सर्व प्रकार के
अशन, पान, खाद्य व स्वाद्य चारों ही
आहार को भी आजीवन छोड़ता हूँ।
यदि इस उपसर्ग से छूटता हूँ तो मुझे
पारना आहारादि करना कल्पता है।
पर यदि इस उपसर्ग से मुक्त न होऊँ तो
मुझे इस प्रकार का सम्पूर्ण त्याग है।
ऐसा विचार करके सागारी पडिमा
(अनशन व्रत) धारण कर लिया।
तदनन्तर वह मुद्गरपाणियक्ष उस
हजार पल भारी लोहे के मुद्गर को
घुमाता घुमाता हुआ जहाँ पर सुदर्शन
श्रमणोपासक था वहाँ आया, (परन्तु
वहाँ) आकर (भी) वह सुदर्शन श्रमणो-
पासक को किसी भी प्रकार अपने तेज से
विचलित करने में समर्थ नहीं हुआ।
फिर वह मुद्गरपाणि
यक्ष सुदर्शन श्रमणोपासक के
चारों ओर घूमते हुए
घूमते हुए जब नहीं
सुदर्शन श्रमणोपासक को
अपने तेज से पराजित कर सका,
तब सुदर्शन श्रमणोपासक के
सामने खड़ा रहकर उस
सुदर्शन श्रमणोपासक को अनिमेष
दृष्टि से चिरकाल तक देखता रहा।

[हिन्दी अर्थ]

आहारादि ग्रहण करूंगा। पर यदि इस उपसर्ग से मुक्त न होऊं न बचूं तो मुझे इस प्रकार का सपूर्ण त्याग यावज्जीवन है।

ऐसा निश्चय करके उन सुदर्शन सेठ ने उपरोक्त प्रकार से सागारी पडिमा-अनशन व्रत धारण कर लिया।

इधर वह मुद्गरपाणि यक्ष उस हजार पल के लोहमय मुद्गर को घुमाता हुआ जहाँ सुदर्शन श्रमणोपासक था वहां आया। परन्तु सुदर्शन श्रमणोपासक को अपने तेज से अभिभूत नहीं कर सका अर्थात् उसे किसी प्रकार से कष्ट नहीं पहुंचा सका।

मुद्गरपाणि यक्ष सुदर्शन श्रावक के चारों ओर घूमता रहा और जब उसको अपने तेज से पराजित नहीं कर सका तब सुदर्शन श्रमणोपासक के सामने आकर खड़ा हो गया और अनिमेष दृष्टि से बहुत देर तक उन्हें देखता रहा।

इसके बाद उस मुद्गरपाणि यक्ष ने अर्जुनमाली के शरीर को छोड़ दिया और

[हिन्दी शब्दार्थ]

देखकर अर्जुन मालाकार के शरीर को छोड दिया, छोडकर (शरीर से निकल कर) उस सहस्रपल भारवाले लोहे के मुद्गर को लेकर जिस दिशा से आया था उसी दिशा की ओर चला गया।

[हिन्दी अर्थ]

उस हजार पल भार वाले लोहमय मुद्गर को लेकर जिस दिशा से आया था, उसी दिशा की ओर चला गया।

सूत्र १२

[हिन्दी शब्दार्थ]

तदनन्तर वह अर्जुनमाली मुद्गरपाणि यक्ष से मुक्त होने पर 'धस्' ऐसी आवाज के साथ सर्वांग से भूमि पर गिर पड़ा। तब सुदर्शन श्रावक ने अपने को निरुपसर्ग जानकर अपनी प्रतिज्ञा पूर्ण की (ध्यान खुला किया) इधर वह अर्जुन मालाकार मुहूर्त भर के पश्चात् स्वस्थ होकर वहां से उठा, उठकर सुदर्शन श्रावक से यों बोला—
"हे देवानुप्रिय ! आप कौन हो और कहां जा रहे हो ?"
तब सुदर्शन श्रावक ने अर्जुनमाली को इस प्रकार कहा—
"हे देवानुप्रिय !
मैं सुदर्शन नामक श्रमणोपासक जीवाजीवादि का जानने वाला गुणशिलक उद्यान में श्रमण

[हिन्दी अर्थ]

मुद्गरपाणि यक्ष से मुक्त होते ही वह अर्जुन मालाकार 'धस' इस प्रकार के शब्द के साथ भूमि पर गिर पड़ा।

तब सुदर्शन श्रमणोपासक ने अपने को उपसर्ग रहित हुआ जानकर अपनी सागारी त्याग प्रत्याख्यान रूपी प्रतिज्ञा को पाला और अपना ध्यान खोला।

इधर वह अर्जुनमाली मुहूर्त भर (कुछ समय) के पश्चात् आश्वस्त एवं स्वस्थ होकर उठा और सुदर्शन श्रमणोपासक को सामने देखकर इस प्रकार बोला- "हे देवानुप्रिय! आप कौन हो, तथा कहां जा रहे हो ?"

यह सुनकर सुदर्शन श्रमणोपासक अर्जुनमाली से इस तरह बोला- 'हे देवानुप्रिय! मैं जीवादि नौ तत्त्वों का ज्ञाता सुदर्शन नाम का श्रमणोपासक हूं और गुणशील उद्यान में

[हिन्दी शब्दार्थ]

भगवान महावीर को वन्दना नमस्कार करने के लिये जा रहा हू ।

[हिन्दी अर्थ]

श्रमण भगवान् महावीर को वंदन नमस्कार करने जा रहा हू।"

सूत्र १४

तब वह अर्जुन माली सुदर्शन श्रमणोपासक से इस प्रकार बोला—
हे देवानुप्रिय !
मैं भी चाहता हू तुम्हारे साथ श्रमण भगवान महावीर को वन्दन नमस्कार यावत् उनकी सेवा करने के लिए आना।
"हे देवानुप्रिय ! जैसे सुख हो वैसे करो"
इसके बाद वह सुदर्शन श्रमणोपासक अर्जुन मालाकार के साथ जहाँ गुणशिलक उद्यान था, जहा श्रमण भगवान विराजते थे वहाँ आया और आकर अर्जुन मालाकार के साथ श्रमण भगवान महावीर को तीन बार वंदन करके सेवा करने लगा।
उस समय श्रमण भगवान महावीर ने सुदर्शन श्रमणोपासक अर्जुन माली और उस विशाल सभा के सम्मुख धर्म कथा कही । धर्मकथा सुनकर सुदर्शन वापस लौट गया।१४।

यह सुनकर अर्जुनमाली सुदर्शन श्रमणोपासक से इस प्रकार बोला– हे देवानुप्रिय! मैं भी तुम्हारे साथ श्रमण भगवान् महावीर की वदना नमस्कार करता यावत् सेवा करना चाहता हू ।"

श्रीसुदर्शन—"हे देवानुप्रिय ! जैसा तुम्हें सुख हो वैसा करो।"

इसके बाद वह सुदर्शन श्रमणोपासक अर्जुनमाली के साथ जहाँ गुणशील उद्यान में श्रमण भगवान् महावीर विराजमान थे, वहाँ आया और अर्जुनमाली के साथ श्रमण भगवान् महावीर को तीन बार प्रदक्षिणा पूर्वक वदन-नमस्कार कर उनकी सेवा करने लगा।

उस समय श्रमण भगवान् महावीर ने सुदर्शन श्रमणोपासक अर्जुनमाली और उस विशाल सभा के सम्मुख धर्म कथा कही। सुदर्शन धर्म कथा सुनकर अपने घर लौट गया।

सूत्र १५

तब वह अर्जुन मालाकार श्रमण भगवान महावीर के पास

इधर अर्जुनमाली श्रमण भगवान् महावीर के पास धर्मोपदेश सुनकर एव धारण

[हिन्दी शब्दार्थ]	[हिन्दी अर्थ]
धर्मोपदेश सुनकर एवं धारणकर बडा प्रसन्न हुआ और इस प्रकार बोला—हे भगवन ! मैं निर्ग्रन्थ प्रवचन पर श्रद्धा रुचि करता हूँ यावत् आपके चरणों में व्रत लेना चाहता हूँ । "हे देवानुप्रिय! जैसे सुख हो वैसा करो" तदनन्तर वह अर्जुन माली ईशान कोण में गया जाकर स्वयं ही पाँचमुट्ठियों का लोंच किया और यावत् अनगार हो गये और संयम तप से वे विचरने लगे । इसके पश्चात् अर्जुन मुनि ने जिस दिन मुंडित हो प्रव्रज्या ग्रहण की उसी दिन श्रमण भगवान महावीर को वंदन नमस्कार किया । वंदन नमस्कार करके इस प्रकार का अभिग्रह स्वीकार किया—आज से मैं निरन्तर बेले बेले की तपस्या से आजीवन आत्मा को भावित करते हुए विचरूंगा । यह मन में सोचकर तथा इस प्रकार के अभिग्रह को लेकर जीवन भर के लिए यावत् विचरण करने लगे ।	कर बडा प्रसन्न हुआ और प्रभु महावीर से इस प्रकार बोला— "हे भगवन ! मैं आप द्वारा कहे हुए निग्रन्थ प्रवचन पर श्रद्धा करता हू, रुचि करता हू, यावत् आपके चरणों में व्रत लेना चाहता हू।" प्रभु महावीर— "हे देवानुप्रिय ! जैसा तुम्हें सुख हो, वैसा करो ।" तब उस अर्जुनमाली ने ईशान कोण में जाकर स्वयं ही पचमौष्टिक लुचन किया, लुचन करके वे अनगार हो गये और सयम व तप से विचरने लगे । अर्जुन माली अब अर्जुन मुनि हो गये । इसके पश्चात् अर्जुन मुनि ने जिस दिन मुंडित हो प्रव्रज्या ग्रहण की, उसी दिन श्रमण भगवान् महावीर को वंदना नमस्कार करके इस प्रकार का अभिग्रह धारण किया- "आज से मैं निरतर बेले बेले की तपस्या से आजीवन आत्मा को भावित करते हुए विचरूंगा ।" ऐसा अभिग्रह जीवन भर के लिए स्वीकार कर अर्जुन मुनि विचरने लगे ।

सूत्र १६

इसके बाद वह अर्जुन मुनि बेले की तपस्या के पारणे के दिन प्रथम	इसके पश्चात् अर्जुन मुनि बेले की तपस्या के पारणे के दिन प्रथम प्रहर में

[मूल सूत्र पाठ]

पोरिसीए सज्झायं करेइ,
जहा गोयमसामी जाव अडइ ।
तए णं तं अज्जुणयं अणगारं
रायगिहे णयरे उच्चणीय जाव
अडमाणं वहवे इत्थिओ य
पुरिसा य डहरा य महल्ला य
जुवाणा य एवं वयासी—
"इमेणं मे पिया मारिए,
इमेणं मे माया मारिया,
भाया मारिए, भगिणी मारिया,
भज्जा मारिया, पुत्ते मारिए,
धूया मारिया, सुण्हा मारिया
इमेणं मे अण्णयरे सयण-
संबंधि-परियणे मारिए ।"
त्तिकट्टु अप्पेगइया अक्कोसंति,
अप्पेगइया हीलंति, णिंदंति,
खिसंति, गरिहंति, तज्जेंति,
तालेंति ।

[संस्कृत छाया]

पौरुष्यां स्वाध्यायं करोति,
यथा गौतम स्वामी यावदटति ।
ततः खलु तं अर्जुनकं अनगारं
राजगृहे नगरे उच्चनीचं यावत्
अटन्तं बहवः स्त्रियश्च
पुरुषाश्च डहराश्च महान्तश्च
युवानश्च एवमवदन्—
"अनेन खलु मे पिता मारितः,
अनेन खलु मे माता मारिता,
भ्राता मारितः, भगिनी मारिता,
भार्या मारिता, पुत्रः मारितः
दुहिता मारिता, स्नुषा मारिता,
अनेन खलु मे अन्यतरः स्वजन-
सम्बन्धि-परिजनः मारितः ।"
इति कृत्वा अप्येके आक्रोशन्ति
अप्येके हीलन्ति, निन्दन्ति,
खिसन्ति, गर्हन्ते, तर्जयन्ति,
ताडयन्ति ।

सूत्र १७

तए णं से अज्जुणए अणगारे
तेहिं बहूहिं इत्थीहि य पुरिसेहि य
डहरेहिं य महल्लेहिं य
जुवाणएहिं य आओसेज्जमाणे
जाव तालेज्जमाणे तेसिं मणसा
वि अप्पउस्समाणे सम्मं सहइ,
सम्मं खमइ, सम्मं तितिक्खइ,
सम्मं अहियासेइ,

ततः खलु सः अर्जुनः अनगारः
तैः बहुभिः स्त्रीभिश्च पुरुषैश्च
डहरैश्च महद्भिश्च
युवभिश्च आक्रुश्यमानः
यावत् ताड्यमानः तेभ्यः मनसा
अपि अप्रदुष्यन् सम्यक् सहते,
सम्यक् क्षमते, सम्यक् तितिक्षते,
सम्यक् अधिसहते,

[हिन्दी शब्दार्थ]

प्रहर में स्वाध्याय करते, गौतम स्वामी
के समान यावत् भ्रमण करते
उस समय अर्जुन मुनि को
राजगृह नगर में उच्चनीच कुलों में यावत्
घूमते हुए को बहुत सी स्त्रियां,
पुरुष, छोटे बच्चे, बड़े बूढ़े
और जवान इस प्रकार कहने लगे—
"इसने मेरे पिता को मारा है,
इसने मेरी माता को मारा है,
भाई को मारा है, बहिन को मारा है,
पत्नी को मारा है, पुत्र को मारा है,
लड़की को मारा है, पुत्रवधु को मारा है,
इसने मेरे अमुक स्वजन
सम्बन्धी परिजन को मारा है
ऐसा कहकर कोई गाली देते,
कोई हीलना या निन्दा करते,
खिजाते, गर्हा करते, तर्जना करते,
कोई ताड़ना भी कर देते ।

[हिन्दी अर्थ]

ध्यान करते एवं तीसरे प्रहर में राजगृह नगर में भिक्षार्थ भ्रमण करते ।

उस समय उस अर्जुन मुनि को राजगृह नगर में उच्च-नीच मध्यम कुलों में भिक्षार्थ घूमते हुए देखकर नगर के अनेक नागरिक स्त्री पुरुष आबाल वृद्ध इस प्रकार कहते—

"इसने मेरे पिता को मारा है, इसने मेरी माता को मारा है, भाई को मारा है, बहन को मारा है, भार्या को मारा है, पुत्र को मारा है, कन्या को मारा है, पुत्र वधू को मारा है, एवं इसने मेरे अमुक स्वजन संबंधी को मारा है ।"

ऐसा कहकर कोई गाली देता, कोई हीलना करता, अनादर करता, निन्दा करता, कोई जाति आदि का दोष बताकर गर्हा करता, कोई भय बताकर तर्जना करता, और कोई थप्पड़, ईंट, पत्थर, लाठी आदि से भी मारता ।

सूत्र १७

तब वह अर्जुन अनगार
उन बहुत सी स्त्रियों से, पुरुषों से,
बच्चों से, बूढ़ों से
और तरुणों से तिरस्कृत यावत्
ताड़ित होने पर भी उन पर मन से
भी द्वेष नहीं करते हुए सम्यक् प्रकार से
सहते, क्षमा करते, तितिक्षा रखते,
निर्जरा समझकर हर्षानुभव करते ।

इस प्रकार उन बहुत से स्त्री पुरुष, बच्चे बूढ़े और जवानों से आक्रोश-गाली, एवं विविध प्रकार की ताड़ना तर्जना आदि पाकर के भी वह अर्जुन मुनि उन पर मन से भी द्वेष नहीं करते हुए उनके द्वारा दिये गये सभी परीषहों को समभावपूर्वक सहन करते, प्रतिकार कर सकने की स्थिति मे होते हुए भी क्षमा-भाव धारण करते हुए उन कष्टो को प्रसन्नतापूर्वक झेल लेते एवं निर्जरा का लाभ समझकर हर्षानुभव करते । सम्यग्

[मूल सूत्र पाठ]	[संस्कृत छाया]
सम्मं सहमाणे, खममाणे	सम्यक् सहमानः, क्षममाणः
तितिक्खमाणे, अहियासमाणे	तितिक्षमाणः, अधिसहमानः,
रायगिहे णयरे उच्चणीयमज्झिम	राजगृहे नगरे उच्चनीचमध्यम
कुलाइं अडमाणे जइ	कुलेषु अटमानः यदि
भत्तं लभइ तो पाणं ण लभइ,	भक्तं लभते तदा पानं न लभते,
जइ पाणं लभइ तो भत्तं ण लभइ ।	यदि पानं लभते तर्हि भक्तं न लभते ।
तए णं से अज्जुणए अणगारे	ततः खलु सः अर्जुनकः अनगारः
अदीणे, अविमणे, अकलुसे,	अदीनः, अविमनाः, अकलुषः
अणाइले, अविसाई, अपरितं-	अनाविलः अविषादी, अपरि-
तजोगी अडइ, अडित्ता	तान्तयोगी अटति, अटित्वा
रायगिहाओ णयराओ पडिणि-	राजगृहान्नगरात् प्रतिनिष्क्रा
क्खमइ, पडिणिक्खमित्ता	म्यति, प्रतिनिष्क्रम्य
जेणेव गुणसिलए चेइए, जेणेव	यत्रैव गुणशिलकं चैत्यं, यत्रैव
समणे भगवं महावीरे जहा	श्रमणः भगवान् महावीरः यथा
गोयमसामी जाव पडिदंसेइ,	गौतमस्वामी यावत् प्रतिदर्शयति,
पडिदंसित्ता समणेणं भगवया	प्रतिदर्श्य श्रमणेन भगवता
महावीरेणं अब्भणुण्णाए समाणे,	महावीरेण अभ्यनुज्ञातः सन्
अमुच्छिए विलमिव पण्णगभूएणं	अमूर्च्छितः विलमिव पन्नगभूतेन
अप्पाणेणं तमाहारं आहारेइ ।	आत्मना तमाहारमाहारयति ।

सूत्र १८

तए णं समणे भगवं महावीरे	ततः खलु श्रमणो भगवान् महावीरः
अण्णया कयाइं रायगिहाओ णयराओ	अन्यदा कदाचित् राजगृहात्
पडिणिक्खमइ, पडिणिक्खमित्ता	नगरात् प्रतिनिष्क्राम्यति, प्रतिनिष्क्रम्य
वहि जणवय विहारं विहरइ ।	वहिः जनपद विहारं विहरति ।
तए णं से अज्जुणए अणगारे	ततः खलु सः अर्जुनः अनगारः
तेणं ओरालेणं विउलेणं पयत्तेणं	तेन उदारेण विपुलेन प्रयत्नेन
पग्गहिएणं महाणुभागेणं तवो-	परिगृहीतेन महानुभागेन तपः-

[हिन्दी शब्दार्थ]	[हिन्दी अर्थ]

इस प्रकार सहते क्षमा करते, तितिक्षा रखते और अभ्यास लाभ मानते हुए राज गृह नगर में छोटे-बड़े मध्यम कुलों में भ्रमण करते हुए उन्हें यदि भोजन मिलता तो पानी नहीं मिलता पानी मिलता तो भोजन नहीं मिलता।

तब वे अर्जुन मुनि ऐसी स्थिति में भी अदीन उदासी-मलिन भाव, आकुल व्याकुलपन और खेद रहित योगों से थकान रहित भ्रमण करते करते राजगृह नगर से बाहर निकलकर जहाँ गुणशिलक उद्यान था, जहाँ श्रमण भगवान महावीर विराजमान थे वहाँ आकर गौतम स्वामी की तरह आहार दिखाते और दिखाकर श्रमण भगवान महावीर की आज्ञा प्राप्त कर मूर्च्छा रहित हो, बिल में जैसे सर्प सीधा प्रवेश करता है उसी तरह रागद्वेष रहित आत्मा से उस आहार का सेवनकर लेते।

ज्ञानपूर्वक उन सभी संकटों को सहन करते, क्षमा करते, तितिक्षा रखते और उन कष्टों को भी लाभ का हेतु मानते हुए राजगृह नगर के छोटे-बड़े मध्य कुलों में भिक्षा हेतु भ्रमण करते हुए अर्जुन मुनि को कहीं कभी भोजन मिलता तो पानी नहीं मिलता और पानी मिलता तो भोजन नहीं मिलता।

वैसी स्थिति में जो भी और जैसा भी अल्प स्वल्प मात्रा में प्रासुक भोजन उन्हें मिलता उसे वे सर्वथा अदीन, अविमन, अकलुष, अमलिन, आकुल-व्याकुलता रहित अखेद भाव से ग्रहण करते, थकान अनुभव नहीं करते।

इस प्रकार वे भिक्षार्थ भ्रमण करते। भ्रमण करके वे राजगृह नगर से निकलते और गुणशील उद्यान में, जहाँ श्रमण भगवान् महावीर विराजमान थे, वहाँ आते और वहाँ आकर गौतम स्वामी की तरह भिक्षा में मिले उस आहार-पानी को प्रभु महावीर को दिखाते और दिखाकर उनकी आज्ञा पाकर मूर्च्छा रहित जिस प्रकार बिल में सर्प सीधा ही प्रवेश करता है उस प्रकार राग-द्वेष भाव से रहित होकर उस आहार-पानी का वे सेवन करते।

सूत्र १८

फिर श्रमण भगवान महावीर ने अन्य किसी दिन राजगृह नगर से विहार किया, विहार कर बाहर जनपद देश में विहार करने लगे।

तब वह अर्जुन मुनि उस उदार, श्रेष्ठ पवित्र भाव से ग्रहण किये महालाभकारी विपुल तप से आत्मा को

भगवती सूत्र में जैसे प्रभु महावीर से पूछकर श्री गौतम स्वामी द्वारा भिक्षार्थ जाने का विस्तृत वर्णन किया गया है, वैसा ही अर्जुन माली द्वारा भिक्षार्थ जाने का वर्णन यहां समझना चाहिये।

फिर श्रमण भगवान् महावीर किसी दिन राजगृह नगर के उस गुणशील उद्यान से निकल कर बाहर जनपदों में विहार करने लगे।

[हिन्दी अन्वार्थ]

भावित करते हुए छः महीने
चारित्रव्रत का पालन किया,
आधे मास की संलेखना से
आत्मा को जोडकर तीस भक्त
के अनशन को पूर्णकर जिस कार्य
के लिये व्रत ग्रहण किया था उसको
पूर्णकर यावत् सिद्ध हो गये।

[हिन्दी अर्थ]

उस महाभाग अर्जुन मुनि ने उस उदार, श्रेष्ठ, पवित्र भाव से ग्रहण किये गये, महालाभकारी, विपुल तप से अपनी आत्मा को भावित करते हुए पूरे छः महीने मुनि चारित्र धर्म का पालन किया।

इसके बाद आधे मास की संलेखना से अपनी आत्मा को जोडकर तीस भक्त के अनशन को पूर्ण कर जिस कार्य के लिए व्रत ग्रहण किया उसको पूर्ण कर वे अर्जुन मुनि यावत् सिद्ध बुद्ध और मुक्त हो गये।

तृतीय अध्ययन समाप्त

अथ चतुर्थ अध्ययन

चौथे अध्ययन का उत्क्षेपक।"
तब सुधर्मा स्वामी ने कहा—हे जम्बू!
उस काल उस समय में राजगृह
नगर था वहाँ गुणशिलक उद्यान था।
वहाँ श्रेणिक राजा के राज्य में
काश्यप नाम का गाथापति भी रहता था
उसने मकाई की तरह सोलह
वर्ष की दीक्षा पर्याय का पालन किया
और विपुल पर्वत पर सिद्ध हो गये।

जम्बू स्वामी-" हे भगवन्! छठे वर्ग के तीसरे अध्ययन में प्रभु ने जो भाव कहे वे सुने। अब चौथे अध्ययन में क्या भाव कहा है वह कृपया कहिये।"

श्री सुधर्मा स्वामी-" हे जम्बू! उस काल उस समय राजगृह नगर में गुणशील नामक उद्यान था। वहा श्रेणिक राजा राज्य करता था। वहाँ काश्यप नाम का एक गाथा पति रहता था। उसने मकाई की तरह सोलह वर्ष तक दीक्षा पर्याय का पालन किया और अन्त समय में विपुल गिरि पर्वत पर जाकर संथारा आदि करके सिद्ध बुद्ध और मुक्त हो गये।

अध्ययन ५

इसी प्रकार क्षेमक गाथापति भी, विशेष
बात यह है कि ये काकदी नगरी के थे
सोलह वर्ष दीक्षा पर्याय का पालन कर
वे विपुल पर्वत पर सिद्ध हुए।

इसी प्रकार क्षेमक गाथापति का वर्णन समझें। विशेष इतना है कि काकदी नगरी के वे निवासी थे और सोलह वर्ष का उनका दीक्षा काल रहा। यावत् वे भी विपुल गिरि पर सिद्ध हुए।

[मूल सूत्र पाठ]

[संस्कृत छाया]

अध्ययन ६

एवं धितिहरे वि गाहावई,
काकंदी णयरी सोलसवासा
परियाओ जाव विपुले सिद्धे ।६।

एवं धृतिधरोऽपि गाथापतिः,
काकंदी नगरी, षोडशवर्षाणि
पर्यायः यावत् विपुले सिद्धः। ६ ।

अध्ययन ७

एवं केलासे वि गाहावई,
णवरं सागेए णयरे, बारस
वासाइं परियाओ, विपुले सिद्धे ।७।

एवं कैलासोऽपि गाथापतिः,
नवीनं साकेतं नगरं, द्वादश
वर्षाणि पर्यायः, विपुले सिद्धः । ७ ।

अध्ययन ८

एवं हरिचंदणे वि गाहावई,
सागेए णयरे, बारस
वासा परियाओ, विपुले सिद्धे ।८।

एवं हरिचंदनः अपि गाथापतिः,
साकेतं नगरं, द्वादश
वर्षाणि पर्यायः, विपुले सिद्धः । ८ ।

अध्ययन ९

एवं वारत्तए वि गाहावई,
णवरं रायगिहे णयरे, बारसवासा
परियाओ, विपुले सिद्धे ।९।

एवं वारत्तकः अपि गाथापतिः,
विशेषः राजगृहं नगरं द्वादश
वर्षाणि पर्यायः, विपुले सिद्धः । ९ ।

अध्ययन १०

एवं सुदंसणे वि गाहावई,
णवरं वाणियगामे णयरे,
दूइपलासए चेइए, पंचवासा
परियाओ, विपुले सिद्धे ।१०।

एवं सुदर्शनः अपि गाथापतिः,
विशेषः—वाणिज्यग्रामं नगरं,
द्युतिपलाशकं चैत्यम्, पंचवर्षाणि
पर्यायः, विपुले सिद्धः ।१०।

[हिन्दी शब्दार्थ]	[हिन्दी अर्थ]

अध्ययन ६

इसी प्रकार धृतिधर गाथापति काकंदी के निवासी सोलह वर्ष दीक्षा पालकर यावत् विपुल पर्वत पर सिद्ध हो गये ।	ऐसे ही धृतिधर गाथापति का भी वर्णन समझें। वे काकंदी के निवासी थे सोलह वर्ष तक मुनि चारित्र पालकर वह भी विपुलगिरि पर सिद्ध हुए।

अध्ययन ७

इसी प्रकार कैलास गाथापति, साकेत नगरवासी, १२ वर्ष दीक्षा पर्याय का पालन कर विपुलगिरि पर सिद्ध हुए।	ऐसे ही कैलास गाथापति भी थे । विशेष यह था कि ये साकेत नगर के रहने वाले थे, इन्होंने बारह वर्ष की दीक्षा पर्याय पाली और विपुलगिरि पर्वत पर से सिद्ध हुए।

अध्ययन ८

इसी प्रकार हरिचंदन गाथापति, साकेत नगर वासी बारह वर्ष तक दीक्षा पालन कर विपुल पर्वत पर सिद्ध हुए।	ऐसे ही आठवें हरिचन्दन गाथापति भी थे। वे भी साकेत नगर के निवासी थे। उन्होंने भी बारह वर्ष तक श्रमण चारित्र का पालन किया और अन्त में विपुलगिरि पर से सिद्ध हुए।

अध्ययन ९

इसी प्रकार वारत्त गाथापति, राजगृह नगर वासी बारह वर्ष दीक्षा, अन्त में विपुल पर्वत पर सिद्ध हो गये ।९।	इसी तरह नवमें वारत्त गाथापति थे। विशेष यह था कि ये राजगृह नगर के रहने वाले थे । बारह वर्ष का चारित्र पालन कर वे विपुलगिरि पर सिद्ध हुए।

अध्ययन १०

इसी प्रकार सुदर्शन गाथापति, वाणिज्य ग्राम वासी, द्युतिपलाश उद्यान, पांच वर्ष दीक्षा पाल कर विपुलगिरि पर सिद्ध हुए ।१०।	दसवें सुदर्शन गाथापति का वर्णन भी इसी प्रकार समझें। विशेष यह था कि वाणिज्य ग्राम नगर के बाहर द्युतिपलाश नाम का उद्यान था। वहां दीक्षित हुए। पांच वर्ष वे चारित्र पालकर विपुलगिरि से सिद्ध हुए।

[मूल सूत्र पाठ]	[संस्कृत छाया]

अध्ययन ११

एवं पुण्णभद्दे वि गाहावई, वाणियगामे णयरे, पंचवासा परियाओ, विपुले सिद्धे ।११।	एवं पूर्णभद्रोऽपि गाथापतिः वाणिज्यग्रामं नगरं पंचवर्षाणि पर्यायः, विपुले सिद्धः ।११।

अध्ययन १२

एवं सुमणभद्दे वि गाहावई, सावत्थी णयरी, बहुवासा परियाओ, विपुले सिद्धे ।१२।	एवं सुमनभद्रोऽपि गाथापतिः, श्रावस्ती नगरी, बहुवर्षाणि पर्यायः, विपुले सिद्धः ।१२।

अध्ययन १३

एवं सुपइट्ठे वि गाहावई, सावत्थी णयरी, सत्तावीसं वासा परियाओ, विपुले सिद्धे ।१३।	एवं सुप्रतिष्ठोऽपि गाथापतिः, श्रावस्ती नगरी, सप्तविंशति वर्षाणि पर्यायः, विपुले सिद्धः ।१३।

अध्ययन १४

एवं मेहे वि गाहावई, रायगिहे णयरे बहूहिं वासाइं परियाओ, विपुले सिद्धे ।१४।	एवं मेघोऽपि गाथापतिः, राजगृहं नगरं, बहूनि वर्षाणि पर्यायः, विपुले सिद्धः ।१४।

चतुर्दश अध्ययनानि समाप्तानि

अथ पंचदशम अध्ययन

सूत्र १

उक्खेवओ पण्णरसमस्स अज्झयणस्स ।	उत्क्षेपकः पंचदशमस्य अध्ययनस्य ।

[हिन्दी भावार्थ] [हिन्दी अर्थ]

अध्ययन ११

इसीप्रकार पूर्णभद्र गाथापति वाणिज्य-ग्राम नगर वासी, पाँच वर्ष चारित्र पालन कर विपुलगिरि पर सिद्ध हुए।

पूर्णभद्र गाथापति का वर्णन भी ऐसे ही समझें। विशेष यह था कि वे वाणिज्य ग्राम नगर के रहने वाले थे। पाँच वर्ष का चारित्र पालन कर वह भी विपुलाचल पर्वत पर सिद्ध हुए।

अध्ययन १२

इसीप्रकार सुमनभद्र गाथापति, श्रावस्ती नगरी। बहुत वर्षों तक दीक्षा पालन कर विपुलाचल पर सिद्ध हुए ।१२।

सुमनभद्र गाथापति का वर्णन भी ऐसे ही समझें। वे श्रावस्ती नगरी के निवासी थे। बहुत वर्ष तक मुनि चारित्र का पालन कर विपुलगिरि पर सिद्ध हुए।

अध्ययन १३

इसीप्रकार सुप्रतिष्ठ गाथापति। श्रावस्ती नगरी। सत्ताईस वर्ष चारित्र पालकर विपुलगिरि पर सिद्ध हुए ।१३।

ऐसे ही सुप्रतिष्ठ गाथापति को भी समझें। ये भी श्रावस्ती नगरी के रहने वाले थे और सत्ताईस वर्ष का श्रमण चारित्र पालन कर विपुलगिरि पर सिद्ध हुए।

अध्ययन १४

इसी प्रकार मेघ गाथापति। राजगृह वासी। बहुत वर्ष चारित्र पालकर विपुलगिरि पर सिद्ध हुए ।१४।

मेघ गाथापति को भी ऐसे ही समझें। वे राजगृह नगर के निवासी थे। बहुत वर्ष चारित्र धर्म का पालन कर विपुलगिरि पर सिद्ध हुए।

चौदह अध्ययन समाप्त

पन्द्रहवाँ अध्ययन

सूत्र १

पन्द्रहवें अध्ययन का उत्क्षेप ।[१६]

श्री जम्बू स्वामी— हे भगवन्! चौदह अध्ययनों का भाव मैंने सुना। अब पन्द्रहवें अध्ययन में प्रभु ने क्या भाव कहा है कृपा कर बतलावें। आर्य सुधर्मा कहते हैं-

[मूल सूत्र पाठ]	[संस्कृत छाया]
एवं खलु जंबू ! तेणं कालेणं	एवं खलु जम्बू ! तस्मिन् काले
तेणं समयेणं पोलासपुरे	तस्मिन् समये पोलासपुरम्
णयरे, सिरीवणे उज्जाणे ।	नगरम् श्रीवनम् उद्यानम् ।
तत्थ णं पोलासपुरे णयरे	तत्र खलु पोलासपुरे नगरे
विजए णामं राया होत्था ।	विजयो नाम राजा अभवत्,
तस्स णं विजयस्स रण्णो	तस्य खलु विजयस्य राज्ञः
सिरी णामं देवी होत्था,	श्री नाम देवी आसीत् ।
वण्णओ ।	वर्ण्या ।
तस्सणं विजयस्स रण्णोपुत्ते	तस्य खलु विजयस्य राज्ञः पुत्रः
सिरीए देवीए अत्तए अइमुत्ते	श्रीदेव्याः आत्मजः अतिमुक्तः
णामं कुमारे होत्था ।	नाम कुमारः आसीत् ।
सुकुमाले ।	सुकोमलः ।
तेणं कालेणं तेणं समएणं	तस्मिन् काले तस्मिन् समये
समणे भगवं महावीरे जाव	श्रमणो भगवान् महावीरः यावत्
सिरीवणे विहरइ । तेणं	श्रीवने विहरति । तस्मिन्
कालेणं तेणं समएणं समणस्स	काले तस्मिन् समये श्रमणस्य
भगवओ महावीरस्स जेट्ठे	भगवतः महावीरस्य ज्येष्ठः
अंतेवासी इंदभूई, जहा	अन्तेवासी इन्द्रभूति, यथा
पण्णत्तीए जाव पोलासपुरे	प्रज्ञप्त्याम् तथा पोलासपुरे
णयरे उच्चणीय जाव अडइ ।१।	नगरे उच्चनीचं यावत् अटति ।१।

सूत्र २

इमं च णं अइमुत्ते कुमारे	अस्मिन् च खलु (काले) अतिमुक्तः
ण्हाए जाव विभूसिए	कुमारः स्नातः यावत् विभूषितः
बहूहिं दारएहिं य दारियाहिं	बहुभिः दारकैश्च दारिकाभिश्च
य, डिंभएहिं य डिंभियाहिं य,	डिंभकैश्च डिंभिकाभिश्च

[हिन्दी शब्दार्थ]

हे जम्बू ! उस काल उस समय में पोलासपुर नामक नगर व श्रीवन नामक उद्यान था। उस पोलासपुर नामक नगर में विजय नामक राजा राज्य करता था उसकी श्रीदेवी नाम की महारानी थी, जो कि वर्णन करने योग्य थी। महाराज विजय का पुत्र और श्री देवी का आत्मज अतिमुक्त नामक कुमार था, जो कि सुकोमल था। उस काल उस समय में श्रमण भगवान महावीर विचरते हुए श्रीवन में पधारे। उस काल उस समय श्रमण भगवान् महावीर के ज्येष्ठ शिष्य इन्द्रभूति भगवती सूत्र के वर्णन के अनुसार यावत् पोलासपुर नगर में बड़े छोटे कुलों में भ्रमण करने लगे।

[हिन्दी अर्थ]

'निश्चय ही हे जंबू' उस काल उस समय में पोलासपुर नामक नगर था, वहां श्रीवन नामक उद्यान था। उस नगर में विजय नाम का राजा था जिस की श्रीदेवी नाम की महारानी थी, जो वर्णन योग्य थी।

महाराजा विजय का पुत्र और श्रीदेवी का आत्मज अतिमुक्त नाम का एक कुमार था जो बड़ा सुकुमाल था।

उस काल उस समय श्रमण भगवान् महावीर विचरते हुए श्रीवन उद्यान में पधारे।

उस काल उस समय श्रमण भगवान् महावीर के ज्येष्ठ शिष्य इन्द्रभूति भगवती सूत्र में जैसे भगवान से पूछकर भिक्षार्थ जाने का वर्णन किया गया वैसे ही यावत् उस पोलासपुर नगर में छोटे बड़े कुलों में सामूहिक भिक्षा हेतु भ्रमण करने लगे।

सूत्र २

इधर अतिमुक्त कुमार स्नान करके यावत् विभूषित होकर बहुत से लड़के लड़कियों, बालक बालिकाओं एवं कुमार

इधर अति मुक्त कुमार स्नान करके यावत्, शरीर की विभूषा करके बहुत से लड़के लड़कियों, बालक बालिकाओं और कुमार कुमारिकाओं के साथ अपने घर से

[मूल सूत्र पाठ]

कुमारएहि य कुमारियाहि य
सद्धिं संपरिवुडे सयाओ गिहाओ
पडिनिक्खमइ, पडिनिक्खमित्ता
जेणेव इंदट्ठाणे तेणेव
उवागए । तेहिं बहूहिं
दारएहि य दारियाहि य
डिंभएहि य डिंभियाहि य
कुमारएहि य कुमारियाहि य
सद्धिं संपरिवुडे अभिरममाणे
अभिरममाणे विहरइ ।
तए णं भगवं गोयमे पोलासपुरे
णयरे उच्चणीय जाव अडमाणे
इंदट्ठाणस्स अदूरसामंतेणं
वीईवयइ ।
तए णं से अइमुत्ते कुमारे
भगवं गोयमं अदूरसामंतेणं
वीईवयमाणं पासइ, पासित्ता
जेणेव भगवं गोयमे तेणेव
उवागए । भगवं गोयमं
एवं वयासी—के णं भंते !
तुब्भे, किं वा अडह ? ।२।

[संस्कृत छाया]

कुमारैश्च कुमारिकाभिश्च
सार्द्धं संपरिवृतः स्वकाद् गृहात्
प्रतिनिष्क्रामति, प्रतिनिष्क्रम्य
यत्रैव इन्द्रस्थानं तत्रैव
उपागतः । तत्र बहुभिः
दारकैश्च दारिकाभिश्च
डिम्भकैश्च डिम्भिकाभिश्च
कुमारकैश्च कुमारिकाभिश्च
सार्द्धं संपरिवृतः अभिरममाणः
अभिरममाणः विहरति ।
तदा खलु भगवान् गौतमः पोलासपुरे
नगरे उच्चनीच यावत् अटमानः
इन्द्रस्थानस्य अदूरसामन्तेन
व्यतिव्रजति ।
ततः खलु सः अतिमुक्तः कुमारः
भगवन्तं गौतमं अदूरसामन्तेन
व्यतिव्रजन्तं पश्यति, दृष्ट्वा
यत्रैव भगवान् गौतमः तत्रैव
उपागतः । भगवन्तं गौतमं
एवमवदत्—"के खलु हे भदन्त
यूयम् ? किं वा अटथ ?"

सूत्र ३

तए णं भगवं गोयमे अइमुत्तं
कुमारं एवं वयासी—
"अम्हे णं देवाणुप्पिया !
समणा णिग्गंथा इरियासमिया

ततः खलु भगवान् गौतमः अतिमुक्तं
कुमारमेवमवदत्—
"वयं खलु हे देवानुप्रिय !
श्रमणाः निर्ग्रन्थाः ईर्यासमिताः

[हिन्दी शब्दार्थ]

कुमारिकाओं के साथ घिरा हुआ
अपने घर से निकला,
निकलकर जहाँ इन्द्र का स्थान
(क्रीडा स्थान) है वहाँ पर
आये । वहाँ आकर उन बहुत से
बच्चे बच्चियों
लडके लडकियों एवं
कुमार कुमारिकाओं के
साथ उनसे घिरा हुआ प्रेम पूर्वक
खेलते हुए विचरण करने लगा ।
तभी भगवान गौतम पोलास
पुर नगर में छोटे बडे कुलों में
यावत् भ्रमण करते हुए क्रीडास्थल
के पास से जारहे थे ।
इसी समय अतिमुक्त कुमार ने
भगवान् गौतम को पास से ही
जाते हुए देखा, देखकर
जहाँ भगवान गौतम थे वहाँ
आये और भगवान् गौतम से
इस प्रकार बोले—"हे पूज्य ! आप
कौन हैं और क्यों घूम रहे हैं ?"

[हिन्दी अर्थ]

निकले और निकल कर जहां इन्द्र-स्थान यानि क्रीडास्थल है वहां आये वहां उन बालक बालिकाओं के साथ वे प्रेम पूर्वक खेलने लगे ।

उस समय भगवान् गौतम पोलासपुर नगर में छोटे बडे कुलों में यावत् भ्रमण करते हुए उस क्रीडा स्थल के पास से जा रहे थे, तब अतिमुक्त कुमार ने उन को पास से जाते हुए देखकर उनके पास आये और उनसे इस प्रकार बोले— "हे पूज्य ! आप कौन हैं और इस तरह क्यों घूम रहे हैं ?"

तब भगवान् गौतम ने अतिमुक्तकुमार को उत्तर देते हुए इस तरह कहा— "हे देवानु-

सूत्र ३

तब भगवान् गौतम ने अतिमुक्त
कुमार को इस प्रकार कहा—
"हे देवानुप्रिय ! हम श्रमण निर्ग्रन्थ
हैं, ईर्यासमिति आदि सहित यावत्

प्रिय ! हम श्रमण निग्रन्थ, ईर्यासमिति के धारक गुप्त ब्रह्मचारी हैं और छोटे बडे कुलों में भिक्षार्थ भ्रमण करते हैं ।"

[मूल सूत्र पाठ]	[संस्कृत छाया]
जाव बंभयारी उच्चणीय जाव	यावत् ब्रह्मचारिणः उच्चनीच
अडामो ।"	यावदटामः ।"
तए णं अइमुत्ते कुमारे	ततः खलु अतिमुक्तः कुमारः
भगवं गोयमं एवं वयासी—	भगवन्तं गौतममेवमवदत्—
"एह णं भन्ते ! तुब्भे, जण्णं अहं	"इह खलु (आगच्छत) भदन्त! यूयं येनाहं
तुब्भं भिक्खं दवावेमि ।"	युष्मभ्यं भिक्षां दापयामि ।"
त्ति कट्टु भगवं गोयमं अंगुलीए	इति कृत्वा भगवन्तं गौतमं अंगुल्याम्
गिण्हइ, गिण्हित्ता, जेणेव सए गिहे	गृह्णाति, गृहीत्वा यत्रैव स्वकं गृहम्
तेणेव उवागए ।	तत्रैव उपागतः ।
तए णं सा सिरीदेवी भगवं गोयमं	ततः खलु सा श्रीदेवी भगवन्तं गौतमं
एज्जमाणं पासइ, पासित्ता, हट्ठतुट्ठ	आगच्छंतं पश्यति, दृष्ट्वा, हृष्टतुष्टा
जाव आसणाओ अब्भुट्ठेइ, अब्भु-	यावत् आसनादभ्युत्तिष्ठति,
ट्ठित्ता, जेणेव भगवं गोयमे	अभ्युत्थाय, यत्रैव भगवान् गौतमः
तेणेव उवागया ।	तत्रैव उपागता ।
भगवं गोयमं तिक्खुत्तो-आयाहिण	भगवन्तं गौतमं त्रिःकृत्वा आदक्षिण
पयाहिणं करेइ, करित्ता, वंदइ,	प्रदक्षिणां करोति, कृत्वा, वंदते,
णमंसइ, वंदित्ता, णमंसित्ता	नमस्यति, वन्दित्वा, नमस्यित्वा
विउलेणं असणपाणखाइमसाइमेणं	विपुलेन अशनपानखाद्यस्वाद्येन
पडिलाभेइ जाव पडिविसज्जेइ ।३।	प्रतिलम्भयति यावत् प्रतिविसर्जयति ।३।

सूत्र ४

तए णं से अइमुत्ते कुमारे भगवं	ततः खलु सः अतिमुक्तः कुमारः भगवन्तं
गोयमं एवं वयासी—	गौतमम् एवमवदत्—
"कहिणं भन्ते! तुब्भे परिवसह ?"	"क्व नु भदन्त ! यूयं परिवसथ ?"
तए णं भगवं गोयमे अइमुत्तं	ततः खलु भगवान् गौतमः अतिमुक्तं
कुमारं एवं वयासी—	कुमारं एवमवदत्—
"एवं खलु देवाणुप्पिया ! मम	"एवं खलु देवानुप्रिय ! मम

[हिन्दी शब्दार्थ]

ब्रह्मचारी हैं छोटे बड़े कुलों
में भिक्षार्थ भ्रमण करते हैं।"
तब अतिमुक्त कुमार भगवान
गौतम से इस प्रकार कहने लगे—
"हे भगवन्! आप इधर पधारें जिससे
मैं आपको भिक्षा दिलाता हूँ।"
ऐसा कहकर भगवान गौतम की अंगुली
पकड़ी, पकड़कर जहाँ अपना घर था
वहाँ पर ही ले आये।
फिर उस श्री देवी ने भगवान् गौतम को
आते हुए देखा, देख कर हृष्टतुष्ट
बनी यावत् अपने आसन से उठी,
उठकर जहाँ भगवान गौतम
थे वहाँ आई।
भगवान गौतम को तीन बार
दक्षिण तरफ से प्रदक्षिणा करती है
करके वन्दन नमस्कार करती है, करके
बहुत से अशन पान खाद्य स्वाद्य से
प्रतिलाभ दिया यावत् विसर्जित किया।

[हिन्दी अर्थ]

यह सुनकर अतिमुक्तकुमार भगवान् गौतम से इस प्रकार बोले—"हे भगवन्! आप आओ! मैं आपको भिक्षा दिलाता हूं।"

ऐसा कहकर अतिमुक्तकुमार ने भगवान् गौतम की अंगुली पकड़ी और उनको जहाँ अपना घर था वहाँ ले आये।

श्रीदेवी महारानी भगवान् गौतम को आते देखकर बहुत ही प्रसन्न हुई यावत् आसन से उठकर जहा भगवान् गौतम थे उनके सम्मुख आई, और भगवान् गौतम को तीन बार दक्षिण तरफ से प्रदक्षिणा करके वन्दना की, नमस्कार किया। फिर विपुल अशन-पान खादिम और स्वादिम से प्रतिलाभ दिया यावत् विधि पूर्वक विसर्जित किया।

सूत्र ४

इसके बाद अतिमुक्त कुमार भगवान
गौतम से इस प्रकार बोले—
"हे देवानुप्रिय! आप कहाँ रहते हैं?"
गौतम स्वामी ने इस पर अतिमुक्त
कुमार से कहा—
"हे देवानुप्रिय! मेरे धर्माचार्य

इसके बाद भ० गौतम से अतिमुक्तकुमार यों बोले—"हे देवानुप्रिय! आप कहा रहते हैं?"

इस पर भगवान् गौतम ने अतिमुक्तकुमार को उत्तर दिया— "हे देवानुप्रिय! मेरे धर्माचार्य और धर्मोपदेशक भगवान् महावीर धर्म की आदि करने वाले

[मूल सूत्र पाठ]

धम्मायरिए धम्मोवएसए भगवं
महावीरे आइगरे जाव संपाविउकामे,
इहेव पोलासपुरस्स णयरस्स बहिया
सिरिवणे उज्जाणे अहापडिरूवं
उग्गहं उग्गिण्हित्ता संजमेणं तवसा
अप्पाणं भावेमाणे विहरइ,
तत्थ णं अम्हे परिवसामो।"
तए णं से अइमुत्ते कुमारे भगवं
गोयमं एवं वयासी—
"गच्छामि णं भन्ते! अहं तुब्भेहिं
सद्धिं समणं भगवं महावीरं
पायवंदए?"
"अहासुहं देवाणुप्पिया!"

[संस्कृत छाया]

धर्माचार्यो धर्मोपदेशको भगवान्
महावीरः आदिकरः यावत् संप्राप्तुकामः
इहैव पोलासपुरात् नगरात् बहिः
श्रीवने उद्याने यथाप्रतिरूपं
अवग्रहमवगृह्य संयमेन तपसा
आत्मानं भावमानः विहरति,
तत्र खलु वयं परिवसामः।"
ततः खलु सः अतिमुक्तः कुमारः भगवन्तं
गौतमम् एवमवदत्—
"गच्छामि खलु भदन्त! अहं युष्माभिः
सार्द्धं श्रमणं भगवन्तं महावीरं
पादवन्दितुम्?"
"यथासुखं देवानुप्रिय!"

सूत्र ५

तएणं से अइमुत्ते कुमारे
गोयमेणं सद्धिं जेणेव समणे
भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ,
उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं
त्तिक्खुत्तो आयाहिण-पयाहिणं
करेइ, करित्ता वंदइ जाव
पज्जुवासइ।
तएणं भगवं गोयमे जेणेव समणे
भगवं महावीरे तेणेव उवागए।
जाव पडिदंसेइ, पडिदंसित्ता,
संजमेणं तवसा अप्पाणं-भावेमाणे
विहरइ।

ततः सोऽतिमुक्तः कुमारः
गौतमेन सार्द्धं यत्रैव श्रमणः
भगवान् महावीरः तत्रैव उपागच्छति,
उपागत्य श्रमणं भगवन्तं महावीरं
त्रिःकृत्वा आदक्षिण-प्रदक्षिणां
करोति, कृत्वा वन्दते यावत्
पर्युपासते।
ततः खलु भगवान् गौतमः यत्रैव श्रमणः
भगवान् महावीरः तत्रैव उपागतः।
यावत् प्रतिदर्शयति, प्रतिदर्श्य,
संयमेन तपसा आत्मानं भावमानः
विहरति।

[हिन्दी अन्वयार्थ]

धर्मोपदेशक धर्म के आदिकर यावत् मोक्षकेकामी भगवान् महावीर इसी पोलासपुर नगर के बाहर श्रीवन नामक उद्यान में यथाकल्प अवग्रह लेकर संयम एवं तप से आत्मा को भावित करते हुए विचरण कर रहे हैं। हम वहाँ पर ही रहते हैं।" तब अतिमुक्त कुमार भगवान गौतम से इस प्रकार बोले—
"हे पूज्य ! मैं भी चलूँ आपके साथ श्रमण भ० महावीर को वन्दन करने?"
"हे देवानुप्रिय! जैसे सुख हो वैसे करो।"

[हिन्दी अर्थ]

यावत् मोक्ष के कामी! इसी पोलासपुर नगर के बाहर श्रीवन उद्यान में मर्यादानुसार अवग्रह लेकर संयम एवं तप से आत्मा को भावित कर विचरते हैं, हम वहीं रहते हैं।"

अतिमुक्त कुमार– 'हे पूज्य! क्या मैं भी आपके संग श्रमण भगवान् महावीर को वंदन करने चलूं ?

श्री गौतम– "हे देवानुप्रिय ! जैसा तुम्हें सुख हो।"

सूत्र ५

इसके बाद वह अतिमुक्त कुमार गौतम स्वामी के साथ जहा श्रमण भगवान महावीर थे वहा आये, आकर श्रमण भगवान महावीर को तीन बार दक्षिण तरफ से प्रदक्षिणा करते हैं, करके यावत् वन्दन नमस्कार करके उनकी सेवा करने लगे। तभी भगवान गौतम श्रमण भगवान महावीर के समीप आये यावत् आहार दिखाया दिखाकर संयम तप से आत्मा को भावित करते हुए विचरने लगे।

तब अतिमुक्तकुमार गौतम स्वामी के साथ श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के पास आये और आकर श्रमण भगवान् महावीर को तीन बार दक्षिण तरफ से प्रदक्षिणा की और वंदना करके पर्युपासना करने लगे।

इधर भगवान् गौतम भगवान् महावीर के समीप आये और उन्हें लाया हुआ आहार पानी दिखा कर संयम तथा तप से अपनी आत्मा को भावित करते हुए विचरने लगे।

(मूल सूत्र पाठ)	(संस्कृत छाया)
तएणं समणे भगवं महावीरे	ततः खलु श्रमणो भगवान् महावीरः
अइमुत्तस्स कुमारस्स	अतिमुक्ताय कुमाराय
धम्मकहा ।	धर्मकथां (कथितवान्)।
तएणं से अइमुत्ते कुमारे समणस्स	ततः खलु सः अतिमुक्तः कुमारः
भगवओ महावीरस्स अंतिए	श्रमणस्य भगवतो महावीरस्य अंतिके
धम्मं सोच्चा णिसम्म	धर्मं श्रुत्वा, निशम्य
हट्ठतुट्ठ	हृष्टः तुष्टः
"जं णवरं देवाणुप्पिया !	"यो विशेषः हे देवानुप्रिय !"
अम्मापियरो आपुच्छामि ।	अम्बापितरौ आपृच्छामि ।
तएणं अहं देवाणुप्पियाणं	ततः खलु अहं देवानुप्रियाणा-
अंतिए जाव पव्वयामि ।"	मन्तिके यावत् प्रव्रजामि ।"
"अहासुहं देवाणुप्पिया !	"यथासुखं देवानुप्रिय !
मा पडिबंधं करेह !" ।५।	मा प्रतिबंधं कुरु ।"

सूत्र ६

तएणं से अइमुत्ते कुमारे	ततः खलु सः अतिमुक्तः कुमारः
जेणेव अम्मापियरो तेणेव	यत्रैव अम्बापितरौ तत्रैव
उवागए जाव पव्वइत्तए ।	उपागतः यावत् प्रव्रजितुम् ।
अइमुत्तं कुमारं अम्मापियरो	अतिमुक्तं कुमारं अम्बापितरौ
एवं वयासी—	एवमवदताम्—
"बाले सि ताव तुमं पुत्ता !	"बालः असि तावत् त्वं पुत्र !
असंबुद्धे सि तुमं पुत्ता !	असंबुद्धः असि त्वं पुत्र !
किण्णं तुमं जाणासि धम्मं ?"	किं खलु त्वं जानासि धर्मम् ?"
तए णं से अइमुत्ते कुमारे	ततः खलु सः अतिमुक्तः कुमारः
अम्मापियरो एवं वयासी—	अम्बापितरौ एवमवदत्—
"एवं खलु अहं अम्मयाओ	"एवं खलु अहं मातापितरौ !
जं चेव जाणामि, तं चेव ण	यत् चैव अहं जानामि तत् चैव न

(हिन्दी शब्दार्थ)

तब श्रमण भगवान महावीर ने
प्रतिमुक्त कुमार को
(उद्देश्य करके) धर्मकथा सुनाई।
तब वह प्रतिमुक्त कुमार श्रमण
भगवान महावीर के पास
धर्मकथा सुनकर और उसे
धारण कर बहुत प्रसन्न हुआ।
"यह विशेष (बोले) हे देवानुप्रिय!
मैं माता-पिता से पूछता हू।
तब मैं देवानुप्रिय के पास यावत्
दीक्षा ग्रहण करूगा।"
"हे देवानुप्रिय! जैसे सुख हो वैसे करो
परन्तु धर्मकार्य में प्रमाद मत करो।"

(हिंदी अर्थ)

तब श्रमण भगवान् महावीर ने प्रतिमुक्त कुमार को धर्म कथा सुनाई। धम कथा सुनकर और उसे धारण कर प्रतिमुक्त कुमार बड़े प्रसन्न हुए और बोले– "हे देवानुप्रिय! मैं अपने माता पिता को पूछकर फिर आपकी सेवा में श्रमण दीक्षा ग्रहण करूगा।"

भगवान् बोले– "हे देवानुप्रिय! जैसे तुम्हें सुख हो वैसे करो। पर धर्म काय मे प्रमाद मत करो।"

सूत्र ६

तब वह प्रतिमुक्त कुमार जहां अपने
माता-पिता थे वहां आये और
यावत् दीक्षा लेने की आज्ञा मागी।
प्रतिमुक्त कुमार को माता-पिता
ने इस प्रकार कहा–
"हे पुत्र! अभी तुम बालक हो।
हे पुत्र! अभी तुम असबुद्ध हो।
तुम धर्म को क्या जानो?"
तब प्रतिमुक्त कुमार ने
माता पिता से इस प्रकार कहा—
"हे माता पिता! मैं जिसको जानता
हू उसी को नहीं जानता हू

इसके पश्चात् प्रतिमुक्तकुमार अपने माता-पिता के पास आकर बोले– "अम्ब! आपकी आज्ञा पाकर म दीक्षा लेना चाहता हू।"

इस पर माता पिता अतिमुक्तकुमार से इस प्रकार बोले– "हे पुत्र! अभी तुम बालक हो, असबुद्ध हो। अभी धम को तुम क्या जानो?"

अतिमुक्तकुमार– हे माता पिता! मैं जिसको जानता हू, उस को नही जानता। और जिसको नही जानता हू उसको जानता हू।"

[मूल सूत्र पाठ]	[संस्कृत छाया]
जाणामि, जं चेव ण जाणामि	जानामि, यच्चैव न जानामि
तं चेव जाणामि ।"	तच्चैव जानामि ।"
तए णं तं अइमुत्तं कुमारं	ततः खलु तं अतिमुक्तं कुमारं
अम्मापियरो एवं वयासी—	अम्बापितरौ एवमवदताम्—
"कहं णं तुमं पुत्ता ! जं चेव	"कथं खलु त्वं पुत्र ! यच्चैव
जाणासि तं चेव ण जाणासि,	जानासि तच्चैव न जानासि,
जं चेव ण जाणासि तं चेव जाणासि?"	यच्चैव न जानासि तच्चैव जानासि ?"

सूत्र ७

तए णं से अइमुत्ते कुमारे अम्मा-	ततः खलु सः अतिमुक्तः कुमारः
पियरो एवं वयासी—	अम्बापितरौ एवमवदत्—
"जाणामि अहं अम्मयाओ !	"जानामि अहम् अम्बतातौ !
जहा जाएणं अवस्सं मरियव्वं,	यथा जातेन अवश्यं मर्तव्यम्,
ण जाणामि अहं अम्मयाओ !	न जानामि अहम् अम्बतातौ !
काहे वा कहिं वा कहं वा	कदा वा कुत्र वा कथं वा
केवच्चिरेण वा ?	कियच्चिरेण वा ?
ण जाणामि अहं अम्मयाओ !	न जानामि अहम् अम्बतातौ !
केहिं कम्माययणेहिं जीवा	कैः कर्मायतनैः जीवाः
णेरइयतिरिक्खजोणिय-	नैरयिकतिर्यग्योनिक
मणुस्सदेवेसु उववज्जंति,	मनुष्यदेवेषु उपपद्यंते (उत्पद्यन्ते)?
जाणामि णं अम्मयाओ !	जानामि खलु अम्बतातौ !
जहा सएहिं कम्माययणेहिं	यथा स्वकैः कर्मायतनैः
जीवा णेरइय जाव उववज्जंति ।	जीवाः नैरयिक यावद् उपपद्यंते ।
एवं खलु अहं अम्मयाओ !	एवं खलु अहं अम्बतातौ !
जं चेव जाणामि तं चेव ण	यच्चैव जानामि, तच्चैव न
जाणामि, जं चेव ण जाणामि	जानामि, यच्चैव न जानामि
तं चेव जाणामि ।	तच्चैव जानामि ।

[हिन्दी शब्दार्थ]

जिसको नहीं जानता हू
उसी को जानता हू।"
तब उस अतिमुक्त कुमार से
माता पिता इस प्रकार बोले—
"हे पुत्र ! यह कैसे है कि तुम जिसको
जानते हो उसीको नहीं जानते हो
जिसे नहीं जानते हो उसको जानते हो?"

[हिन्दी अर्थ]

माता पिता– "पुत्र ? तुम जिसको जानते हो उसको नही जानते और जिसको नहीं जानते उसको जानते हो, यह कैसे ?"

सूत्र ७

तब वह अतिमुक्त कुमार
माता पिता से इस प्रकार बोले—
"हे माता पिता ! मैं इतना जानता हूँ
कि जो जन्मा है वह अवश्य मरेगा
परन्तु मैं यह नहीं जानता कि
कब, कहां, कैसे तथा
कितने समय बाद मरेगा ?
मैं नहीं जानता हे माता पिता !
किन कर्मों द्वारा जीव नरक, तिर्यंच
मनुष्य और देव योनियों में
उत्पन्न होते हैं ? परन्तु यह मैं
अवश्य जानता हू कि जीव अपने
कर्मों से नरक आदि योनियों
को प्राप्त होते हैं।
हे माता-पिता ! इसीलिए मैंने कहा
कि जिसको जानता हू उसको नहीं
जानता हूँ तथा जिसको नहीं जानता हू
उसी को जानता हू ।

अतिमुक्तकुमार– 'हे माता पिता ! मैं जानता हूं कि जो जन्मा है उसको अवश्य मरना होगा, पर यह नही जानता कि कब, कहा, किस प्रकार और कितने दिन बाद मरना होगा। फिर मैं यह भी नही जानता कि जीव किन कर्मों के कारण नरक, तिर्यंच, मनुष्य और देवयोनि में उत्पन्न होते हैं, पर इतना जानता हू कि जीव अपने ही कर्मों के कारण नरक यावत् देवयोनि में उत्पन्न होते हैं।"

इस प्रकार निश्चय ही हे माता पिता ! मैं जिसको जानता हू उसी को नही जानता और जिसको नही जानता उसी को जानता हू। अत हे माता पिता ! मैं आपकी आज्ञा होने पर यावत् प्रव्रज्या लेना चाहता हू।"

[मूल सूत्र पाठ]	[संस्कृत छाया]
तं इच्छामि णं अम्मयाओ !	तद् इच्छामि खलु अम्बतातौ!
तुब्भेहिं अब्भणुण्णाए जाव	युवाभ्यामभ्यनुज्ञातो यावत्
पव्वइत्तए ।"	प्रव्रजितुम् ।"
तए णं तं अइमुत्तं कुमारं	ततः खलु तं अतिमुक्तं कुमारं
अम्मापियरो जाहे णो संचाएंति	अम्बापितरौ यदा न शक्नुवन्तः
बहूहिं आघवणाहिं	बहुभिः आख्यायनाभिः
जाव तं इच्छामो ते जाया !	यावत् तत् इच्छावः ते पुत्र !
एगदिवसमवि रायसिरिं	एक दिवसमपि राज्यश्रियं
पासेत्तए ।	द्रष्टुम् ।
तए णं से अइमुत्ते कुमारे	ततः खलु सः अतिमुक्तः कुमारः
अम्मापिउवयणमणुवत्तमाणे	मातापितृवचनमनुवर्तमानः
तुसिणीए संचिट्ठइ ।	तूष्णीकः संतिष्ठते ।
अभिसेओ जहा महाबलस्स[२६]	अभिषेको यथा महाबलस्य[२६]
णिक्खमणं जाव सामाइयमाइ-	निष्क्रमणं यावत् सामायि-
याइं एक्कारस अंगाइं अहिज्जइ,	काद्येकादश-अंगानि अधीते,
बहूइं वासाइं सामण्ण	बहूनि वर्षाणि श्रामण्य
परियाओ, गुणरयणं जाव	पर्यायः, गुणरत्ननामकं तपः
विपुले सिद्धे ।७।	यावत् विपुले सिद्धः ।

इति पंचदशाध्ययनम्

षोडशमाध्ययनम्

सूत्र १

उक्खेवओ सोलसमस्स अज्झयणस्स	उत्क्षेपकः षोडशमस्य अध्ययनस्य
एवं खलु जंबू ! तेणं कालेणं तेणं	एवं खलु जम्बू ! तस्मिन् काले
समएणं वाणारसीए णयरीए,	तस्मिन् समये वाणारस्यां नगर्यां

[हिन्दी शब्दार्थ]

इसलिए मेरी इच्छा है कि मैं आपकी आज्ञा लेकर भगवान् महावीर प्रभु के पास प्रव्रजित हो जाऊँ ।" तब अतिमुक्त कुमार को माता-पिता जब बहुत सी युक्ति प्रयुक्तियों से समझाने में समर्थ नहीं हुए तब बोले–"हे पुत्र ! हम एकदिन के लिए तुम्हारी राज्यलक्ष्मी देखना चाहते हैं ।" तब अतिमुक्तकुमार माता-पिता के वचन का अनुवर्तन करते हुए मौन रहे । तब महाबल[३०] के समान उनका राज्याभिषेक हुआ और निष्क्रमण हुआ यावत् सामायिक आदि ग्यारह अंग पढ़े । बहुत वर्षों तक चारित्र पाला, गुण रत्न तप का आराधन किया, यावत् विपुलाचल पर सिद्ध हुए ।

[हिन्दी अर्थ]

अतिमुक्तकुमार को माता पिता जब बहुत सी युक्ति-प्रयुक्तियों से समझाने में समर्थ नहीं हुए, तो बोले–"हे पुत्र! हम एक दिन के लिए तुम्हारी राज्यलक्ष्मी की शोभा देखना चाहते हैं ।"

तब अतिमुक्तकुमार माता पिता के वचन का अनुवर्तन करके मौन रहे ।

तब महाबल[३०] के समान उनका राज्याभिषेक हुआ । फिर भगवान् के पास दीक्षा लेकर सामायिक आदि ग्यारह अंगों का अध्ययन किया । बहुत वर्षों तक श्रमण चारित्र का पालन किया । गुण रत्न तप का आराधन किया । यावत् विपुलाचल पर्वत पर सिद्ध हुए ।

श्री जम्बू–"हे भगवन्! पन्द्रहवें अध्ययन का भाव सुना । अब सोलहवें अध्ययन में प्रभु ने क्या अर्थ कहा है ? कृपा कर बताइये ।"

इति पंचदशाध्ययनम्

सोलहवां अध्ययन

सूत्र १

सोलहवें अध्ययन का उत्क्षेपक हे जम्बू ! उस काल उस समय में वाणारसी नगरी में

श्री सुधर्मा स्वामी–"हे जंबू! उस काल उस समय वाणारसी नगरी में काम महावन

[मूल सूत्र पाठ]

काममहावणे चेइए तत्थ णं
वाणारसीए अलक्खे णामं राया होत्था ।
तेणं कालेणं तेणं समएणं
समणे भगवं महावीरे जाव
विहरइ ।
परिसा णिग्गया ।
तए णं अलक्खे राया इमीसे
कहाए लद्धट्ठे समाणे
हट्ठतुट्ठ जहा कूणिए[31] जाव
पज्जुवासइ,
धम्मकहा । तए णं से अलक्खे राया
समणस्स भगवओ महावीरस्स
अंतिए जहा उदायणे[32] तहा
णिक्खंते, णवरं जेट्ठं पुत्तं
रज्जे अहिसिंचइ,
एक्कारस अंगाइं,
बहुवासा परियाओ,
जाव विपुले सिद्धे ।

एवं खलु जंबू !
समणेणं जाव छट्ठमस्स
वग्गस्स अयमट्ठे पण्णत्ते ।१।

[संस्कृत छाया]

काममहावनं चैत्यं तत्र खलु वाणा-
रस्यां अलक्षः नाम राजा अभवत् ।
तस्मिन् काले तस्मिन् समये
श्रमणः भगवान् महावीरः यावत्
विहरति ।
परिषद् निर्गता ।
ततः खलु अलक्षो राजा अस्याः
कथायाः लब्धार्थः सन्
हृष्टः तुष्टः यथा कूणिको[31] यावत्
पर्युपासते । (भगवता अलक्षमुद्दिश्य)
धर्मकथाकथिता । ततःखलु सःअलक्षः
राजा श्रमणस्य भगवतः महावीरस्य
अंतिके यथा उदायनः[32] तथा
निष्क्रान्तः, विशेषः ज्येष्ठं पुत्रं
राज्ये अभिषिंचति,
एकादशांगानि अधीते
बहुवर्षाणि पर्यायः,
यावत् विपुले सिद्धः ।

एवं खलु जम्बू !
श्रमणेन यावत् षष्ठमस्य
वर्गस्य अयमर्थः प्रज्ञप्तः ।१।

इति षष्टमः वर्गः

सप्तमः वर्गः

सूत्र १

जइ णं भन्ते ! सत्तमस्स
वग्गस्स उक्खेवओ,[33]

यदि खलु भदन्त ! सप्तमस्य
वर्गस्य उत्क्षेपकः,[33]

[हिन्दी अन्वयार्थ]

काम महावन नामक उद्यान था। उस वाराणसी में प्रलक्ष नामक राजा था। उस काल उस समय में श्रमण भगवान महावीर प्रभु यावत् विचरण करते हुए उद्यान में पधारे। परिषद् वन्दन करने को निकली। तब राजा प्रलक्ष भगवान के पधारने का समाचार सुनकर बहुत प्रसन्न हुआ और कूणिक[34] के समान यावत् भगवान की सेवा करने लगा। प्रभु ने धर्मकथा कही। तब प्रलक्ष राजा ने श्रमण भगवान महावीर के पास उदायन राजा की तरह दीक्षा ग्रहण की। विशेष —ज्येष्ठ पुत्र को राज्य पर आरूढ़ किया उन्होंने ग्यारह अंगों का अध्ययन किया, बहुत वर्षों तक चारित्र पालकर यावत् विपुल गिरि पर सिद्ध हुए।

इस प्रकार हे जम्बू ! श्रमण भगवान् महावीर ने यावत् षष्ठम वर्ग का यह अर्थ कहा है।

[हिन्दी अर्थ]

नामक उद्यान था। उस वाराणसी नगरी का प्रलक्ष नाम का राजा था।

उस काल उस समय श्रमण भगवान् प्रभु महावीर यावत उस उद्यान में पधारे। जन परिषद् प्रभु-वन्दन को निकली। राजा प्रलक्ष भी प्रभु महावीर के पधारने की बात सुनकर बहुत प्रसन्न हुआ और कौणिक[34] राजा के समान वह भी यावत् प्रभु की सेवा उपासना करने लगा। प्रभु ने धर्म कथा कही।

तब प्रलक्ष राजा ने श्रमण भगवान महावीर के पास 'उदायन' की तरह[35] श्रमण दीक्षाग्रहण की।

विशेष बात यह रही कि उन्होंने अपने ज्येष्ठ पुत्र को राज्य सिंहासन पर बिठाया। ग्यारह अंगों का अध्ययन किया। बहुत वर्षों तक श्रमण चारित्र का पालन किया यावत् विपुलगिरी पर्वत पर जाकर सिद्ध हुए।

इस प्रकार हे जम्बू ! श्रमण भगवान महावीर ने छट्ठे वर्ग का यह अर्थ कहा है।"

॥ इति षष्ठम वर्ग ॥

सप्तम वर्ग

उत्क्षेपक[36] यदि छठे वर्ग का भाव प्रभु ने कहा तो "हे भगवन् सातवें वर्ग का

श्री जम्बू स्वामी- 'हे भगवन् ! छट्ठे वर्ग का भाव सुना। अब सातवें वर्ग का प्रभु

[मूल सूत्र पाठ]

जाव तेरस अज्झयणा
पण्णत्ता । तं जहा—
नंदा तह नंदवई,
नंदोत्तर-नंदसेणिया चेव ।
मरुया सुमरुया महमरुया,
मरुद्देवा य अट्ठमा ।१।
भद्दा च सुभद्दा य,
सुजाया सुमणाइया ।
भूयदिण्णा य वोद्धव्वा,
सेणिय-भज्जाण णामाइं ।२।

[संस्कृत छाया]

यावत् त्रयोदशानि अध्ययनानि
प्रज्ञप्तानि । तानि यथा—
नन्दा तथा नन्दवती,
नन्दोत्तरा नन्दश्रेणिका चैव ।
मरुता सुमरुता महामरुता,
मरुद्देवा च अष्टमी ।१।
भद्रा च सुभद्रा च,
सुजाता सुमनातिका ।
भूतदत्ता च वोद्धव्या,
श्रेणिक-भार्याणां नामानि ।२।

सूत्र २

जइ णं भंते ! तेरस
अज्झयणा पण्णत्ता,
पढमस्स णं भंते !
अज्झयणस्स समणेणं
जाव संपत्तेणं के अट्ठे
पण्णत्ते ?
एवं खलु जंवू ! तेणं कालेणं
तेणं समएणं रायगिहे णयरे
गुणसिलए चेइए,
सेणिए राया, वण्णओ ।
तस्स णं सेणियस्स रण्णो
णंदा णामं देवी होत्था ।
वण्णओ ।

यदि खलु भदन्त ! त्रयोदशानि
अध्ययनानि प्रज्ञप्तानि,
प्रथमस्य खलु भदन्त !
अध्ययनस्य श्रमणेन
यावत् संप्राप्तेन कः अर्थः
प्रज्ञप्तः ?
एवं खलु जम्बू ! तस्मिन्
काले तस्मिन् समये
राजगृहे नगरे, गुणशिलकं
चैत्यम्, श्रेणिकः राजा, वर्ण्यः
तस्य खलु श्रेणिकस्य राज्ञः
नन्दा नाम देवी अभवत् ।
वर्ण्या (वर्णकः) । (तत्र नगरे)

[हिन्दी शब्दार्थ]

प्रभु ने क्या भाव कहा है ?
श्री सुधर्मा स्वामी—"यावत् १३ अध्ययन कहे हैं। वे इस प्रकार हैं—
१ नन्दा २ नन्दवती ३ नन्दोत्तरा ४ नन्दश्रेणिका ५ मरुता ६ सुमरुता ७ महामरुता ८ मरुदेवा, ९ भद्रा और १० सुभद्रा ११ सुजाता १२ सुमनायिका और १३ भूतदत्ता। ये सब श्रेणिक राजा की भार्याओं के नाम समझें।"

[हिन्दी अर्थ]

ने क्या अर्थ कहा है ? कृपा कर कहिए।"

श्री सुधर्मा स्वामी—"सातवें वर्ग के तेरह अध्ययन कहे गये हैं, जो इस प्रकार हैं —

१ नन्दा, २ नन्दवती, ३, नन्दोत्तरा, ४ नन्दश्रेणिका, ५, मरुता, ६ सुमरुता, ७ महामरुता, ८ मरुद्देवा, ९ भद्रा १० सुभद्रा, ११ सुजाता, १२ सुमनायिका, १३ भूतदत्ता।

ये सब श्रेणिक राजा की रानियां थीं।"

सूत्र २

"हे भगवन् ! यदि सातवें वर्ग के तेरह अध्ययन बतलाये हैं तो हे पूज्य ! प्रथम अध्ययन का श्रमण भगवान यावत् मुक्ति को प्राप्त प्रभु ने क्या अर्थ फरमाया है ?"
"हे जम्बू ! उस काल उस समय में राजगृह नगर में गुणशिलक नाम का उद्यान था। श्रेणिक राजा थे जो वर्णन करने योग्य थे। उस श्रेणिक राजा के नन्दा नाम की रानी थी जो कि वर्णन करने योग्य थी।

श्री जम्बू— "हे भगवन् ! प्रभु ने सातवें वर्ग के तेरह अध्ययन कहे हैं, तो प्रथम अध्ययन का हे पूज्य ! श्रमण यावत् मुक्ति प्राप्त प्रभु ने क्या अर्थ कहा है ?"

श्री सुधर्मा स्वामी— "इस प्रकार निश्चय हे जम्बू ! उस काल उस समय में राजगृह नामका एक नगर था। उसके बाहर गुणशील नामक एक उद्यान था। वहां श्रेणिक राजा राज्य करता था। वह वर्णन योग्य था। उस श्रेणिक राजा की नन्दा नाम की रानी थी, जो वर्णन योग्य थी।

[मूल सूत्र पाठ]	[संस्कृत छाया]
सामी समोसढे ।	स्वामी समवसृतः ।
परिसा णिग्गया ।	परिषद् निर्गता ।
तएणं सा णंदा देवी इमीसे	ततः खलु सा नंदा देवी अस्याः
कहाए लद्धट्ठा समाणा जाव	कथायाः लब्धार्था सती यावत्
हट्ठतुट्ठा कोडुंबिय पुरिसे	हृष्टतुष्टा कौटुम्बिक पुरुषान्
सद्दावेइ,	शब्दयति ।
सद्दावित्ता,	शब्दयित्वा
जाणं जहा पउमावई ।	यानं यथा पद्मावती ।
जाव एक्कारस अंगाइं अहिज्जित्ता	यावद् एकादशाङ्गानि अधीत्य,
वीसं वासाइं परियाओ,	विंशति वर्षाणि पर्यायः,
जाव सिद्धा ।	यावत् सिद्धा ।
एवं तेरस वि णंदागमेण	एवं त्रयोदशापि देव्यः नंदा-
णेयव्वाओ ।	गमेन नेतव्याः ।
णिक्खेवओ ।२।	निक्षेपकः ।

इति सप्तमः वर्गः

अथ अष्टमः वर्गः

सूत्र १

जइ णं भन्ते ! समणेणं	यदि खलु भदन्त ! श्रमणेन
जाव संपत्तेणं अट्ठमस्स	यावत् संप्राप्तेन अष्टमस्य
अंगस्स अंतगडदसाणं	अंगस्य अंतकृद्दशानाम्
सत्तमस्स वग्गस्स अयमट्ठे	सप्तमस्य वर्गस्य अयमर्थः
पण्णत्ते । अट्ठमस्स णं	प्रज्ञप्तः । अष्टमस्य खलु
भंते ! वग्गस्स अंतगडदसाणं	भदन्त ! वर्गस्य अंतकृद्दशानां
समणेणं जाव संपत्तेणं	श्रमणेन यावत् संप्राप्तेन
के अट्ठे पण्णत्ते ?	कः अर्थः प्रज्ञप्तः?

[हिन्दी पद्यानुवाद]

उस नगर में स्वामी महावीर पधारे।
परिषद् वन्दन करने को गई।
तब वह नंदा महारानी भगवान
महावीर के पधारने का समाचार
सुनकर यावत् हृष्टतुष्ट
हुई और आज्ञाकारी सेवकों को
बुलाया। बुलाकर पद्मावती की तरह
धार्मिक यान लाने की आज्ञा दी।
यावत् ग्यारह अंगों का अध्ययन किया,
बीस वर्ष चारित्र पालनकर यावत् सिद्ध
हुई। इसी प्रकार नन्दवती आदि १२
ही अध्ययन नन्दा के समान जानें।
निक्षेपक यानि भगवान ने सातवें
वर्ग का यह भाव फरमाया है।

[हिन्दी पद्य]

प्रभु महावीर राजगृह नगर के उद्यान में पधारे। जन परिषद वंदन करने को गयी।

उस समय नंदा देवी भगवान् के आने की खबर सुनकर बहुत प्रसन्न हुई और आज्ञाकारी सेवक को बुलाकर धार्मिक रथ लाने की आज्ञा दी। पद्मावती की तरह इसने भी दीक्षा ली यावत् ग्यारह अंगों का अध्ययन किया। बीस वर्ष तक चारित्र पर्याय का पालन किया यावत अन्त में सिद्ध हुई।

इसी प्रकार नन्दवती आदि बाकी १२ ही अध्ययन नंदा के समान हैं। यह निक्षेप है।"

इस प्रकार हे जम्बू! भगवान् ने सातवें वर्ग का यह भाव कहा है।

इति सप्तम वर्ग

अथ अष्टम वर्ग

सूत्र १

श्री जम्बू—"यदि हे भगवन्! श्रमण
यावत् मोक्ष को प्राप्त प्रभु ने
आठवें अंग अंतगडदशा के
सातवें वर्ग का यह अर्थ
फरमाया है। तो हे भगवन्!
अंतकृतदशा के आठवें वर्ग का
श्रमण यावत् मुक्ति प्राप्त
प्रभु ने क्या अर्थ फरमाया है?

श्री जम्बू स्वामी— हे भगवन्! श्रमण यावत् मुक्ति प्राप्त प्रभु ने आठवें अंग अन्तगडदशा के सातवें वर्ग का यह भाव कहा है तो अब अन्तगडदशा सूत्र के आठवें वर्ग का श्रमण यावत् मुक्ति प्राप्त प्रभु ने क्या अर्थ कहा है? कृपा कर बताइये।"

[मूल सूत्र पाठ]	[संस्कृत छाया]
एवं खलु जंवू ! समणेणं	एवं खलु जम्बू ! श्रमणेन
जाव संपत्तेणं अट्ठमस्स अंगस्स	यावत् संप्राप्तेन
अंतगडदसाणं अट्ठमस्स	अष्टमस्य अंगस्य अंतकृद्दशानाम्
वग्गस्स दस अज्झयणा	अष्टमस्य वर्गस्य दशअध्ययनानि
पण्णत्ता । तं जहा—	प्रज्ञप्तानि । तानि यथा—
काली, सुकाली, महाकाली,	काली, सुकाली, महाकाली,
कण्हा, सुकण्हा, महाकण्हा ।	कृष्णा, सुकृष्णा, महाकृष्णा ।
वीरकण्हा य वोद्धव्वा,	वीरकृष्णा च वोद्धव्या,
रामकण्हा तहेव य ।	रामकृष्णा तथैव च ॥
पिउसेण कण्हा णवमी,	पितृसेन कृष्णा नवमी,
दसमी महासेणकण्हा य ।	दशमी महासेन कृष्णा च ॥
जइ णं भंते ! अट्ठमस्स	यदि खलु भदन्त ! अष्टमस्य
वग्गस्स दस अज्झयणा	वर्गस्य दशाध्ययनानि
पण्णत्ता, पढमस्स णं	प्रज्ञप्तानि, प्रथमस्य खलु
भंते ! अज्झयणस्स	भदन्त ! अध्ययनस्य
समणेणं जाव संपत्तेणं	श्रमणेन यावत् संप्राप्तेन
के अट्ठे पण्णत्ते ?	कः अर्थः प्रज्ञप्तः ?

सूत्र २

एवं खलु जंवू ! तेणं कालेणं	एवं खलु जम्बू ! तस्मिन् काले
तेणं समएणं चंपा णामं	तस्मिन् समये चंपा नाम्नी
णयरी होत्था, पुण्णभद्दे	नगरी आसीत्, पूर्णभद्रं
चेइए ।	चैत्यमासीत् ।
तत्थणं चम्पाए णयरीए	तत्र खलु चंपायां नगर्यां
सेणियस्स रण्णो भज्जा	श्रेणिकस्य राज्ञः भार्या
कोणियस्स रण्णो चुल्लमाउया,	कूणिकस्य राज्ञः क्षुल्ल-

[हिन्दी अनुवाद]

हे जम्बू ! श्रमण भगवान
यावत् मुक्ति प्राप्त प्रभु ने आठवें
अंग अन्तगडदशा सूत्र के
आठवें वर्ग के दस अध्ययन कहे हैं।
जो कि इस प्रकार हैं—
काली, सुकाली, महाकाली,
कृष्णा, सुकृष्णा और महाकृष्णा,
वीरकृष्णा और रामकृष्णा
नवमी पितृसेन कृष्णा और
दसवीं महासेन कृष्णा
जानना चाहिये।"
यदि हे भगवन् ! आठवें वर्ग
के दस अध्ययन कहे हैं
तो ! प्रथम अध्ययन
का श्रमण यावत्
मुक्ति को प्राप्त प्रभु ने क्या
अर्थ फरमाया है ?

[हिन्दी पद]

श्री सुधर्मा- "हे जम्बू ! श्रमण यावत् मुक्ति प्राप्त प्रभु ने आठवें अंग अन्तगड दशा के आठवें वर्ग के दस अध्ययन कहे हैं, जो इस प्रकार हैं—

१ काली, २ सुकाली, ३ महाकाली, ४ कृष्णा, ५ सुकृष्णा ६ महाकृष्णा, ७ वीर कृष्णा ८ रामकृष्णा ९ पितृसेन कृष्णा और १० महासेन कृष्णा।"

श्री जम्बू स्वामी- 'हे भगवन् ! जब आठवें वर्ग के दस अध्ययन कहे हैं तो प्रभो! प्रथम अध्ययन का श्रमण यावत मुक्ति प्राप्त प्रभु ने क्या अर्थ कहा है ?"

सूत्र २

हे जम्बू ! उस काल उस
समय में चम्पा नाम की
नगरी थी, वहां पूर्णभद्र नाम
का बगीचा था।
वहां चम्पा नगरी में कोणिक
राजा की भार्या एवं कूणिक
राजा की छोटी माता

श्री सुधर्मा स्वामी-'हे जम्बू ! उस काल उस समय चम्पा नाम की एक नगरी थी। वहां पूर्णभद्र नाम का एक उद्यान था। कोणिक राजा राज्य करता था। उस चम्पा नगरी में कोणिक राजा की माता और महाराज कोणिक की छोटी माता काली नाम की देवी थी, जो वर्णन करने योग्य थी।

[मूल सूत्र पाठ]

कालो णामं देवी
होत्था, वण्णओ ।
जहा णंदा सामाइयमाइयाइं
एक्कारस अंगाइं अहिज्जइ,
बहूहिं चउत्थ छट्ठट्ठमेहिं जाव
अप्पाणं भावेमाणी विहरइ ।

[संस्कृत छाया]

माता काली नाम देवी
अभवत्, वर्ण्या ।
यथा नंदा सामायिकादीनि
एकादश-अंगानि अधीते,
बहुभिः चतुर्थषष्टाष्टमैः यावत्
आत्मानं भावयन्ती विहरति ।

सूत्र ३

तएणं सा काली अज्जा
अण्णया कयाइं जेणेव
अज्जचंदणा अज्जा तेणेव
उवागया, उवागच्छित्ता
एवं वयासी—
"इच्छामि णं अज्जाओ !
तुब्भेहिं अब्भणुण्णाया समाणी
रयणावलिं तवोकम्मं उवसंपज्जित्ताणं
विहरित्तए ।"
"अहासुहं देवाणुप्पिया !
मा पडिबंधं करेह ।"
तए णं सा काली अज्जा
अज्ज चंदणाए अब्भणुण्णाया
समाणी रयणावलिं तवोकम्मं
उवसंपज्जित्ताणं विहरइ ।

ततःखलु सा काली आर्या
अन्यदा कदाचिद् यत्रैव
आर्यचन्दना आर्या तत्रैव
उपागता, उपागत्य
एवमवदत्—
इच्छामि खलु आर्या !
युष्माभिः अभ्यनुज्ञाता सती
रत्नावलीं तपः कर्म उपसंपद्यन्तं
विहर्तुम् ।
यथा सुखं देवानुप्रिया !
मा प्रतिबन्धं कुरुष्व ।
ततः खलु सा काली आर्या
आर्यया चन्दनया अभ्यनुज्ञाता
सती रत्नावलीं तपः कर्म
उपसंपद्य विहरति ।

सूत्र ४

तं जहा—चउत्थं करेइ, करित्ता
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
छट्ठं करेइ, करित्ता
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता

तद्यथा—चतुर्थं करोति, कृत्वा
सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
षष्टं करोति, कृत्वा
सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा,

[हिन्दी शब्दार्थ] [हिन्दी भाव]

काली नाम की देवी थी,
जो कि वर्णन करने योग्य थी।
काली रानी ने नन्दा देवी
के समान ही प्रभु महावीर
के पास प्रव्रज्या लेकर सामायिकादि
ग्यारह अंगों का अध्ययन किया।
बहुत से उपवास, बेले तेले आदि
तपस्या के द्वारा आत्मा को भावित
करती हुई यावत् विचरण करने लगी।

नन्दा देवी के समान काली रानी ने भी प्रभु महावीर के समीप श्रमण दीक्षा ग्रहण करके सामायिक आदि ग्यारह अंगों का अध्ययन किया एवं बहुत से उपवास बेले, तेले आदि तपस्या से अपनी आत्मा को भावित करती हुई विचरने लगी।२।

एक दिन वह काली आर्या आर्यचन्दना आर्या के समीप आयी और आकर हाथ जोड़ कर विनयपूर्वक इस प्रकार बोली–"हे आर्ये! आपकी आज्ञा प्राप्त हो तो मैं रत्नावली तप को अंगीकार करके विचरना चाहती हू।"

सूत्र ३

तदनन्तर वह काली आर्या अन्य किसी
दिन जहां पर आर्या चन्दनबाला थी
वहां आई, और आकर इस प्रकार बोली
"हे आर्ये! आपकी आज्ञा हो तो मैं
रत्नावली तप अंगीकार करके विचरण
करना चाहती हू।"
"हे देवानुप्रिय! जैसे सुख हो वैसे करो
परन्तु धर्मकार्य में विलम्ब मत करो।"
तब वह काली आर्या, आर्या चन्दन
बाला की आज्ञा प्राप्त हो जाने पर
रत्नावली तप को अंगीकार करके
विचरने लगी जो इस प्रकार है—

महासती आर्या चन्दना–"हे देवानुप्रिये! जैसा सुख हो, करो, धर्म साधना के कार्य में प्रमाद मत करो।"

तब काली आर्या, महासती चन्दना की आज्ञा पाकर रत्नावली तप को अंगीकार करके विचरने लगी, जो इस प्रकार है—

सूत्र ४

उन्होंने उपवास किया और इच्छा-
नुसार विगय से पारणा किया, करके
बेला किया, करके इच्छानुसार
विगय से पारणा किया, पारणा करके

काली आर्या ने पहले उपवास किया और इच्छानुसार विगय से पारणा किया, फिर बेला किया और सवकामगुण– विगय सहित पारणा किया।

[मूल सूत्र पाठ]	[संस्कृत छाया]
अट्ठमं करेइ, करित्ता	अष्टमं करोति, कृत्वा
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता	सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
अट्ठछट्ठाइं करेइ, करित्ता	अष्टौ षष्ठानि करोति, कृत्वा
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता	सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
चउत्थं करेइ, करित्ता	चतुर्थं करोति, कृत्वा
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता	सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
छट्ठं करेइ करित्ता	षष्ठं करोति, कृत्वा
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता	सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
अट्ठमं करेइ, करित्ता	अष्टमं करोति, कृत्वा
सव्व कामगुणियं पारेइ, पारित्ता	सर्वकामगुणितं पारयति पारयित्वा
दसमं करेइ, करित्ता	दशमं करोति, कृत्वा
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता	सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा।
दुवालसमं करेइ, करित्ता	द्वादशम् करोति, कृत्वा
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता	सर्वकामगुणितं पारयति पारयित्वा
चोद्दसमं करेइ, करित्ता	चतुर्दशं करोति, कृत्वा
सव्वकामगुणिय पारेइ, पारित्ता	सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
सोलसमं करेइ, करित्ता	षोडशं करोति, कृत्वा
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता	सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
अट्ठारसमं करेइ, करित्ता	अष्टादशं करोति, कृत्वा
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता	सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
वीसइमं करेइ, करित्ता	विंशतितमं करोति, कृत्वा
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता	सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
वावीसइमं करेइ, करित्ता	द्वाविंशतितमं करोति, कृत्वा
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता	सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
चउवीसइमं करेइ, करित्ता	चतुर्विंशतितमं करोति, कृत्वा
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता	सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा

[हिन्दी शब्दार्थ]

तेला किया, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
आठ बेले किये, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
उपवास किया, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
बेला किया, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
तेले का तप किया, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
चौला (चार उपवास) किया, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
पांच उपवास किये, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
छः उपवास किये, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
सात उपवास किये, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
आठ उपवास किये, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
नौ उपवास किये, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
दस उपवास किये, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
ग्यारह उपवास किये, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके

[हिन्दी अर्थ]

तेला किया, सर्वकामगुणयुक्त अर्थात् इच्छानुसार विगय सहित पारणा किया,

फिर आठ बेले किये और सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया,

फिर उपवास किया और सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया,

बेले की तपस्या की और सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया,

तेला किया और सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया,

दशम अर्थात् चोले की तपस्या की और सर्वकामगुण पारणा किया,

द्वादशम– पचोला किया और सर्वकामगुण पारणा किया

चतुर्दश– छः का तप किया और सर्वकामगुण पारणा किया,

षोडशम– सात का तप किया और सर्वकामगुण पारणा किया,

अष्टादश– आठ का तप किया और सर्वकामगुण पारणा किया,

नव का तप किया और सर्वकामगुण पारणा किया

दस का तप किया, और सर्वकामगुण पारणा किया,

ग्यारह का तप किया और सर्वकामगुण पारणा किया,

[मूल सूत्र पाठ]	[संस्कृत छाया]
छव्वीसइमं करेइ, करित्ता	षड्विंशतितमं करोति, कृत्वा
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता	सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
अट्ठावीसइमं करेइ, करित्ता	अष्टाविंशतितमं करोति, कृत्वा
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता	सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
तीसइमं करेइ, करित्ता	त्रिंशतितमं करोति, कृत्वा
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता	सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
बत्तीसइमं करेइ, करित्ता	द्वात्रिंसत्तमं करोति, कृत्वा
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता	सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
चोत्तीसइमं करेइ, करित्ता	चतुस्त्रिंशत्तमं करोति, कृत्वा
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता	सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
चोत्तीसं छट्ठाइं करेइ, करित्ता	चतुस्त्रिंशत्पष्ठानि करोति, कृत्वा
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता	सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
चोत्तीसइमं करेइ, करित्ता	चतुस्त्रिंशत्तमं करोति, कृत्वा
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता	सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
बत्तीसइमं करेइ, करित्ता	द्वात्रिंशत्तमं करोति, कृत्वा
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता	सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
तीसइमं करेइ, करित्ता	त्रिंशत्तमं करोति, कृत्वा
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता	सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
अट्ठावीसइमं करेइ, करित्ता	अष्टाविंशतितमं करोति, कृत्वा
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता	सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
छव्वीसइमं करेइ, करित्ता	षड्विंशतितमं करोति, कृत्वा
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता	सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
चउवीसइमं करेइ, करित्ता	चतुर्विंशतितमं करोति, कृत्वा
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता	सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
बावीसइमं करेइ, करित्ता	द्वाविंशतितमं करोति, कृत्वा
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता	सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
वीसइमं करेइ, करित्ता	विंशतितमं करोति, कृत्वा
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता	सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा

[हिन्दी अन्वय]

बारह का तप किया, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
तेरह उपवास किये, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
चौदह उपवास किये, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
पन्द्रह उपवास किये, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
सोलह उपवास किये, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
चौंतीस बेले किये, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
सोलह की तपस्या की, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
पन्द्रह की तपस्या की, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
चौदह की तपस्या की, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
तेरह की तपस्या की, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
बारह उपवास किये, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
ग्यारह उपवास का तप किया, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
दस का तप किया, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
नौ उपवास किये, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके

[हिन्दी अर्थ]

बारह का तप किया और सर्वकामगुण पारणा किया,

तेरह का तप किया और सर्वकामगुण पारणा किया,

चौदह का तप किया और सर्वकामगुण पारणा किया,

पन्द्रह का तप किया और सर्वकामगुण पारणा किया,

सोलह का तप किया और सर्वकामगुण पारणा किया,

चौंतीस बेले किए और सर्वकामगुण पारणा किया,

फिर सोलह का तप किया और सर्वकामगुण पारणा किया,

पन्द्रह का तप किया और सर्वकामगुण पारणा किया,

चौदह का तप किया और सर्वकामगुण पारणा किया,

तेरह का तप किया और सर्वकामगुण पारणा किया,

बारह का तप किया और सर्वकामगुण पारणा किया,

ग्यारह का तप किया और सर्वकामगुण पारणा किया,

दस का तप किया और सर्वकामगुण पारणा किया,

नव का तप किया और सर्वकामगुण पारणा किया,

[मूल सूत्र पाठ]

अट्ठारसमं करेइ, करित्ता
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
सोलसमं करेइ, करित्ता
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
चोद्दसमं करेइ, करित्ता
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
बारसमं करेइ, करित्ता,
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
दसमं करेइ, करित्ता
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
अट्ठमं करेइ, करित्ता
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
छट्ठं करेइ, करित्ता
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
चउत्थं करेइ, करित्ता
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
अट्ठछट्ठाइं करेइ, करित्ता
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
अट्ठमं करेइ, करित्ता
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
छट्ठं करेइ, करित्ता
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
चउत्थं करेइ, करित्ता
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
एवं खलु एसा रयणावलीए
तवोकम्मस्स पढमा परिवाडी,
एगेणं संवच्छरेणं तिहिं मासेहिं

[संस्कृत छाया]

अष्टादशं करोति, कृत्वा
सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
षोडशं करोति, कृत्वा
सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
चतुर्दशं करोति, कृत्वा
सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
द्वादशं करोति, कृत्वा
सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
दशमं करोति, कृत्वा
सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
अष्टमं करोति, कृत्वा
सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
षष्ठं करोति, कृत्वा
सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
चतुर्थं करोति, कृत्वा
सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
अष्टषष्ठानि करोति, कृत्वा
सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
अष्टमं करोति, कृत्वा
सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
षष्ठं करोति, कृत्वा
सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
चतुर्थं करोति, कृत्वा
सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
एवं खलु एषा रत्नावल्याः
तपः कर्मणः प्रथमा परिपाटी,
एकेन संवत्सरेण त्रिभिर्मासैः

[हिन्दी अन्वय]

आठ उपवास किये, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
सात का तप किया, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
छः उपवास किये, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
पांच उपवास किये, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
चार का तप किया, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
तीन उपवास किये, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
बेले का तप किया, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
उपवास किया, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
आठ बेले किये, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
तेला किया, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
बेला किया, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
उपवास किया, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया।
इस प्रकार इस रत्नावली
तप कर्म की प्रथम परिपाटी की
एक वर्ष तीन महीने

[हिन्दी अर्थ]

आठ का तप किया और सर्वकाम गुण पारणा किया,
सात का तप किया और सर्वकामगुण पारणा किया,

छः का तप किया और सर्वकामगुण पारणा किया,

पचोले का तप किया और सर्वकामगुण पारणा किया,

चोले का तप किया और सर्वकामगुण पारणा किया,

तेले का तप किया और सर्वकामगुण पारणा किया,

बेले का तप किया और सर्वकामगुण पारणा किया,

उपवास का तप किया और सर्वकामगुण पारणा किया,

आठ बेले किये और सर्वकामगुण पारणा किया,

तेला किया और सर्वकामगुण पारणा किया,

पश्चात् बेला किया और सर्वकामगुण पारणा किया,

उपवास किया और सर्वकामगुण पारणा किया।

इस प्रकार इस रत्नावली तप कर्म की प्रथम परिपाटी की काली आर्या ने आराधना की।

सूत्रानुसार रत्नावली तप की इस आराधना की प्रथम परिपाटी (लड़ी) एक वर्ष

(मूल सूत्र पाठ)	(संस्कृत छाया)
वावीसाए य अहोरत्तेहिं	द्वाविंशतिभिश्च अहोरात्रैः
अहासुत्तं जाव आराहिया भवइ ।४।	यथासूत्रं यावत् आराधिता भवति ।४।

सूत्र ५

तयाणंतरं च णं दोच्चाए	तदनन्तरं च खलु द्वितीयस्यां
परिवाडीए चउत्थं करेइ,	परिपाट्याम् चतुर्थं करोति,
करित्ता विगइवज्जं पारेइ, पारित्ता	कृत्वा विकृतिवर्जं पारयति, पारयित्वा
छट्ठं करेइ, करित्ता	षष्ठं करोति, कृत्वा
विगइवज्जं पारेइ, पारित्ता	विकृतिवर्जं पारयति, पारयित्वा
एवं जहा पढमाए, णवरं	एवं यथा प्रथमायाम्, विशेषः
सव्व पारणए विगइवज्जं	सर्वपारणायां विकृतिवर्जं
पारेइ जाव आराहिया भवइ ।	पारयति यावत् आराधिता भवति
तयाणंतरं च णं तच्चाए परिवाडीए	तदनंतरं च खलु तृतीयायां
चउत्थं करेइ, करित्ता अलेवाडं	परिपाट्यां चतुर्थं करोति, कृत्वा
पारेइ,	अलेपकृतं पारयति,
सेसं तहेव ।	शेषं तथैव ।
एवं चउत्था परिवाडी,	एवम् चतुर्था परिपाटी,
णवरं सव्वपारणए आयंबिलं	विशेषतः सर्वपारणा दिने आचामाम्लं
पारेइ, सेसं तं चेव ।	पारयति, शेषं तदेव ।
पढमम्मि सव्वकामपारणयं,	प्रथमायां सर्वकामपारणकम्,
बीइयाए विगइवज्जं ।	द्वितीयायां विकृतिवर्जम् ।
तइयम्मि अलेवाडं,	तृतीयायाम् अलेपकृतम्,
आयंबिलओ चउत्थम्मि ।।	आचामाम्लम् च चतुर्थ्याम् ।
तए णं सा काली अज्जा रयणावली	ततः खलु सा काली आर्या रत्ना-
तवोकम्मं पंचहिं संवच्छरेहिं	वली तपः कर्म पंचभिः संवत्सरैः
दोहि य मासेहिं अट्ठावीसाए	द्वाभ्याम् मासाभ्याम् अष्टा
य दिवसेहिं अहासुत्तं	विंशत्या च दिवसैः यथासूत्रं

[हिन्दी शब्दार्थ]

व बावीस अहोरात्रि से सूत्रानुसार यावत् आराधना की जाती है।

[हिन्दी अर्थ]

तीन महीने और बावीस अहोरात्र में पूर्ण की जाती है।

सूत्र ५

तदनन्तर द्वितीय परिपाटी
में उपवास किया, करके
विगयरहित पारणा किया, करके
बेले का तप किया, करके
विगय रहित पारणा किया।
शेष प्रथम परिपाटी के समान।
विशेष यह कि सब पारणे विगय
रहित पालती यावत् आराधते हैं।
तदनन्तर वह तृतीय परिपाटी
में उपवास करती, करके
लेपरहित पारणा करती है।
शेष पहले की तरह। इसी प्रकार
चौथी परिपाटी में, विशेष,
सब पारणे आयबिल
से करती है। शेष उसी प्रकार।
पहली परिपाटी में सर्वकामगुणयुक्त
पारणा, द्वितीय में विगयरहित
तीसरी में लेपरहित और चौथी
में आयबिल से पारणा किया।
इस प्रकार उस काली आर्या
ने रत्नावली तप कर्म की पांच
वर्ष दो मास व अट्ठाईस
दिनों में सूत्रानुसार

इस एक परिपाटी में तीन सौ चौरासी दिन तपस्या के एवं अठासी दिन पारणा के होते हैं। इस प्रकार कुल चारसौ बहत्तर दिन होते हैं।४।

इसके पश्चात दूसरी परिपाटी में काली आर्या ने उपवास किया और विगय रहित पारणा किया, बेला किया और विगय रहित पारणा किया।

इस प्रकार यह भी पहली परिपाटी के समान है। इसमें केवल यह विशेष (अन्तर) है कि पारणा विगय रहित होता है। इस प्रकार सूत्रानुसार इस दूसरी परिपाटी का आराधन किया जाता है।

इसके पश्चात् तीसरी परिपाटी में वह काली आर्या उपवास करती है और लेप रहित पारणा करती है। शेष पहले की तरह है।

ऐसे ही काली आर्या ने चौथी परिपाटी की आराधना की। इसमें विशेषता यह है कि सब पारणे आयबिल से करती है। शेष उसी प्रकार है।

प्रथम परिपाटी में सर्वकामगुण एवं दूसरी में विगय रहित पारणा किया। तीसरी में लेप रहित और चौथी परिपाटी में आयबिल से पारणा किया।

[मूल सूत्र पाठ]	[संस्कृत छाया]
जाव आराहित्ता जेणेव	यावत् आराध्य यत्रैव
अज्जचंदणा अज्जा तेणेव	आर्यचंदना आर्या तत्रैव
उवागया, उवागच्छित्ता	उपागता, उपागत्य
अज्जचंदणं, वंदइ णमंसइ,	आर्याचन्दनां वन्दते नमस्यति
वंदित्ता णमंसित्ता,	वन्दित्वा नमस्यित्वा,
बहूहिं चउत्थछट्ठट्ठम-	बहुभिः चतुर्थषष्ठाष्टम-
दसमदुवालसेहिं तवोकम्मेहिं	दशमद्वादशभिः तपः कर्मभिः
अप्पाणं भावेमाणी विहरइ ।५।	आत्मानं भावयन्ती विहरति ।५।

सूत्र ६

तए णं सा काली अज्जा	ततः खलु सा काली आर्या
तेणं ओरालेणं जाव धम-	तेन उदारेण यावत् धमनि-
णिसंतया जाया यावि होत्था ।	संतता जाता चाप्यभवत् ।
से जहा णामए इंगाल सगडी	तद् यथा नाम अंगारशकटी
वा जाव सुहुयहुयासणे	वा यावत् सुहुतहुताशन
इव भासरासिपलिच्छण्णा	इव भस्मराशिप्रतिच्छन्ना
तवेणं तेएणं तवतेयसिरीए	तपसा तेजसा तपस्तेजः श्रिया
अईव अईव उवसोभेमाणी	च अतीव अतीव उपशोभमाना
चिट्ठइ ।६।	तिष्ठति ।६।

सूत्र ७

तए णं तीसे कालीए अज्जाए	ततः खलु तस्याः काल्याः
अण्णया कयाइं पुव्वरत्ता-	आर्यायाः अन्यदा कदाचित् पूर्व-
वरत्तकाले अयमज्झत्थिए,	रात्रापररात्रिकाले अयमध्यासः संजातः
जहा खंदयस्स चिंता	यथा स्कंदकस्य चिंता
जाव अत्थि उट्ठाणे कम्मे,	यावदस्ति उत्थानं कर्म,
बले, वीरिए पुरिसक्कार-पर-	बलं वीर्यम् पुरुषकारः परा-
क्कमे, सद्धाधिई-संवेगे वा	क्रमः श्रद्धाधृतिः संवेगः वा

(हिन्दी शब्दार्थ)	(हिन्दी अर्थ)
यावत् आराधना की, करके जहाँ आर्यचंदना आर्या थी वहाँ वह आई, आकर आर्या चंदना को उसने वन्दना नमस्कार किया, वन्दन नमस्कार करके बहुत से उपवास बेले, तेले, चौले पचोले आदि तप से आत्मा को भावित करती हुई विचरने लगी ।५।	इस भांति काली आर्या ने रत्नावली तप को पांच वर्ष दो महीने और अठावीस दिनों में सूत्रानुसार यावत् आराधना पूर्ण करके जहाँ आर्या चंदना थी वहाँ आई और आर्या चंदना को वंदना नमस्कार किया । फिर बहुत से उपवास बेले, तेले, चार पाँच आदि तप से अपनी आत्मा को भावित करती हुई विचरने लगी ।५।

सूत्र ६

तपस्या के बाद वह काली आर्या उस प्रधान तपस्या से यावत् सूख गई और उसकी धमनियां दीखने लगी । जैसे कोयले की भरी गाडी में चलते हुए आवाज निकलती है वैसे ही उनकी हड्डियां कड कड बोलने लगी, यावत् भस्म से ढकी हुई हुहुत अग्नि के समान तपस्या के तेज से अतीव शोभायमान थी ।६।	इतनी तपस्या करने के बाद काली आर्या उस प्रधान तपस्या से यावत सूख गई और उसकी खुली नसें दिखने लगीं । जैसे कोयले से भरी गाडी में चलते समय आवाज निकलती है वैसे उठते बैठते चलते फिरते काली आर्या की हड्डियां भी कड कड बोलने लगीं यावत् फिर भी होम की हुई अग्नि के समान एवं भस्म से ढकी हुई आग जसे भीतर से प्रज्ज्वलित रहती है वैसे तपस्या के तप तेज की शोभा से आर्या काली का शरीर अत्यन्त शोभायमान हो रहा था ।६।

सूत्र ७

फिर उसी काली आर्या को अन्य किसी दिन रात्रि के पिछले प्रहर में यह विचार उत्पन्न हुआ स्कदक के समान चिन्तन हुआ कि जब तक शरीर में उत्थान कर्म, बल, वीर्य और पुरुषाकार पराक्रम है (मन में) श्रद्धा धैर्य एवं वैराग्य	फिर एक दिन रात्रि के पिछले प्रहर में काली आर्या के हृदय में स्कन्दक मुनि के समान इस प्रकार विचार उत्पन्न हुआ—"इस कठोर तप साधना के कारण मेरा शरीर अत्यन्त कृश हो गया है तथापि जब तक मेरे इस शरीर में उत्थान, कर्म, बल, वीर्य और पुरुषाकार पराक्रम है, मन में श्रद्धा, धैर्य एवं वैराग्य है तब तक मेरे लिए उचित है कि कल सूर्योदय होने के पश्चात आर्य चंदना

[मूल सूत्र पाठ]	[संस्कृत छाया]
ताव मे सेयं कल्लं जाव	तावत् मे श्रेयः कल्ये यावत्
जलंते अज्जचंदणं अज्जं	ज्वलति आर्यचंदनाम् आर्याम्
आपुच्छित्ता अज्जचंदणाए	आपृच्छ्य आर्यचंदनया
अज्जाए अब्भणुण्णायाए	आर्यया अभ्यनुज्ञातायाः
समाणीए संलेहणा झूसणा-	सत्याः संलेखना जोषणा-
झूसियाए भत्तपाणपडियाइ	जुष्टाया भक्तपान प्रत्याख्या-
क्खियाए कालं अणवकंखमाणीए	तायाः कालमनवकांक्षन्त्याः
विहरित्तए त्तिकट्टु	विहर्तुम् इति कृत्वा
एवं संपेहेइ, संपेहित्ता	एवं संप्रेक्षते, संप्रेक्ष्य
कल्लं जेणेव अज्जचंदणा	कल्यं यत्रैव आर्यचंदना
अज्जा तेणेव उवागच्छइ,	आर्या तत्रैव उपागच्छति,
उवागच्छित्ता	उपागत्य
अज्जचंदणं अज्जं वंदइ,	आर्यचंदनाम् आर्याम् वन्दते
णमंसइ, वंदित्ता णमंसित्ता	नमस्यति, वंदित्वा नमस्यित्वा
एवं वयासी—	एवमवादीत्—
"इच्छामि णं अज्जाओ !	"इच्छामि खलु हे आर्या !
तुब्भेहिं अब्भणुण्णायाए	युष्माभिः अभ्यनुज्ञाता
समाणीए संलेहणा जाव	सती संलेखना यावत्
विहरित्तए ।"	विहर्तुम् ।"
"अहासुहं देवाणुप्पिया !	"यथासुखं देवानुप्रिया !
मा पडिबंधं करेह ।"	मा प्रतिबंधं कुरु ।"
तओ काली अज्जा अज्जचंदणाए	ततः काली आर्या आर्यचंदनया
अज्जाए अब्भणुण्णाया	आर्यया अभ्यनुज्ञाता
समाणी संलेहणाझूसणा	सती संलेखना जोषण-
झूसिया जाव विहरइ ।	जुष्टा यावद् विहरति ।
सा काली अज्जा अज्जचंदणाए	सा काली आर्या आर्यचंदनायाः
अज्जाए अंतिए सामाइय-	आर्यायाः अन्तिके

[हिन्दी अन्वयार्थ]

है तब तक
मुझे योग्य है कि कल
सूर्योदय के पश्चात् आर्यचंदना
आर्या को पूछकर आर्य चन्दना
की आज्ञा प्राप्त होने पर
सलेखना झूसणा को
सेवन करती हुई भक्त-
पान का त्याग करके मृत्यु को
नहीं चाहती हुई विचरण करूँ, यह
विचार किया, करके सूर्योदय होते
ही जहाँ पर आर्यचंदना आर्या
थी वहाँ पर आई, और आकर
आर्यचंदना आर्या को वंदना नमस्कार
करती है। करके इस प्रकार बोली—
"हे आर्ये! आपकी आज्ञा प्राप्तकर मैं
सलेखना करती हुई विचरण करना
चाहती हूं।" (तब आर्य चंदना
आर्या ने कहा)-"हे देवानुप्रिये!
जिस प्रकार सुख हो वैसे
करो। सत्कार्य साधन में
विलम्ब मत करो।"
तब काली आर्या आर्यचंदना
आर्या से आज्ञा प्राप्त होने पर
संलेखना झूसणा को सेवन
करती हुई यावत् विचरण करने लगी।
उस काली आर्या ने आर्यचंदना
आर्या के पास सामायिकादि

[हिन्दी अर्थ]

आर्या को पूछकर उनकी आज्ञा प्राप्त होने पर संलेखना झूषणा का सेवन करती हुई भक्तपान का त्याग करके मृत्यु को नहीं चाहती हुई विचरण करू।"

ऐसा सोचकर वह अगले दिन सूर्योदय होते ही जहां आर्यचंदना थी वहां आई और आर्यचंदना को वन्दना नमस्कार कर इस प्रकार बोली—

"हे आर्ये! आपकी आज्ञा हो तो मैं संलेखना झूषणा करते हुए विचरना चाहती हूं।"

आर्यचंदना-"हे देवानुप्रिये! जैसा तुम्हें सुख हो, वैसा करो। सत्कार्य साधन में विलम्ब मत करो।"

तब आर्य चंदना की आज्ञा पाकर काली आर्या संलेखना झूषणा से यावत् विचरने लगी।

[मूल सूत्र पाठ]

माइयाइं एक्कारस अंगाइं
अहिज्जित्ता वहुपडिपुण्णाइं
अट्ठ संवच्छराइं सामण्ण-
परियागं पाउणित्ता मासियाए
संलेहणाए अप्पाणं झूसित्ता
सट्ठि भत्ताइं अणसणाए
छेदित्ता जस्सट्ठाए कीरइ
णग्गभावे जाव चरिमुस्सास
णीसासेहिं सिद्धा ।७।

[संस्कृत छाया]

सामायिकादीनि एकादशांगानि
अधीत्य वहुप्रतिपूर्णान्
अष्टसंवत्सरान् (यावत्) श्रामण्य
पर्यायं पालयित्वा मासिक्या
संलेखनया आत्मानं जुष्ट्वा
षष्ठि भक्तानि अनशनेन
छित्वा यस्यार्थाय क्रियते
नग्नभावः (स्थविरकल्पित्वं) यावत्
चरमैरुच्छ्‌वासनिश्वासैः सिद्धा ।७।

इति प्रथम अध्ययन

द्वितीय अध्ययन

उक्खेवओ वीयस्स अज्झयणस्स ।
एवं खलु जंवू ! तेणं कालेणं
तेणं समएणं चंपा णामं
णयरी, पुण्णभद्दे चेइए,
कोणिए राया ।
तत्थ णं सेणियस्स रण्णो
भज्जा कोणियस्स रण्णो
चुल्लमाउया सुकाली
णामं देवी होत्था ।
जहा काली तहा
सुकाली वि णिक्खंता,
जाव वहूहिं चउत्थ जाव
अप्पाणं भावेमाणी विहरइ ।
तएणं सा सुकाली अज्जा
अण्णया कयाइं जेणेव अज्जचंदणा

उत्क्षेपकः द्वितीयस्य अध्ययनस्य ।
एवं खलु जंवू ! तस्मिन् काले
तस्मिन् समये चम्पा नामा
नगरी पूर्णभद्रं चैत्यम्
कूणिको राजा (आसीत्) ।
तत्र खलु श्रेणिकस्य राज्ञः
भार्या कोणिकस्य राज्ञः
क्षुल्लमाता सुकाली
नामा देवी अभवत् ।
यथा काली तथा सुकाली
अपि निष्क्रान्ता
यावत् वहुभिः चतुर्थैः यावत्
आत्मानं भावयन्ती विहरति ।
ततः खलु सा सुकाली आर्या
अन्यदा कदाचित् यत्रैव आर्यचन्दना

[हिन्दी शब्दार्थ]

ग्यारह अंगों का अध्ययन करके पूरे आठ वर्ष तक श्रमण पर्याय का पालन करके एक मास की संलेखना से आत्मा को झूषित करके साठ भक्त का अनशन पूर्णकर जिस हेतु से संयम ग्रहण किया अपरिग्रह भाव से यावत् उसको अन्तिम श्वासोच्छ्वास से पूर्णकर सिद्ध-बुद्ध मुक्त हो गई ।७।

[हिन्दी भाव]

काली आर्या ने आर्य चन्दनबाला आर्या के पास सामायिक आदि ग्यारह अंगों का अध्ययन किया और पूरे आठ वर्ष तक चारित्र धर्म का पालन करके एक मास की संलेखना से आत्मा को झूषित कर साठ भक्त का अनशन पूर्ण कर जिस हेतु से संयम ग्रहण किया था अपरिग्रह भाव से यावत् उसको अन्तिम श्वासोच्छ्वास तक पूर्ण कर वह काली आर्या सिद्ध-बुद्ध और मुक्त हो गई ।७।

इति प्रथम अध्ययन

द्वितीय अध्ययन

दूसरे अध्ययन का उत्क्षेपक है । इस प्रकार है जम्बू ! उस काल उस समय में चम्पा नाम की नगरी, पूर्णभद्र नामक उद्यान और कौणिक राजा थे । उस नगरी में श्रेणिक राजा की भार्या और कौणिक राजा की छोटी माता सुकाली नाम की रानी थी । काली की तरह सुकाली भी प्रव्रजित हुई तथा बहुत सारे उपवास आदि तप से आत्मा को भावित करती हुई विचरने लगी । तब वह सुकाली आर्या अन्य किसी दिन जहाँ आर्यचन्दना

दूसरे अध्ययन का उत्क्षेपक ।

श्री जम्बू स्वामी—"हे पूज्य ! आठवें वर्ग के दूसरे अध्ययन में प्रभु महावीर ने क्या भाव कहे हैं ? कृपाकर बताइये ।"

श्री सुधर्मा स्वामी-"हे जम्बू ! इस प्रकार उस काल उस समय में चंपा नाम की एक नगरी थी वहां पूर्णभद्र उद्यान था और कौणिक नाम का राजा वहां राज्य करता था । उस नगरी में श्रेणिक राजा की रानी और कौणिक राजा की छोटी माता सुकाली नाम की देवी थी ।

काली की तरह सुकाली भी प्रव्रजित हुई और बहुत से उपवास आदि तप से आत्मा को भावित करती हुई विचरने लगी ।

फिर वह सुकाली आर्या अन्यदा किसी दिन आर्य चन्दना के पास आकर इस प्रकार

[मूल सूत्र पाठ]	[संस्कृत छाया]
अज्जा जाव "इच्छामि णं अज्जाओ !	आर्या यावत् "इच्छामि खलु आर्या !
तुब्भेहिं अब्भणुण्णाया	युष्माभिः अभ्यनुज्ञाता
समाणी कणगावली	सती कनकावली
तवोकम्मं उवसंपज्जित्ताणं	तपः कर्म उपसंपद्य
विहरित्तए।"	विहर्तुम् ।
एवं जहा रयणावली तहा	एवं यथा रत्नावली (तपः कृतं) तथा
कणगावली वि,	कनकावली तपः अपि (विहितम्)
णवरं तिसु	विशेषस्तु (कनकावल्यां) त्रिषु
ठाणेसु अट्ठमाइं करेइ,	स्थानेषु अष्टमानि करोति,
जहा रयणावलीए छट्ठाइं ।	यथा रत्नावल्यां षष्ठानि
एक्काए परिवाडीए संवच्छरो,	एकस्यां परिपाट्यां संवत्सरः
पंचमासा बारस य अहोरत्ता	पंचमासाः द्वादश च अहोरात्राः
चउण्हं पंच वरिसा	चतुर्षु (परिपाटीसु) पंच वर्षाणि
णव मासा अट्ठारस दिवसा,	नवमासाः अष्टादश दिवसाः
सेसं तहेव, णव वासा परियाओ ।	शेषं तथैव, नव वर्षाणि पर्यायः ।
जाव सिद्धा ।२।	यावत् सिद्धा ।

इति द्वितीयाध्ययनः

अथ तृतीयाध्ययनः

एवं महाकाली वि ।	एवं महाकाली अपि ।
णवरं खुड्डागं सीहणिक्कीलियं	विशेषस्तु क्षुल्लक सिंह निष्क्रीडित-
तवोकम्मं उवसंपज्जित्ताणं	तपः कर्म उपसंपद्य
विहरइ । तं जहा—	विहरति । तद्यथा—
चउत्थं करेइ, करित्ता	चतुर्थं करोति, कृत्वा
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता	सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
छट्ठं करेइ, करित्ता	षष्ठं करोति, कृत्वा

[हिन्दी शब्दार्थ]

आर्या श्री वहाँ आई और कहने लगी—"हे आर्ये ! मैं चाहती हूँ कि आपकी आज्ञा प्राप्तकर कनकावली तप को अंगीकर करके विचरण करूं ।" जैसे आर्या ने रत्नावली तप किया वैसे ही कनकावली तप भी किया । विशेषता यह कि तीनों स्थानों पर तेले का व्रत किया । जैसे रत्नावली तप में जहाँ बेले किये जाते हैं । एक परिपाटी में एक वर्ष पाँच महीने बारह अहोरात्र लगते हैं । चारों, परिपाटियों में, पाँच वर्ष नव मास अठारह दिन लगते हैं । शेष वैसे ही । नौ वर्ष पर्याय, यावत् सिद्ध हो गई ।

[हिन्दी अर्थ]

बोली- 'हे आर्ये ! आपकी आज्ञा होने पर मैं कनकावली तप को अंगीकार करके विचरना चाहती हूँ ।'

सती चंदना की आज्ञा पाकर रत्नावली के समान सुकाली ने कनकावली तप का आराधन किया । विशेषता इसमें यह थी कि तीनों स्थानों पर अष्टम=तेले किये जबकि रत्नावली में षष्ठ=बेले किये जाते हैं । एक परिपाटी में एक वर्ष पांच महीने और बारह अहोरात्रियां लगती हैं । इस एक परिपाटी में ८८ दिन का पारणा और १ वर्ष २ मास १४ दिन का तप होता है । चारों परिपाटी का काल पांच वर्ष, नव महीने और अठारह दिन होते हैं । शेष वर्णन काली आर्या के समान है । नव वर्ष तक चारित्र का पालन कर यावत् वह भी सिद्ध, बुद्ध और मुक्त हो गई ।

इति द्वितीय अध्ययन

तृतीय अध्ययन

इसी तरह महाकाली भी विशेष यह-लघुसिंहनिष्क्रीडित तप को अंगीकार करके विचरने लगी । जैसे कि उपवास किया, करके सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके बेला किया, करके

श्री जम्बू स्वामी- "भगवन् ! आठवें वर्ग के तीसरे अध्ययन का प्रभु महावीर ने क्या भाव बताया है ?"

आर्य सुधर्मा- "तीसरे अध्ययन में महाकाली का वर्णन है । उसने भी काली के समान दीक्षा ली, इसमें विशेषता इतनी है कि महाकाली ने लघुसिंह निष्क्रीडित तप की आराधना की, जो इस प्रकार है—

[मूल सूत्र पाठ]

सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
चउत्थं करेइ, करित्ता
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
अट्ठमं करेइ, करित्ता
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
छट्ठं करेइ, करित्ता
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
दसमं करेइ, करित्ता
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
अट्ठमं करेइ, करित्ता
सव्वकामगुणियं पारेइ पारित्ता
दुवालसमं करेइ, करित्ता
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
दसमं करेइ, करित्ता
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
चउद्दसमं करेइ, करित्ता
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
बारसमं करेइ, करित्ता
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
सोलसमं करेइ, करित्ता
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
चउद्दसमं करेइ, करित्ता
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
अट्ठारसमं करेइ, करित्ता
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
सोलसमं करेइ, करित्ता
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता

[संस्कृत छाया]

सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
चतुर्थं करोति, कृत्वा
सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
अष्टमं करोति, कृत्वा
सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
षष्ठं करोति, कृत्वा
सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
दशमं करोति, कृत्वा
सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
अष्टमं करोति, कृत्वा
सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
द्वादशं करोति, कृत्वा
सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
दशमं करोति, कृत्वा
सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
चतुर्दशं करोति, कृत्वा
सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
द्वादशम् करोति, कृत्वा
सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
षोडशं करोति, कृत्वा
सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
चतुर्दशं करोति, कृत्वा
सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
अष्टादशं करोति, कृत्वा
सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
षोडशं करोति, कृत्वा
सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा

[हिन्दी शब्दार्थ]

सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
उपवास किया, करके
सर्वकामगुणित पारणा किया, करके
तेला किया, करके
सर्वकामगुणित पारणा किया, करके
बेला किया, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
चौला किया, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
तेला किया, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
पचौला किया, करके
सर्वकामगुणित पारणा किया, करके
चार उपवास किये, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
छः उपवास किये, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
पांच उपवास किये, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
सात उपवास किये, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
छः उपवास किये, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
आठ उपवास किये, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
सात उपवास किये, करके
सर्वकामगुणित पारणा किया, करके

[हिन्दी अर्थ]

उपवास किया और सर्वकामगुण पारणा किया।

बेला किया और सर्वकामगुण पारणा किया।

उपवास किया और सर्वकामगुण पारणा किया।

तेला किया और सर्वकामगुण पारणा किया।

बेला किया और सर्वकामगुण पारणा किया।

चौला किया और सर्वकामगुण पारणा किया।

तेला किया और सर्वकामगुण पारणा किया।

पांच का तप किया और सर्वकामगुण पारणा किया।

चौला किया और सर्वकामगुण पारणा किया।

छः किये और सर्वकामगुण पारणा किया।

पांच किये और सर्वकामगुण पारणा किया।

सात किये और सर्वकामगुण पारणा किया।

छह किये और सर्वकामगुण पारणा किया।

आठ का तप किया और सर्वकामगुण पारणा किया।

[मूल सूत्र पाठ]

वीसइमं करेइ, करित्ता
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
अट्ठारसमं करेइ, करित्ता
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
वीसइमं करेइ, करित्ता
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
सोलसमं करेइ, करित्ता
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
अट्ठारसमं करेइ, करित्ता
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
चउद्दसमं करेइ, करित्ता
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
सोलसमं करेइ, करित्ता
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
बारसमं करेइ, करित्ता
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
चउद्दसमं करेइ, करित्ता
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
दसमं करेइ, करित्ता
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
बारसमं करेइ, करित्ता
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
अट्ठम करेइ करित्ता
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
दसमं करेइ, करित्ता
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
छट्ठं करेइ, करित्ता

[संस्कृत छाया]

विंशतितमं करोति, कृत्वा
सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
अष्टादशं करोति, कृत्वा
सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
विंशतितमं करोति, कृत्वा
सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
षोडशं करोति, कृत्वा
सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
अष्टादशं करोति, कृत्वा
सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
चतुर्दशं करोति, कृत्वा
सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
षोडशं करोति, कृत्वा
सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
द्वादशम् करोति, कृत्वा
सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
चतुर्दशम् करोति, कृत्वा
सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
दशमं करोति, कृत्वा
सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
द्वादशं करोति, कृत्वा
सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
अष्टमं करोति, कृत्वा
सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
दशमं करोति, कृत्वा
सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
षष्ठं करोति, कृत्वा

[हिन्दी शब्दार्थ]

नौ का तप किया, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
आठ उपवास किये, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
नौ उपवास किये, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
सात उपवास किये, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
आठ उपवास किये, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
छः उपवास किये, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
सात उपवास किये, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
पांच उपवास किये, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
छः उपवास किये, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
चार उपवास किये, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
पांच किये, करके
सर्वकामगुण पारणा किया, करके
तेला किया, करके
सर्वकामगुण पारणा किया, करके
चार किये, करके
सर्वकामगुण पारणा किया, करके
बेला किया, करके

[हिन्दी भाव]

सात किये और सर्वकामगुण पारणा किया।

नव किया और सर्वकामगुण पारणा किया।

आठ किया और सर्वकामगुण पारणा किया।

नव किया और सवकामगुण पारणा किया

सात किया और सर्वकामगुण पारणा किया

आठ किया और सर्वकामगुण पारणा किया

छह किया और सवकामगुण पारणा किया,

सात किया और सर्वकामगुण पारणा किया,

पांच किया और सर्वकामगुण पारणा किया,

छह किया और सर्वकामगुण पारणा किया,

चौला किया और सर्वकामगुण पारणा किया,

पांच किया और सर्वकामगुण पारणा किया,

तेला किया और सर्वकामगुण पारणा किया,

चौला किया और सवकामगुण पारणा किया,

(मूल सूत्र पाठ)	(संस्कृत छाया)
सव्वकामगुणियं पारेइ पारित्ता	सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
अट्ठमं करेइ, करित्ता	अष्टमं करोति, कृत्वा
सव्वकामगुणियं पारेइ पारित्ता	सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
चउत्थं, करेइ करित्ता	चतुर्थं करोति, कृत्वा
सव्वकामगुणियं पारेइ पारित्ता	सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
छट्ठं करेइ करित्ता	षष्ठं करोति, कृत्वा
सव्वकामगुणियं पारेइ पारित्ता	सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
चउत्थं करेइ करित्ता	चतुर्थं करोति, कृत्वा
सव्वकामगुणियं पारेइ पारित्ता[३७]	सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
तहेव चत्तारि परिवाडीओ,	तथैव चतस्रः परिपाट्यः,
एक्काए परिवाडीए	एकस्यां परिपाट्याम् (कालः)
छम्मासा सत्त य दिवसा ।	षण्मासाः सप्त च दिवसाः ।
चउण्हं दो वरिसा, अट्ठावीसा	चतसृणां (परिपाटीनां कालः)
य दिवसा ।	द्वे वर्षे अष्टाविंशतिः च दिवसाः
जाव सिद्धा ।३।	(भवन्ति) यावत् सिद्धा ।३।

इति तृतीयमध्ययनम्

अथ चतुर्थमध्ययनम्

एवं कण्हा वि ।	एवं कृष्णापि ।
णवरं महासीहणिक्कीलियं तवोकम्मं	विशेषः (एषा) महासिंहनिष्क्रीडितं तपः
जहेव खुड्डागं ।	कर्म (करोति) यथा क्षुल्लकः ।
णवरं चोत्तीसइमं जाव णेयव्वं,	विशेषः चतुस्त्रिंशद् यावन्नेतव्यम्,
तहेव ऊसारेयव्वं,	तथैव उत्सारयितव्यम् ।
एक्काए परिवाडीए एगं	एकस्यां परिपाट्यां एकम्
वरिसं, छम्मासा अट्ठारस य दिवसा ।	वर्षं षण्मासाः अष्टादश च दिवसाः ।

[हिन्दी शब्दार्थ]

सर्वकामगुण पारणा किया, करके
तेला किया, करके
सर्वकामगुण पारणा किया, करके
उपवास किया, करके
सर्वकामगुण पारणा किया, करके
बेला किया, करके
सर्वकामगुण पारणा किया, करके
उपवास किया, करके
सर्वकामगुण पारणा किया, करके
इसी प्रकार चारों परिपाटियां हैं ।
एक परिपाटी में छः
महीने और सात दिन का समय लगा ।
चारों परिपाटी का काल दो
वर्ष और अट्ठावीस दिन
होते हैं । यावत् सिद्ध हुई ।३।

[हिन्दी पद्य]

बेला किया और सर्वकामगुण पारणा किया,

तेला किया और सर्वकामगुण पारणा किया,

उपवास किया और सर्वकामगुण पारणा किया,

बेला किया और सर्वकामगुण पारणा किया,

उपवास किया और सर्वकामगुण पारणा किया,

इसी प्रकार चारों परिपाटियां समझनी चाहिये । एक परिपाटी में छह महीने और सात दिन लगे । चारों परिपाटियों का काल दो वर्ष और अट्ठावीस दिन होते हैं । इस प्रकार तप करती हुई अन्त में आर्या महाकाली भी संलेखना करके सिद्ध बुद्ध और मुक्त हो गई ।

तीसरा अध्ययन समाप्त

चौथा अध्ययन

इसी प्रकार कृष्णा रानी भी
विशेष—महासिंह निष्क्रीडित व्रत
किया लघुसिंह निष्क्रीडित के समान
विशेष–१६ तक तप किया जाता है
और उसी प्रकार उतारा जाता है ।
एक परिपाटी में एक वर्ष छः महीने
और अट्ठारह दिन लगे ।

इसी प्रकार कृष्णा रानी का भी चौथा अध्ययन समझना चाहिये ।

महाकाली से इसमें विशेषता यह है कि इन्होंने महासिंहनिष्क्रीडित तप किया । लघु-सिंह निष्क्रीडित तप से इसमें इतनी विशेषता

[मूल सूत्र पाठ]

चउण्हं छ वरिसा, दो मासा
बारस य अहोरत्ता,
सेसा जहा कालीए,
जाव सिद्धा ।४।

[संस्कृत छाया]

चतसृणां परिपाटीनां (कालः) षड्
वर्षाणि द्वौ मासौ-द्वादश च अहोरात्राः
शेषं यथा काल्याः
यावत् सिद्धा ।४।

इति चतुर्थाध्ययनम्

अथ पंचमाध्ययनम्

एवं सुकण्हा वि,
णवरं सत्तसत्तमियं भिक्खु-
पडिमं उवसंपज्जित्ताणं विहरइ।
पढमे सत्तए एक्केक्कं भोयणस्स
दत्तीं पडिगाहेइ,
एक्केक्कं पाणगस्स ।
दोच्चे सत्तए दो दो भोयणस्स
दो दो पाणगस्स ।
तच्चे सत्तए तिण्णि भोयणस्स
तिण्णि पाणगस्स ।
चउत्थे चउ, पंचमे पंच,
छट्ठे छ, सत्तमे सत्तए
सत्तदत्तीओ भोयणस्स पडिग्गाहेइ,
सत्तपाणगस्स ।
एवं खलु सत्तसत्तमियं
भिक्खुपडिमं एगूणपण्णाए
राइंदिएहिं, एगेण य
छण्णउएणं भिक्खासएणं
अहासुत्तं जाव आराहित्ता जेणेव
अज्जचंदणा अज्जा तेणेव उवागया ।
अज्जचंदणं अज्जं वंदइ,

एवं सुकृष्णापि,
विशेषः—सप्तसप्तमिकां भिक्षु
प्रतिमाम् उपसंपद्य विहरति ।
प्रथमे सप्तके एकैकां भोजनस्य
दत्तिं प्रतिगृह्णाति,
तथा एकैकां पानीयस्य ।
द्वितीये सप्तके द्वे द्वे भोजनस्य
द्वे द्वे पानीयस्य ।
तृतीये सप्तके तिस्रः भोजनस्य
तिस्रः च पानकस्य ।
चतुर्थ चतस्रः, पंचमे पंच,
षष्ठे षट्, सप्तमे सप्तके
सप्तदत्तीः भोजनस्य प्रतिगृह्णाति,
सप्त पानकस्य ।
एवं खलु सप्तसप्तमिकां
भिक्षुप्रतिमां एकोनपंचाशत्
रात्रिन्दिवैः, एकेन च
षण्णवत्या भिक्षाशतेन
यथासूत्रं यावद् आराध्य यत्रैव
आर्यचंदना आर्या तत्रैव उपागता ।
आर्यचंदनां आर्यां वन्दते

चारों परिपाटियों में ६ वर्ष दो महीने और बारह अहोरात्र लगते हैं। शेष काली की तरह। अन्त में संलेखना करके यह भी सिद्ध हो गई।४।

है कि इसमें एक से लेकर १६ तक तप किया जाता है और उसी प्रकार उतारा जाता है। एक परिपाटी में एक वर्ष छह महीने और अठारह दिन लगते हैं। चारों परिपाटियों में छह वर्ष दो महीने और बारह अहोरात्र लगते हैं।

इति चतुर्थाध्ययनम्

अथ पंचमाध्ययनम्

इस प्रकार सुकृष्णा भी विशेष—सप्त सप्तमिका भिक्षु प्रतिमा ग्रहण करके विचरने लगी। प्रथम सप्तक में एक एक दत्ती भोजन की और एक एक दत्ती पानी की ग्रहण की। द्वितीय सप्तक में दो दो भोजन की और दो दो पानी की। तीसरे सप्तक में तीन तीन दत्ती भोजन की और तीन तीन पानी की। चौथे सप्तक में चार, पांचवें में पांच, छठे में छ और सातवें सप्तक में सात दाती भोजन की और सात ही पानी की ग्रहण की। इस प्रकार सप्त सप्तमिका भिक्षु प्रतिमा उनपचास दिनों में एक सौ छियानवे भिक्षा दातियों से सूत्रानुसार आराधना करके जहाँ पर आर्यचन्दना आर्या थीं वहाँ पर आई। आर्यचन्दना आर्या को वन्दना

शेष वर्णन काली आर्या की तरह है। अन्त में संलेखना करके यह कृष्णा आर्या भी सिद्ध बुद्ध और मुक्त हो गई।

इसी प्रकार पांचवें अध्ययन में सुकृष्णा देवी का भी वर्णन समझना चाहिये।

यह भी श्रेणिक राजा की रानी और कौणिक राजा की छोटी माता थी। भगवान् का उपदेश सुनकर श्रमण दीक्षा अंगीकार की। इसमें विशेषता यह है कि आर्य चन्दनबाला आर्या की आज्ञा प्राप्त कर आर्या सुकृष्णा 'सप्त सप्तमिका' भिक्षु प्रतिमा रूप तप अंगीकार करके विचरने लगी, जिसकी विधि इस प्रकार है—प्रथम सप्ताह में एक एक दत्ति (दाती) भोजन की और एक ही दत्ति पानी की ग्रहण की जाती है। दूसरे सप्ताह में दो-दो दत्ति भोजन की और दो पानी की, तीसरे सप्ताह में तीन दत्ति भोजन की और तीन पानी की, चौथे सप्ताह में चार चार, पांचवें सप्ताह (सप्तक) में पांच पांच छठे में छह छह, और सातवें सप्ताह में सात दत्ति भोजन की ली जाती है और सात ही पानी की ग्रहण की जाती है।

[मूल सूत्र पाठ]

णमंसइ, वंदित्ता णमंसित्ता
एवं वयासी—
"इच्छामि णं अज्जाओ !
तुब्भेहिं अब्भणुण्णाया समाणी
अट्ठट्ठमियं भिक्खुपडिमं
उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए ।"
"अहासुहं देवाणुप्पिए !
मा पडिबंधं करेह ।"
तएणं सा सुकण्हा अज्जा
अज्जचंदणाए अज्जाए अब्भ-
णुण्णाया समाणी अट्ठट्ठमियं
भिक्खुपडिमं उवसंपज्जित्ताणं
विहरइ ।
पढमे अट्ठए एक्केक्कं भोयणस्स
दत्तिं पडिगाहेइ, एक्केक्कं
पाणगस्स दत्तिं जाव अट्ठमे
अट्ठए अट्ठट्ठ भोयणस्स दत्तिं
पडिगाहेइ, अट्ठ पाणगस्स ।
एवं खलु अट्ठट्ठमियं भिक्खु-
पडिमं चउसट्ठीए राइंदिएहिं
दोहिं य अट्ठासीएहिं भिक्खा-
सएहिं अहासुत्तं जाव आराहित्ता,
णवणवमियं भिक्खु-
पडिमं उवसंपज्जित्ताणं
विहरइ ।
पढमे णवए एक्केक्कं भोयणस्स
दत्तिं पडिगाहेइ एक्केक्कं

[संस्कृत छाया]

नमस्यति, वन्दित्वा नमस्यित्वा
एवमवादीत्—
"इच्छामि खलु हे आर्याः !
युष्माभिः अभ्यनुज्ञाता सती
अष्ट अष्टमिकां भिक्षुप्रतिमां
उपसंपद्य विहर्तुम् ।"
"यथासुखं देवानुप्रिये !
मा प्रतिबन्धं कुरु ।"
ततः खलु सा सुकृष्णा आर्या
आर्यचन्दनया आर्यया अभ्य-
नुज्ञाता सती अष्ट अष्टमिकां
भिक्षु प्रतिमाम् उपसंपद्य खलु
विहरति ।
प्रथमे अष्टके एकैकां भोजनस्य
दत्तिं प्रतिगृह्णाति, एकैकां
पानकस्य दत्तिं यावत् अष्टमे
अष्टके अष्टाष्ट भोजनस्य दत्तीः
प्रतिगृह्णाति, अष्ट पानकस्य ।
एवं खलु अष्ट अष्टमिकां भिक्षु-
प्रतिमां चतुष्षष्ठ्या रात्रिन्दिवैः
द्वाभ्यां च अष्टाशीत्या भिक्षा
शतैः यथासूत्रं यावत् आराध्य
नवनव मिकां भिक्षु
प्रतिमाम् उपसंपद्य
विहरति ।
प्रथमे नवके एकैकां भोजनस्य
दत्तिं प्रतिगृह्णाति एकैकां

[हिन्दी अनुवाद]

नमस्कार की, वन्दन नमस्कार करके इस प्रकार बोली—
"हे आर्ये ! आपकी आज्ञा प्राप्त होने पर मैं 'अष्ट अष्टमिका' भिक्षु प्रतिमा अंगीकार करके विचरना चाहती हूं।"
"हे देवानुप्रिये ! जैसे सुख हो वैसे ही करो। धर्म कार्य में प्रतिबन्ध मत करो।" ।१।
तदनन्तर वह सुकृष्णा आर्या आर्य-चन्दना आर्या की आज्ञा प्राप्तकर अष्ट अष्टमिका भिक्षु प्रतिमा अंगीकार करके विचरने लगी।
प्रथम अष्टक में एक एक भोजन की दत्ति ग्रहण की और एक एक दत्ति जल की यावत् आठवें अष्टक में आठ दत्ति भोजन की और आठ दत्ति जल की ग्रहण की।
इस प्रकार अष्ट अष्टमिका भिक्षु प्रतिमा चौंसठ रात दिनों में दो सौ अट्ठासी भिक्षा दत्तियों से सूत्रानुसार यावत् आराधना करके आर्या सुकृष्णा नव-नवमिका भिक्षु प्रतिमा को अंगीकर करके विचरने लगी।
प्रथम नवक में एक एक भोजन की दत्ति और एक एक पानी की दत्ति

[हिन्दी भाव]

इस प्रकार उनपचास (४९) रात-दिन में एक सौ छियानवे (१९६) भिक्षा की दत्तियां होती हैं।

सुकृष्णा आर्या ने सूत्रोक्त विधि के अनुसार इसी 'सप्त सप्तमिका' भिक्षु प्रतिमा तप की सम्यग् आराधना की। इसमें आहार पानी की सम्मिलित रूप से प्रथम सप्ताह में सात दत्तियां हुईं, दूसरे सप्ताह में चौदह, तीसरे सप्ताह में इक्कीस, चौथे में अट्ठाईस, पांचवें में पतीस, छठे में बयालीस, और सातवें सप्ताह में उनपचास दत्तियां हुईं। इस प्रकार सभी मिलाकर कुल एक सौ छियानवे (१९६) दत्तियां हुईं।

इस तरह सूत्रानुसार इस प्रतिमा का आराधन करके सुकृष्णा सती आर्या चन्दन-बाला के पास आई और उन्हें वन्दना नमस्कार करके इस प्रकार बोली—

"हे आर्ये ! आपकी आज्ञा हो तो मैं 'अष्ट-अष्टमिका' भिक्षु प्रतिमा का तप अंगीकार करके विचरूं।"

आर्य चन्दना —"हे देवानुप्रिय ! जैसा तुम्हें सुख हो वैसा करो। धर्म कार्य में प्रमाद मत करो।"

फिर वह सुकृष्णा आर्या आर्य चन्दना आर्या की आज्ञा प्राप्त होने पर 'अष्ट-अष्टमिका' भिक्षु प्रतिमा अंगीकार करके विचरने लगी।

इस तप में प्रथम अष्टक में एक-एक दत्ति भोजन की और एक-एक दत्ति पानी की ग्रहण की जाती है यावत् इसी क्रम से दूसरे अष्टक में प्रति दिन दो दत्तियां आहार की और दो ही दत्तियां पानी की ली जाती हैं,

[मूल सूत्र पाठ]

पाणगस्स, जाव णवमे णवए
णवणव दत्ती भोयणस्स
पडिगाहेइ णव पाणगस्स ।
एवं खलु णवणवमियं भिक्खु-
पडिमं एकासीइ राइंदिएहिं
चउहिं पंचोत्तरेहिं, भिक्खासएहिं
अहासुत्तं जाव आराहित्ता ।
दसदसमियं भिक्खुपडिमं उव-
संपज्जित्ताणं विहरइ ।
पढमे दसए एक्केक्कं भोयणस्स
दत्तिं पडिगाहेइ एक्केक्कं पाण-
गस्स जाव दसमे दसए दस-
दस भोयणस्स, दसदस पाणगस्स ।
एवं खलु एयं दसदसमियं
भिक्खुपडिमं एक्केणं राइंदिय-
सएणं अद्धछट्ठेहिं भिक्खा-
सएहिं अहासुत्तं जाव आराहेइ ।
आराहित्ता बहूहिं चउत्थ जाव
मासद्धमासविविह तवोकम्मेहिं
अप्पाणं भावेमाणी विहरइ ।
तए णं सा सुकण्हा अज्जा
तेणं ओरालेणं जाव सिद्धा ।५।

[संस्कृत छाया]

पानकस्य यावत् नवमे नवके
नवनव दत्तीः भोजनस्य प्रति-
गृह्णाति नव च पानकस्य ।
एवं खलु नवनवमिकां भिक्षु-
प्रतिमां एकाशीत्या रात्रिन्दिवैः
चतुर्भिः पंचोत्तरैः भिक्षाशतैः
यथासूत्रं यावदाराध्य
दशदशमिकां भिक्षुप्रतिमाम्
उपसंपद्य विहरति ।
प्रथमे दशके एकैकां भोजनस्य
दत्तिं प्रतिगृह्णाति एकैकां पान-
कस्य यावत् दशमे दशके दश
दश भोजनस्य दश दश च पानकस्य ।
एवं खलु एतां दशदशमिकां
भिक्षुप्रतिमां एकेन रात्रिन्दिव-
शतेन अर्द्धषष्ठैः भिक्षाशतैः
यथासूत्रं यावत् आराधयति ।
आराध्य बहुभिः चतुर्थं यावत्
मासार्द्धमासविविधतपः कर्मभिः
आत्मानं भावयन्ती विहरति ।
ततः खलु सा सुकृष्णा आर्या
तेन उदारेण(तपसा)यावत् सिद्धा ।५।

इति पंचमाध्ययनम्

षष्ठमध्ययनम्

एवं महाकण्हा वि । णवरं
खुड्डागं सव्वओभद्दं पडिमं

एवं महाकृष्णापि । विशेषस्तु
क्षुल्लकां सर्वतोभद्र-प्रतिमां

[हिन्दी शब्दार्थ]

ग्रहण करती यावत् नवमे नवक में प्रतिदिन नव दत्ती भोजन की और नव दत्ती पानी की ग्रहण करती। इस प्रकार नवनवमिकाभिक्षुप्रतिमा इक्यासी दिनों में चार सौ पाँच भिक्षादत्तियों से सूत्रानुसार यावत् आराधना करके फिर दशदशमिका भिक्षुप्रतिमा अंगीकार करकेविचरनेलगी। प्रथम दशक में एक एक भोजन की दत्ति ग्रहण करती और एक एक पानी की। यावत् दसवें दशक में दस दस दाती भोजन की और दस दस पानी की ग्रहण की।

इस प्रकार यह दशदशमिका भिक्षु प्रतिमा एक सौ रात-दिनों में पाँच सौ पचास भिक्षादत्तियों से सूत्रानुसार यावत् आराधना करके बहुत से उपवास यावत् मास अर्द्धमास आदि विविध तप कर्म से आत्मा को भावित करती हुई विचरने लगी।

फिर वह सुकृष्णा आर्या उस उदार श्रेष्ठ तप से यावत् शुद्ध बुद्ध मुक्त हो गई।

[हिन्दी अर्थ]

इस तप में प्रथम नवक में प्रतिदिन वे एक एक दत्ति भोजन की और एक एक पानी की ग्रहण करतीं यावत् क्रम से बढ़ते बढ़ते नवमें नवक में प्रतिदिन नौ दत्तियां भोजन की और नव ही पानी की दत्तियां ग्रहण करतीं। इस प्रकार इक्यासी दिनों में चारसौ पाँच भिक्षा दत्तियों से 'नवनवमिका' भिक्षु प्रतिमा पूरी हुई, जिसकी सूत्रोक्त विधि के अनुसार सम्यग् आराधना करती हुई आर्या सुकृष्णा विचरने लगी।

इसके पश्चात् पूर्व की तरह यावत् अपनी गुरुणीजी की आज्ञा प्राप्तकर सुकृष्णा आर्या ने 'दश दशमिका' भिक्षु प्रतिमा रूप तप स्वीकार किया। इस तप के आराधना काल में वे प्रथम दशक में प्रतिदिन एक एक दत्ति भोजन की और एक एक दत्ति पानी की यावत् इसी क्रम से बढ़ाते बढ़ाते दसवें दशक में प्रतिदिन दस दत्तियां भोजन की और दस ही दत्तियां पानी की ग्रहण करती।

इस प्रकार उन आर्या सुकृष्णा ने इस 'दश दशमिका' भिक्षु प्रतिमा रूप तप को एक सौ रात दिनों में पांच सौ पचास भिक्षा दत्तियों से पूर्ण किया।

सूत्रानुसार इस 'दश दशमिका' भिक्षु प्रतिमा तप की आराधना करके बहुत से यावत् मास, अर्द्धमास आदि विविध तप-कर्म से आर्या सुकृष्णा अपनी आत्मा को भावित करती हुई विचरने लगी।

इति पंचम अध्ययन

छठा अध्ययन

इसी प्रकार महासेन कृष्णा का भी (अध्ययन समझना चाहिए)। विशेष

इस तरह वह सुकृष्णा आर्या उन उदार श्रेष्ठ तपों की आराधना करते करते शरीर से

[हिन्दी शब्दार्थ]

(यह कि वह आर्यचन्दना आर्या को आज्ञा प्राप्त कर) लघुसर्वतोभद्र प्रतिमा अंगीकार करके विचरने लगी, जो इस प्रकार है—
उसने उपवास किया, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
बेला किया, करके
सर्वकामगुणित पारणा किया, करके
तेला किया, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
चौला किया, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
पाँच उपवास किये, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
तेला किया, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
चौला किया, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
पाँच उपवास किये, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
उपवास किया, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
बेला किया, करके
सर्वकामगुणित पारणा किया, करके
पाँच उपवास किये, करके
सवकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
उपवास किया, करके

[हिन्दी अर्थ]

अत्यंत कृश हो गयी एवं अन्त में संलेखना संथारा करके सम्पूर्ण कर्मों का क्षय कर वे सिद्ध-बुद्ध एवं मुक्त हो गयी।

इसी प्रकार छठा महासेन कण्हा का अध्ययन भी समझना चाहिये।

ये राजा श्रेणिक की रानी एवं राजा कोणिक की छोटी माता थी। इन्होंने भी यावत् भगवान के पास दीक्षा ली।

विशेष, आर्या चन्दनबाला की आज्ञा प्राप्त कर आर्या महासेन कण्हा लघु (क्षुद्र-क्षुल्लक) सर्वतोभद्र प्रतिमा का तप अंगीकार करके विचरने लगी। इस तप की विधि इस प्रकार है—

इसमें सब प्रथम उपवास किया, करके सर्वकामगुण पारणा किया, करके
बेला किया करके सवकामगुण पारणा किया
तेला करके सवकामगुण पारणा किया
चौला करके सवकामगुण पारणा किया
पचोला करके सवकामगुण पारणा किया
तेला करके सवकामगुण पारणा किया
चौला करके सवकामगुण पारणा किया
पचोला करके सवकामगुण पारणा किया
उपवास करके सवकामगुण पारणा किया
बेला करके सवकामगुण पारणा किया
पचोला करके सवकामगुण पारणा किया
उपवास करके सवकामगुण पारणा किया

[मूल सूत्र पाठ]	[संस्कृत छाया]
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता	सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
छट्ठं करेइ, करित्ता	षष्ठं करोति, कृत्वा
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता	सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
अट्ठमं करेइ, करित्ता	अष्टमं करोति, कृत्वा
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता	सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
दसमं करेइ, करित्ता	दशमं करोति, कृत्वा
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता	सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
छट्ठं करेइ, करित्ता	षष्ठं करोति, कृत्वा
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता	सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
अट्ठमं करेइ, करित्ता	अष्टमं करोति, कृत्वा
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता	सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
दसमं करेइ, करित्ता	दशमं करोति, कृत्वा
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता	सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
दुवालसमं करेइ, करित्ता	द्वादशं करोति, कृत्वा
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता	सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
चउत्थं करेइ, करित्ता	चतुर्थं करोति, कृत्वा
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता	सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
दसमं करेइ, करित्ता	दशमं करोति, कृत्वा
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता	सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
दुवालसमं करेइ, करित्ता	द्वादशं करोति, कृत्वा
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता	सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
चउत्थं करेइ, करित्ता	चतुर्थं करोति, कृत्वा
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता	सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
छट्ठं करेइ, करित्ता	षष्ठं करोति, कृत्वा
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता	सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
अट्ठमं करेइ, करित्ता	अष्टमं करोति, कृत्वा
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता	सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा

[हिन्दी शब्दार्थ]

सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके बेला किया, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके तेला किया, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके चौला किया, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके बेला किया, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके तेला किया, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके चौला किया, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके पांच उपवास किये, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके उपवास किया, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके चौला किया, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके पांच उपवास किये, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके उपवास किया, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके बेला किया, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके तेला किया, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके

[हिन्दी अर्थ]

बेला करके सर्वकामगुण पारणा किया,

तेला करके सर्वकामगुण पारणा किया,

चौला करके सर्वकामगुण पारणा किया,

बेला करके सर्वकामगुण पारणा किया,

तेला करके सर्वकामगुण पारणा किया,

चौला करके सर्वकामगुण पारणा किया,

पचौला करके सर्वकामगुण पारणा किया,

उपवास करके सर्वकामगुण पारणा किया,

चौला करके सर्वकामगुण पारणा किया,

पचौला करके सर्वकामगुण पारणा किया,

उपवास करके सर्वकामगुण पारणा किया,

बेला करके सर्वकामगुण पारणा किया,

तेला करके सर्वकामगुण पारणा किया,

[मूल सूत्र पाठ]	[संस्कृत छाया]
एवं खलु एयं खुड्डागसव्व- ओभद्दस्स तवोकम्मस्स पढमं परिवाडि र्तिहि मासेहि दर्साहि दिवसेहि अहासुत्तं जाव आराहित्ता दोच्चाए परिवाडिए चउत्थं करेइ, करित्ता विगइवज्जं पारेइ, पारित्ता जहा रयणावलीए तहा एत्थ वि चत्तारि परिवाडीओ । पारणा तहेव । चउण्हं कालो संवच्छरो मासो दस य दिवसा । सेसं तहेव जाव सिद्धा ।६।	एवं खलु एतां क्षुल्लकसर्वतो- भद्रस्य तपः कर्मणः प्रथमां परिपाटीं त्रिभिः मासैः दशभिः दिवसैः यथासूत्रं यावदाराध्य द्वितीयस्यां परिपाटचाम् चतुर्थं करोति, कृत्वा विकृतिवर्जं पारयति, पारयित्वा यथा रत्नावल्यां तथा अत्रापि चतस्त्रः परिपाट्यः । पारणा तथैव । चतसृणां कालः संवत्सरः । मासः दश च दिवसाः । शेषं तथैव यावत् सिद्धा ।६।

इति षष्ठमध्ययनम्

अथ सप्तमध्ययनम्

सूत्र १

एवं वीरकण्हा वि । णवरं महालयं सव्वओभद्दं तवोकम्मं उवसंपज्जित्ताणं विहरइ । तं जहा— चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता छट्ठं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता अट्ठमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता	एवं वीरकृष्णा अपि । विशेषः—(एषा) महत् सर्वतोभद्रं तपः कर्म उपसंपद्य विहरति । तद् यथाः— चतुर्थं करोति, कृत्वा सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा षष्ठं करोति, कृत्वा सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा अष्टमं करोति, कृत्वा सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा

[हिन्दी शब्दार्थ]

इस प्रकार इस लघुसर्वतोभद्र तप कर्म की प्रथम परिपाटी को तीन महीने और दस दिनों में सूत्रानुसार आराधना करके दूसरी परिपाटी में उपवास किया, करके विगय रहित पारणा किया।
जैसे रत्नावली तप में चार परिपाटी कही गई हैं वैसे ही यहां पर भी चार परिपाटियां होती हैं।
पारणा उसी प्रकार करना चाहिये।
चारों का काल एक वर्ष एक मास और दस दिन हैं।
अन्त में संलेखना करके महासेन कृष्णा भी सिद्ध बुद्ध मुक्त हो गई।

[हिन्दी अर्थ]

इस प्रकार यह लघु (क्षुद्र-क्षुल्लक) सर्वतोभद्र तप-कर्म की प्रथम परिपाटी तीन महीने और दस दिनों में पूर्ण होती है। इसकी सूत्रानुसार सम्यग् रीति (विधि)से आराधना करके आर्या महासेन कृष्णा ने इसकी दूसरी परिपाटी में उपवास किया और विगयरहित पारणा किया।

जैसे रत्नावली तप में चार परिपाटियाँ बताई गई वैसे ही इस में भी चार परिपाटियां होती हैं। पारणा भी उसी प्रकार समझना चाहिये।

इसकी पहली परिपाटी में पूरे सौ दिन लगे, जिसमें पच्चीस दिन पारणे के और पिचहत्तर दिन तपस्या के हुए। क्रम से इतने ही दिन दूसरी, तीसरी एवं चौथी परिपाटी के हुए। इस तरह इन चारों परिपाटियों का सम्मिलित काल एक वर्ष, एक मास और दस दिन का हुआ।

छठा अध्ययन समाप्त

सातवां अध्ययन

सूत्र १

इसी प्रकार वीरकृष्णा का अध्ययन भी समझना चाहिये।
विशेष —यह महत् सर्वतोभद्र तप कर्म को अंगीकार करके विचरने लगी। वह जैसे —उपवास किया, करके सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके बेला किया, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके तेला किया, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके

पहली एवं दूसरी परिपाटी में पारणे में विगय का त्याग कर दिया। तीसरी परिपाटी में पारणे में विगय के लेप मात्र का भी त्याग कर दिया। चौथी परिपाटी में आयम्बिल किया।

इस प्रकार इस तप की सूत्रोक्त विधि से आर्या महासेन कृष्णा ने आराधना की और अंत में संलेखना-संथारा करके सभी कर्मों का क्षय कर वे सिद्ध बुद्ध और मुक्त हो गई।

इसी प्रकार सातवां अध्ययन वीर सेन कृष्णा आर्या का भी समझना चाहिये। यह भी श्रेणिक राजा की छोटी रानी एवं कौणिक

[मूल सूत्र पाठ]	[संस्कृत छाया]
दसमं करेइ, करित्ता	दशमं करोति, कृत्वा
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता	सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
दुवालसमं करेइ, करित्ता	द्वादशम् करोति, कृत्वा
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता	सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
चउद्दसमं करेइ, करित्ता	चतुर्दशं करोति, कृत्वा
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता	सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
सोलसमं करेइ, करित्ता	षोडशं करोति, कृत्वा
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता	सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
पढमा लया ।१।	(एषा) प्रथमा लता ।१।

सूत्र २

दसमं करेइ, करित्ता	दशमं करोति, कृत्वा
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता	सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
दुवालसमं करेइ, करित्ता	द्वादशं करोति, कृत्वा
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता	सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
चउद्दसमं करेइ, करित्ता	चतुर्दशं करोति, कृत्वा
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता	सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
सोलसमं करेइ, करित्ता	षोडशं करोति, कृत्वा
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता	सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
चउत्थं करेइ, करित्ता	चतुर्थं करोति, कृत्वा
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता	सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
छट्ठं करेइ, करित्ता	षष्ठं करोति, कृत्वा
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता	सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
अट्ठमं करेइ, करित्ता	अष्टमं करोति, कृत्वा
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता	सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
बीया लया ।२।	(एवं) द्वितीया लता ।२।

(हिन्दी शब्दार्थ) (हिन्दी पद्य)

चौला किया, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
पाच उपवास किये, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
छः उपवास किये, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
सात उपवास किये, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
यह प्रथम लता हुई ।१।

राजा की माता थीं। इन्होंने भी भगवान् महावीर का धर्मोपदेश सुनकर तब संसार से विरक्त होकर श्रमणी-दीक्षा अंगीकार की।

विशेष यह है कि वह अपनी गुरुणीजी आर्या चन्दन बाला की आज्ञा लेकर 'महा सर्वतोभद्र' तप को अंगीकार करके विचरने लगीं।

इस 'महा सर्वतोभद्र' की आराधना करने की विधि इस प्रकार है—

सब प्रथम उपवास किया और सर्वकाम-गुण पारणा किया,

बेला किया और सर्वकामगुण पारणा किया,

सूत्र २

चार उपवास किये, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
पाँच उपवास किये, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
छः उपवास किये, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
सात उपवास किये, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
उपवास किया, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
बेला किया, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
तेला किया, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
इस प्रकार दूसरी लता पूर्ण की ।२।

तेला किया और सर्वकामगुण पारणा किया,

चोला किया और सर्वकामगुण पारणा किया

पचोला किया और सर्वकामगुण पारणा किया

छह किये, और सर्वकामगुण पारणा किया,

सात किये, और सर्वकामगुण पारणा किया,

यह प्रथम लता हुई।

चोला किया और सर्वकामगुण पारणा किया,

पचोला किया और सर्वकामगुण पारणा किया,

छह किये, और सर्वकामगुण पारणा किया,

सात किये, और सर्वकामगुण पारणा किया,

उपवास किया और सर्वकामगुण पारणा किया,

[मूल सूत्र पाठ]	[संस्कृत छाया]

सूत्र ३

सोलसमं करेइ, करित्ता	षोडशं करोति, कृत्वा
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता	सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
चउत्थं करेइ, करित्ता	चतुर्थं करोति, कृत्वा
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता	सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
छट्ठं करेइ, करित्ता	षष्ठं करोति, कृत्वा
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता	सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
अट्ठमं करेइ, करित्ता	अष्टमं करोति, कृत्वा
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता	सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
दसमं करेइ, करित्ता	दशमं करोति, कृत्वा
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता	सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
दुवालसमं करेइ, करित्ता	द्वादशम् करोति, कृत्वा
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता	सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
चउद्दसमं करेइ, करित्ता	चतुर्दशं करोति, कृत्वा
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता	सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
तइया लया ।३।	तृतीया लता ।३।

सूत्र ४

अट्ठमं करेइ, करित्ता	अष्टमं करोति, कृत्वा
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता	सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
दसमं करेइ, करित्ता	दशमं करोति, कृत्वा
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता	सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
दुवालसमं करेइ, करित्ता	द्वादशं करोति, कृत्वा
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता	सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
चउद्दसमं करेइ, करित्ता	चतुर्दशम् करोति, कृत्वा
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता	सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
सोलसमं करेइ, करित्ता	षोडशं करोति, कृत्वा

[हिंदी शब्दार्थ] [हिन्दी भाव]

सूत्र ३

फिर सात उपवास किये, करके
सर्वकामगुणित पारणा किया, करके
उपवास किया, करके
सर्वकामगुणित पारणा किया, करके
बेला किया, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
तेला किया, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
चार उपवास किये, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
पांच उपवास किये, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
छः उपवास किये, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
इस प्रकार तृतीय लता पूर्ण हुई ।३।

बेला किया और सर्वकामगुण पारणा किया,
तेला किया और सर्वकामगुण पारणा किया,
यह दूसरी लता हुई ।
सात किये, और सर्वकामगुण पारणा किया,
उपवास किया और सर्वकामगुण पारणा किया,
बेला किया और सर्वकामगुण पारणा किया,
तेला किया और सर्वकामगुण पारणा किया,
चोला किया और सर्वकामगुण पारणा किया,
पचोला किया और सर्वकामगुण पारणा किया,
छह किये और सर्वकामगुण पारणा किया,
यह तीसरी लता हुई ।

सूत्र ४

तेला किया, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
चोला किया, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
पांच उपवास किये, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
छः उपवास किये, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
सात उपवास किये, करके

तेला किया और सर्वकामगुण पारणा किया,
चोला किया और सर्वकामगुण पारणा किया,
पचोला किया और सर्वकामगुण पारणा किया,
छह किये, और सर्वकामगुण पारणा किया,
सात किये, और सर्वकामगुण पारणा किया,

(मूल सूत्र पाठ)	(सस्कृत छाया)
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता	सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
चउत्थं करेइ, करित्ता	चतुर्थं करोति, कृत्वा
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता	सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
छट्ठं करेइ, करित्ता	षष्ठं करोति, कृत्वा
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता	सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
चउत्थी लया ।४।	चतुर्थी लता ।४।

सूत्र ५

चउद्दसमं करेइ, करित्ता	चतुर्दशं करोति, कृत्वा
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता	सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
सोलसमं करेइ, करित्ता	षोडशं करोति, कृत्वा
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता	सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
चउत्थं करेइ, करित्ता	चतुर्थं करोति, कृत्वा
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता	सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
छट्ठं करेइ, करित्ता	षष्ठं करोति, कृत्वा
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता	सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
अट्ठमं करेइ, करित्ता	अष्टमं करोति, कृत्वा
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता	सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
दसमं करेइ, करित्ता	दशमं करोति, कृत्वा
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता	सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
दुवालसमं करेइ, करित्ता	द्वादशं करोति, कृत्वा
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता	सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
पंचमी लया ।५।	पंचमी लता ।५।

सूत्र ६

छट्ठं करेइ, करित्ता	षष्ठं करोति, कृत्वा
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता	सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा

[हिन्दी शब्दार्थ]	[हिन्दी भावार्थ]
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके उपवास किया, करके	उपवास किया और सर्वकामगुण पारणा किया,
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके बेला किया, करके	बेला किया और सर्वकामगुण पारणा किया,
सर्वकामगुणित पारणा किया, करके इस प्रकार चौथी लता पूर्ण हुई ।४।	यह चौथी लता हुई ।

सूत्र ५

छः उपवास किये, करके सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके	छह किये और सर्वकामगुण पारणा किया,
सात उपवास किये, करके सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके	सात किये और सर्वकामगुण पारणा किया,
उपवास किया, करके सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके	उपवास किया और सर्वकामगुण पारणा किया,
बेला किया, करके सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके	बेला किया और सर्वकामगुण पारणा किया
तेला किया, करके सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके	तेला किया और सर्वकामगुण पारणा किया,
चौला किया, करके सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके	चौला किया और सर्वकामगुण पारणा किया,
पांच उपवास किये, करके सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके	पचौला किया और सर्वकामगुण पारणा किया,
इस प्रकार पांचवी लता पूर्ण की ।५।	यह पांचवी लता हुई ।

सूत्र ६

बेला किया, करके सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके	बेला किया और सर्वकामगुण पारणा किया,

[मूल सूत्र पाठ]

अट्ठमं करेइ, करित्ता
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
दसमं करेइ, करित्ता
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
दुवालसमं करेइ, करित्ता
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
चउद्दसमं करेइ, करित्ता
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
सोलसमं करेइ, करित्ता
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
चउत्थं करेइ, करित्ता
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
छट्ठी लया ।६।

[संस्कृत छाया]

अष्टमं करोति, कृत्वा
सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
दशमं करोति, कृत्वा
सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
द्वादशं करोति, कृत्वा
सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
चतुर्दशं करोति, कृत्वा
सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
षोडशं करोति, कृत्वा
सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
चतुर्थं करोति, कृत्वा
सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
षष्ठी लता ।६।

सूत्र ७

दुवालसमं करेइ, करित्ता
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
चउद्दसमं करेइ, करित्ता
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
सोलसमं करेइ, करित्ता
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
चउत्थं करेइ, करित्ता
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
छट्ठं करेइ, करित्ता
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
अट्ठमं करेइ, करित्ता
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता

द्वादशं करोति, कृत्वा
सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
चतुर्दशं करोति, कृत्वा
सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
षोडशं करोति, कृत्वा
सव्वकामगुणियं पारयति, पारयित्वा
चतुर्थं करोति, कृत्वा
सव्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
षष्ठं करोति, कृत्वा
सव्वकामगुणियं पारयति, पारयित्वा
अष्टमं करोति, कृत्वा
सव्वकामगुणियं पारयति, पारयित्वा

[हिन्दी शब्दार्थ]	[हिन्दी भाव]
तेला किया, करके सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके	तेला किया और सर्वकामगुण पारणा किया,
चौला किया, करके सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके	चार किये और सर्वकामगुण पारणा किया,
पांच किये, करके सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके	पाँच किये और सर्वकामगुण पारणा किया,
छः किये, करके सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके	छह किये और सर्वकामगुण पारणा किया,
सात किये, करके सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके	सात किये और सर्वकामगुण पारणा किया,
उपवास किया, करके सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके	उपवास किया और सर्वकामगुण पारणा किया,
यह छट्ठी लता हुई ।	इस तरह छठी लता सम्पूर्ण हुई ।

सूत्र ७

पाञ्च किये, करके सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके	पाच किये और सर्वकामगुण पारणा किया,
छः किये, करके सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके	छह का तप किया और सर्वकामगुण पारणा किया,
सात किये, करके सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके	सात किये और सर्वकामगुण पारणा किया,
उपवास किया, करके सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके	उपवास किया और सर्वकामगुण पारणा किया,
बेला किया, करके सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके	बेले का तप किया और सर्वकामगुण पारणा किया,
तेला किया, करके सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके	तेला किया और सर्वकामगुण पारणा किया,

(मूल सूत्र पाठ)	(संस्कृत छाया)
दसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता सत्तमी लया ।७।	दशमं करोति, कृत्वा सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा सप्तमी लता ।७।

सूत्र ८

एक्काए कालो अट्ठमासा पंच य दिवसा । चउण्हं दो वासा अट्ठमासा वीसं दिवसा । सेसं तहेव जाव सिद्धा ।	एकैकस्याः कालः अष्टमासाः पंच च दिवसाः चतसृणां कालः द्वौ वर्षौ अष्ट- मासाः विंशति दिवसाः । शेषं तथैव यावत् सिद्धा ।

इति सप्तममध्ययनम्

अष्टममध्ययनम्

सूत्र १

एवं रामकण्हा वि ।	एवं रामकृष्णाऽपि ।
णवरं भद्दोत्तर पडिमं उवसंप- ज्जित्ताणं विहरइ ।	विशेषः—भद्रोत्तरप्रतिमाम् उपसंपद्य विहरति ।
तं जहा— दुवालसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता चउद्दसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता सोलसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता अट्ठारसमं करेइ, करित्ता	तद् यथा— द्वादशं करोति, कृत्वा सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा चतुर्दशं करोति, कृत्वा सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा षोडशं करोति, कृत्वा सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा अष्टादशं करोति, कृत्वा

[हिन्दी अन्वय]

चौला किया, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
इस प्रकार पांचवी लता पूर्ण की ।७।

[हिन्दी अर्थ]

चौला किया और सर्वकामगुण पारणा किया,

यह सातवीं लता हुई ।७।

सूत्र ८

इस प्रकार सात लता की परिपाटी का काल आठ महीने और पांच दिन हुआ। चारों परिपाटियों का काल दो वर्ष आठ महीने और बीस दिन हुआ। शेष सूत्रानुसार। पूर्ण आराधना करके अन्त में संलेखना करके यह भी सिद्ध बुद्ध मुक्त हो गई।

इस प्रकार इस तप में सात लताओं की एक परिपाटी हुई। इस तप में भी कुल परिपाटियां चार होती है।

इस में एक परिपाटी का काल आठ महीने और पांच दिन हुए एवं इसी हिसाब से चारों का काल दो वर्ष आठ महीने और बीस दिन होते हैं।

प्रथम परिपाटी के आठ मास और पांच दिनों में उनचास दिन पारणे के और छः मास सोलह दिन तपस्या के होते हैं।

इस प्रथम परिपाटी में पारणों में विगय का त्याग नहीं किया।

दूसरी परिपाटी में पारणा में विगय का त्याग किया।

तीसरी परिपाटी में पारणों में विगय के लेप मात्र का भी त्याग कर दिया।

चौथी परिपाटी में पारणों में आयम्बिल किए।

इन चारों परिपाटियों को पूर्ण करने में दो वर्ष आठ मास और बीस दिन का समय लगा।

शेष चार्या और रेन कृष्णा ने सूत्रानुसार इस तप की साधना की और अन्त में कृश काय होने पर वे भी संलेखना-संथारा कर यावत् सिद्ध-बुद्ध और मुक्त हो गई ।७।

सातवां अध्ययन समाप्त

आठवां अध्ययन

सूत्र १

इसी प्रकार आठवीं रामकृष्णा देवी का अध्ययन भी समझना चाहिये। विशेष यह है कि यह रामकृष्णा देवी भद्रोत्तर प्रतिमा अंगीकार करके विचरण करने लगी। वह (भद्रोत्तर प्रतिमा) इस प्रकार है—
पांच उपवास किये, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
छः उपवास किये, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
सात उपवास किये, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
आठ उपवास किये, करके

[मूल सूत्र पाठ]

सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
वीसइमं करेइ, करित्ता
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
पढमा लया ।१।

[संस्कृत छाया]

सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
विंशतितमं करोति, कृत्वा
सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
(एवं) प्रथमा लता ।१।

सूत्र २

सोलसमं करेइ, करित्ता
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
अट्ठारसमं करेइ, करित्ता
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
वीसइमं करेइ, करित्ता
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
दुवालसमं करेइ, करित्ता
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
चउद्दसमं करेइ, करित्ता
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
बीया लया ।२।

षोडशं करोति, कृत्वा
सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
अष्टादशं करोति, कृत्वा
सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
विंशतितमं करोति, कृत्वा
सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
द्वादशं करोति, कृत्वा
सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
चतुर्दशं करोति, कृत्वा
सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
(एवं) द्वितीया लता ।२।

सूत्र ३

वीसइमं करेइ, करित्ता
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
दुवालसमं करेइ, करित्ता
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
चउद्दसमं करेइ, करित्ता
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
सोलसमं करेइ, करित्ता
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता

विंशतितमं करोति, कृत्वा
सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
द्वादशम् करोति, कृत्वा
सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
चतुर्दशं करोति, कृत्वा
सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
षोडशं करोति, कृत्वा
सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा

[हिंदी शब्दार्थ]

सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
नौ उपवास किये, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
यह प्रथम लता हुई ।१।

[हिंदी अर्थ]

इसी प्रकार आठवां रामकृष्णा देवी का अध्ययन भी समझना चाहिये । विशेष में, यह भी श्रेणिक राजा की रानी और राजा कौणिक की छोटी माता थी । इसने भी दीक्षा ली और आर्या चन्दनबाला की आज्ञा प्राप्त

सूत्र २

सात उपवास किये, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
आठ उपवास किये, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
नौ उपवास किये, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
पचौला किया, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
छः उपवास किये, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
इस प्रकार दूसरी लता पूर्ण की ।२।

कर रामकृष्णा 'भद्रोत्तर प्रतिमा' तप अंगीकार करके विचरने लगीं ।

इसकी विधि इस प्रकार है—
पाँच किया और सर्वकामगुण पारणा किया,
छह किये और सर्वकामगुण पारणा किया,
सात किये और सर्वकामगुण पारणा किया,
आठ किये और सर्वकामगुण पारणा किया,
नव किये और सर्वकामगुण पारणा किया ।
यह प्रथम लता हुई ।१।
सात किये और सर्वकामगुण पारणा किया ।
आठ किये और सर्वकामगुण पारणा किया ।
नव किये और सर्वकामगुण पारणा किया ।

सूत्र ३

नौ उपवास किये, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
पचौला किया, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
छः उपवास किये, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
सात उपवास किये, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके

पचौला किया और सर्वकामगुण पारणा किया
छह किये और सर्वकामगुण पारणा किया,
यह दूसरी लता हुई ।२।
नव किया और सर्वकामगुण पारणा किया,
पाँच किया और सर्वकामगुण पारणा किया,
छः किये और सर्वकामगुण पारणा किया ।
सात किये और सर्वकामगुण पारणा किया ।

[मूल सूत्र पाठ]

अट्ठारसमं करेइ, करित्ता
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
तइया लया ।३।

[संस्कृत छाया]

अष्टादशं करोति, कृत्वा
सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
(एवं) तृतीया लता ।३।

सूत्र ४

चउद्दसमं करेइ, करित्ता
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
सोलसमं करेइ, करित्ता
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
अट्ठारसमं करेइ, करित्ता
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
वीइसमं करेइ, करित्ता
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
दुवालसमं करेइ, करित्ता
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
चउत्थी लया ।४।

चतुर्दशं करोति, कृत्वा
सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
षोडशं करोति, कृत्वा
सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
अष्टादशं करोति, कृत्वा
सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
विंशतितमं करोति, कृत्वा
सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
द्वादशं करोति, कृत्वा
सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
चतुर्थी लता ।४।

सूत्र ५

अट्ठारसमं करेइ, करित्ता
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
वीसइमं करेइ, करित्ता
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
दुवालसमं करेइ, करित्ता
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
चउद्दसमं करेइ, करित्ता
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
सोलसमं करेइ, करित्ता

अष्टादशं करोति, कृत्वा
सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
विंशतितमं करोति, कृत्वा
सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
द्वादशं करोति, कृत्वा
सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
चतुर्दशं करोति, कृत्वा
सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
षोडशं करोति, कृत्वा

[हिन्दी शब्दार्थ]

आठ उपवास किये, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
इस प्रकार तीसरी लता पूर्ण की ।३।

[हिन्दी अर्थ]

आठ का तप किया और सर्वकामगुण पारणा किया।

यह तीसरी लता हुई ।३।

सूत्र ४

छह उपवास किये, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
सात किये, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
आठ उपवास किये, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
नौ उपवास किये, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
पांच उपवास किये, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
इस प्रकार चौथी लता पूर्ण हुई ।४।

छह किये और सर्वकामगुण पारणा किया।

सात किया और सर्वकामगुण पारणा किया।

आठ किया और सर्वकामगुण पारणा किया।

नव किया और सर्वकामगुण पारणा किया।

पाँच किये और सर्वकामगुण पारणा किया।

यह चौथी लता हुई ।४।

सूत्र ५

आठ उपवास किये, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
नौ उपवास किये, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
पांच उपवास किये, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
छह उपवास किये, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
सात उपवास किये, करके

आठ किया और सर्वकामगुण पारणा किया,

नव किया और सर्वकामगुण पारणा किया,

पांच किया और सर्वकामगुण पारणा किया,

छह किया और सर्वकामगुण पारणा किया,

[मूल सूत्र पाठ]	[संस्कृत छाया]
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता पंचमी लया ।५।	सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा पंचमी लता ।५।

सूत्र ६

एक्काए कालो छम्मासा वीस य दिवसा ।	एतस्याः (पंचलतात्मिकायाः) कालः षण्मासाः विंशतिश्च दिवसाः ।
चउण्हं कालो दो वरिसा दो मासा वीस य दिवसा ।	चतसृणां कालः द्वौ वर्षौ द्वौ मासौ विंशतिश्च दिवसाः ।
सेसं तहेव जहा काली जाव सिद्धा ।	शेषं तथैव यथा काली यावत् सिद्धा ।

इति अष्टममध्ययनम्

नवममध्ययनम्

एवं पिउसेण कण्हा वि	एवं पितृसेनकृष्णाऽपि ।
णवरं—मुत्तावली तवोकम्मं उवसंपज्जित्ताणं विहरइ ।	विशेषः—मुक्तावली तपः कर्म उपसंपद्य विहरति ।
तं जहा—	तद्यथा—
चउत्थं करेइ, करित्ता	चतुर्थं करोति, कृत्वा
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता	सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
छट्ठं करेइ, करित्ता	षष्ठं करोति, कृत्वा
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता	सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
चउत्थं करेइ, करित्ता	चतुर्थं करोति, कृत्वा
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता	सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
अट्ठमं करेइ, करित्ता	अष्टमं करोति, कृत्वा

[हिन्दी शब्दार्थ]

सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
इस प्रकार पांचवी लता पूर्ण की ।५।

[हिन्दी अर्थ]

आठ किया और सर्वकामगुण पारणा किया,
यह पांचवी लता हुई ।५।

सूत्र ६

इस प्रकार एक परिपाटी का काल छः मास और बीस दिन हुआ। चारों का काल दो वर्ष दो मास और बीस दिन हुए। शेष उसी प्रकार काली रानी के समान रामकृष्णा भी संलेखना करके यावत् सिद्ध बुद्ध मुक्त हो गई।

इस तरह पांच लताओं की एक परिपाटी हुई। ऐसी चार परिपाटियां इस तप में होती हैं। एक परिपाटी का काल छः महीने और बीस दिन, एवं चारों परिपाटियों का काल दो वर्ष, दो महीने और बीस दिन होते हैं। शेष उसी प्रकार पूर्व वर्णन के अनुसार समझना चाहिये।
काली के समान आर्या रामकृष्णा भी संलेखना करके यावत् सिद्ध-बुद्ध मुक्त हो गई।

आठवां अध्ययन समाप्त

नवमां अध्ययन

इसी प्रकार पितृसेन कृष्णा का अध्ययन भी समझना चाहिए।
विशेष—उन्होंने मुक्तावली तप को अंगीकार किया और विचरने लगी। मुक्तावली तप का वर्णन इस प्रकार है—
उन्होंने उपवास किया और
सर्वकामगुण पारणा किया, करके
बेला किया, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
उपवास किया, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
तेला किया, करके

ऐसे ही पितृसेन कृष्णा का नवमां अध्ययन भी समझना चाहिये। इसमें विशेष इतना है कि गुरुणी आर्या चन्दन बाला की आज्ञा पाकर पितृसेन कृष्णा आर्या 'मुक्तावली' तप को अंगीकार करके विचरने लगी, जो इस प्रकार है—

उपवास किया और सर्वकामगुण पारणा किया,

बेला किया और सर्वकामगुण पारणा किया,

उपवास किया और सर्वकामगुण पारणा किया,

[हिन्दी शब्दार्थ]

सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
उपवास किया, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
चौला किया, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
उपवास किया, करके
सर्वकामगुणित पारणा किया, करके
पाँच उपवास किये, करके
सर्वकामगुणित पारणा किया, करके
उपवास किया, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
छः उपवास किये, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
उपवास किया, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
सात उपवास किये, करके
सर्वकामगुणित पारणा किया, करके
उपवास किया, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
आठ उपवास किये, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
उपवास किया, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
नौ उपवास किये, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
उपवास किया, करके
सर्वकामगुणित पारणा किया, करके

[हिन्दी अर्थ]

तेला किया और सर्वकामगुण पारणा किया,

उपवास किया और सर्वकामगुण पारणा किया,

चौला किया और सर्वकामगुण पारणा किया,

उपवास किया और सर्वकामगुण पारणा किया,

पाँच किये और सर्वकामगुण पारणा किया,

उपवास किया और सर्वकामगुण पारणा किया,

छह किया और सर्वकामगुण पारणा किया,

उपवास किया और सर्वकामगुण पारणा किया,

सात किया और सर्वकामगुण पारणा किया,

उपवास किया और सर्वकामगुण पारणा किया,

आठ किये और सर्वकामगुण पारणा किया,

उपवास किया और सर्वकामगुण पारणा किया,

नव किये और सर्वकामगुण पारणा किया,

उपवास किया और सर्वकामगुण पारणा किया,

[मूल सूत्र पाठ]

बावीसइमं करेइ, करित्ता
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
चउत्थं करेइ, करित्ता
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
चउवीसइमं करेइ, करित्ता
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
चउत्थं करेइ, करित्ता
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
छव्वीसइमं करेइ, करित्ता
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
चउत्थं करेइ करित्ता
सव्वकामगुणियं पारेइ पारित्ता
अट्ठावीसइमं करेइ, करित्ता
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
चउत्थं करेइ, करित्ता
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
तीसइमं करेइ, करित्ता
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
चउत्थं करेइ, करित्ता
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
बत्तीसइमं करेइ, करित्ता
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
चउत्थं करेइ, करित्ता
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
चोत्तीसइमं करेइ, करित्ता
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
चउत्थं करेइ, करित्ता

[संस्कृत छाया]

द्वाविंशतितमं करोति, कृत्वा
सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
चतुर्थं करोति, कृत्वा
सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
चतुर्विंशतिं करोति, कृत्वा
सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
चतुर्थं करोति, कृत्वा
सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
षड्विंशतितमं करोति, कृत्वा
सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
चतुर्थं करोति, कृत्वा
सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
अष्टाविंशतितमं करोति, कृत्वा
सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
चतुर्थं करोति कृत्वा
सर्वकामगुणितं पारयति पारयित्वा
त्रिंशत्तमं करोति, कृत्वा
सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
चतुर्थं करोति, कृत्वा
सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
द्वात्रिंशत्तमं करोति, कृत्वा
सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
चतुर्थं करोति, कृत्वा
सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
चतुस्त्रिंशत्तमं करोति, कृत्वा
सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
चतुर्थं करोति, कृत्वा

(हिन्दी शब्दार्थ)

दस उपवास किये, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
उपवास किया, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
ग्यारह उपवास किये, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
उपवास किया, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
बारह उपवास किये, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
उपवास किया, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
तेरह उपवास किये, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
उपवास किया, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
चौदह उपवास किये, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
उपवास किया, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
पन्द्रह उपवास किये, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
उपवास किया, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
सोलह उपवास किये, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
उपवास किया, करके

(हिन्दी अर्थ)

दस किये और सर्वकामगुण पारणा किया,

उपवास किया और सर्वकामगुण पारणा किया,

ग्यारह किये और सर्वकामगुण पारणा किया,

उपवास किया और सर्वकामगुण पारणा किया,

बारह किये और सर्वकामगुण पारणा किया,

उपवास किया और सर्वकामगुण पारणा किया,

तेरह किये और सर्वकामगुण पारणा किया,

उपवास किया और सर्वकामगुण पारणा किया,

चौदह किये और सर्वकामगुण पारणा किया,

उपवास किया और सर्वकामगुण पारणा किया,

पद्रह किये और सर्वकामगुण पारणा किया,

उपवास किया और सर्वकामगुण पारणा किया,

सोलह किये और सर्वकामगुण पारणा किया,

उपवास किया और सर्वकामगुण पारणा किया,

[मूल सूत्र पाठ]	[संस्कृत छाया]
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता	सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
चउत्थं करेइ, करित्ता	चतुर्थ करोति, कृत्वा
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता	सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
बत्तीसइमं करेइ, करित्ता	द्वात्रिंशत्तमं करोति, कृत्वा
सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता	सर्वकामगुणितं पारयति, पारयित्वा
एवं ओसारेइ जाव चउत्थं करेइ,	एवम् अवसारयति यावत् चतुर्थं करोति,
करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ ।	कृत्वा सर्वकामगुणितं पारयति ।
एक्काए कालो एक्कारस मासा	एकस्याः (परिपाट्या) कालः एकादश
पण्णरस य दिवसा ।	मासाः पंचदश च दिवसाः ।
चउण्हं तिण्णि वरिसा	चतसृणां कालस्त्रीणि वर्षाणि
दस य मासा ।	दश च मासाः ।
सेसं तहेव जाव सिद्धा ।६।	शेषं तथैव यावत् सिद्धा ।६।

इति नवममध्ययनम्

दसममध्ययनम्

सूत्र १

एवं महासेणकण्हा वि ।	एवं महासेनकृष्णाऽपि ।
णवरं आयंबिलवड्ढमाणं	विशेषः—आचामाम्लवर्धमानं
तवोकम्मं उवसंपज्जित्ताणं विहरइ ।	तपः कर्म उपसंपद्य विहरति ।
तं जहा—	तद्यथा—
आयंबिलं करेइ, करित्ता	आचामाम्लं करोति, कृत्वा
चउत्थं करेइ, करित्ता	चतुर्थं करोति, कृत्वा
बे आयंबिलाइं करेइ, करित्ता	द्वे आचामाम्ले करोति, कृत्वा
चउत्थं करेइ, करित्ता	चतुर्थं करोति, कृत्वा
तिण्णि आयंबिलाइं करेइ, करित्ता	त्रीणि आचामाम्लानि करोति, कृत्वा
चउत्थं करेइ, करित्ता	चतुर्थं करोति, कृत्वा
चत्तारि आयंबिलाइं करेइ, करित्ता	चत्वारि आचामाम्लानि करोति, कृत्वा
चउत्थं करेइ, करित्ता	चतुर्थं करोति, कृत्वा

[हिन्दी शब्दार्थ]

सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
उपवास किया, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
पन्द्रह उपवास किये, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया, करके
इस प्रकार वैसे ही एक एक उतारते हुए यावत् उपवास किया, करके
सर्वकामगुणयुक्त पारणा किया।
एक परिपाटी का काल ग्यारह महीने पन्द्रह दिन चारों में तीन वर्ष दस महीने लगे। शेष उसी प्रकार यावत् संलेखना करके पितृसेनकृष्णा भी सिद्ध हो गई।

[हिन्दी पद्य]

उपवास किया और सर्वकामगुण पारणा किया

पन्द्रह किये और सर्वकामगुण पारणा किया,

इस प्रकार वैसे ही एक एक उतरा उतारते जाते हैं, यावत् अन्त में उपवास करके सर्वकामगुण पारणा किया। इस तरह यह एक परिपाटी हुई। एक परिपाटी का काल ग्यारह महीने और पन्द्रह दिन होते हैं। ऐसी चार परिपाटियां इस तप में होती हैं। इन चारों परिपाटियों में तीन वर्ष दस महीने का समय लगता है।

शेष वर्णन पूर्व की तरह समझना चाहिये।

इति नवम अध्ययन

दसम अध्ययन

सूत्र १

इसी प्रकार महासेनकृष्णा का अध्ययन है। विशेष यह है कि वह आयंबिल वर्धमान तप को अंगीकार करके विचरने लगी। जो इस प्रकार है—
एक आयंबिल करके
उपवास किया, करके
फिर दो आयंबिल करके
उपवास किया, करके
फिर तीन आयंबिल किये, करके
उपवास किया, करके
चार आयंबिल तप किये, करके
उपवास किया, करके

अन्त में अत्यन्त दुर्बल होने पर आर्या पितृसेन कृष्णा भी संलेखना संथारा करके सिद्ध-बुद्ध और सब दुःखों से मुक्त हो गई।

इसी प्रकार महासेन कृष्णा का दसवां अध्ययन भी समझना चाहिये। इसमें विशेष इतना ही है कि महासेन कृष्णा 'वर्द्धमान आयंबिल' तप को अंगीकार करके विचरने लगी। जो इस प्रकार है—

प्रारम्भ में एक आयंबिल करके उपवास किया,

दो आयंबिल किये और उपवास किया,

तीन आयंबिल किये और उपवास किया,

[मूल सूत्र पाठ]

पंच आयंबिलाइं करेइ, करित्ता
चउत्थं करेइ, करित्ता
छ आयंबिलाइं करेइ, करित्ता
चउत्थं करेइ, करित्ता
एकोत्तरियाए वुड्ढीए आयंबिलाइं
वड्ढंति चउत्थंतरियाइं जाव
आयंबिलसयं करेइ, करित्ता
चउत्थं करेइ ।१।

[संस्कृत छाया]

पञ्च आचामाम्लानि करोति, कृत्वा
चतुर्थं करोति, कृत्वा
षडाचामाम्लानि करोति, कृत्वा
चतुर्थं करोति, कृत्वा
एकोत्तरिकया वृद्ध्या आचामाम्लानि
वर्धन्ते चतुर्थान्तरितानि यावत्
आचामाम्लशतं करोति, कृत्वा
चतुर्थं करोति ।१।

सूत्र २

तएणं सा महासेरण कण्हा अज्जा
आयंबिल वड्ढमाणं तवोकम्मं
चोद्दसेहिं वासेहिं तिहि य
मासेहिं वीसेहि य अहोरत्तेहिं
अहासुत्तं जाव सम्मं काएणं फासेइ
जाव आराहित्ता, जेणेव अज्ज-
चंदणा अज्जा तेणेव उवागच्छइ ।
उवागच्छित्ता अज्जचंदणं अज्जं
वंदइ णमंसइ, वंदित्ता णमंसित्ता
बहूहिं चउत्थेहिं जाव भावेमाणी
विहरइ ।
तएणं सा महासेणकण्हा अज्जा
तेणं ओरालेणं जाव उवसोभेमाणी
उवसोभेमाणी चिट्ठइ ।२।
तएणं तीसे महासेणकण्हाए
अज्जाए अण्णया कयाइं पुव्वरत्तावरत्त
काले चिंता, जहा

ततः खलु सा महासेन कृष्णा आर्या
आचामाम्लवर्द्धमानं तपः कर्म
चतुर्दशभिः वर्षैः त्रिभिश्च
मासैः विंशत्या च अहोरात्रैः
यथासूत्रं यावत् सम्यक् कायेन स्पृशति,
यावत् आराध्य, यत्रैव आर्यचन्दना
आर्या तत्रैव उपागच्छति ।
उपागत्य आर्यचन्दनाम् आर्याम्
वन्दते नमस्यति, वन्दित्वा नमस्यित्वा
बहुभिः चतुर्थैः यावत् भावयन्ती
विहरति ।
ततः खलु सा महासेनकृष्णा आर्या
तेन उदारेण तपसा यावत् उपशोभमाना
उपशोभमाना तिष्ठति ।२।
ततः खलु तस्याः महासेन कृष्णायाः
आर्यायाःअन्यदा कदाचिद् पूर्वरात्रापररात्र
काले चिंता, यथा

[हिंदी शब्दार्थ]

पांच आयंबिल किये, करके
उपवास किया, करके
छः आयंबिल किये, करके
उपवास किया, करके
इस प्रकार एक एक की वृद्धि से आयंबिल बढ़ाये बीच बीच में उपवास किया यावत् सौ आयंबिल किये, करके उपवास किया।

[हिंदी अर्थ]

चार आयंबिल किये और उपवास किया,

पांच आयंबिल किये और उपवास किया,

छह आयंबिल किये और उपवास किया,

ऐसे एक एक की वृद्धि से आयंबिल बढ़ाये। बीच बीच में उपवास किया, इस प्रकार सौ आयंबिल करके उपवास किया।

सूत्र २

तब उस महासेनकृष्णा आर्या ने आयंबिलवर्धमान तप कर्म को चौदह वर्ष तीन महीने और बीस अहोरात्र में सूत्रानुसार यावत् विधिपूर्वक काया से स्पर्शन किया, यावत् आराधना करके जहां आर्य चन्दना आर्या थी वहां आई। आकर आर्यचन्दना आर्या को वन्दन नमस्कार करती है, वन्दन नमस्कार करके बहुत से उपवासों से आत्मा को भावित करती हुई विचरने लगी। तब वह महासेनकृष्णा आर्या उस प्रधान तप से यावत् शोभायमान होकर रहने लगी।

फिर महासेनकृष्णा आर्या को अन्य किसी दिन पिछली रात्रि के समय स्कंदक के समान धर्म चिन्ता उत्पन्न हुई।

यह वर्द्धमान आयम्बिल तप हुआ।

इस प्रकार महासेन कृष्णा आर्या ने इस 'वर्द्धमान आयम्बिल' तप की आराधना चौदह वर्ष तीन महीने और बीस अहोरात्र की अवधि में सूत्रानुसार विधि पूर्वक पूर्ण की।

आराधना पूर्ण करके आर्या महासेन कृष्णा जहां अपनी गुरुणी आर्या चन्दनबाला थी, वहां आई और चन्दनबाला को वंदना नमस्कार करके उनकी आज्ञा प्राप्त करके बहुत से उपवास आदि तप से आत्मा को भावित करती हुई विचरने लगी। इस महान् तप के तेज से महासेन कृष्णा आर्या शरीर से दुर्बल हो जाने पर भी अत्यंत देदीप्यमान लगने लगी।

एक दिन पिछली रात्रि के समय महासेन कृष्णा आर्या को धर्म चिंता उत्पन्न हुई— "मेरा शरीर तपस्या से दुर्बल हो गया है तथापि अभी तक मुझ में उत्थान, बल, वीर्य आदि है। इसलिये कल सूर्योदय होते ही आर्या चन्दनबाला के पास जाकर उनसे आज्ञा लेकर संलेखणा संथारा करू।"

[मूल सूत्र पाठ]	[संस्कृत छाया]
खंदयस्स जाव अज्जचंदणं अज्जं	स्कंदकस्य यावत् आर्यचन्दनाम्
आपुच्छइ जाव संलेहणा,	आर्याम् आपृच्छति यावत् संलेखना,
कालं अणवकंखमाणी विहरइ ।	कालमनवकांक्षन्ती विहरति ।
तएणं सा महासेण कण्हा अज्जा	ततः खलु सा महासेनकृष्णा आर्या
अज्जचंदणाए अज्जाए अंतिए	आर्यचंदनामार्याम् अन्तिके
सामाइयमाइयाइं एक्कारस	सामायिकादीनि एकादशांगानि
अंगाइं अहिज्जित्ता वहुपडिपुण्णाइं	अधीत्य वहुप्रतिपूर्णानि
सत्तरस वासाइं परियायं	सप्तदश वर्षाणि पर्यायं
पालइत्ता (पाउणित्ता) मासियाए	पालयित्वा मासिकया संलेखनया
संलेहणाए अप्पाणं झूसित्ता सट्ठिभत्ताइं	आत्मानं जोपयित्वा षष्टिं भक्तानि
अणसणाए छेदित्ता जस्सट्ठाए	अनशनेन छित्वा यस्यार्थाय
कीरइ जाव तमट्ठं आराहेइ	क्रियते यावत् तमर्थम् आराधयति ।
चरिम उस्सासणीसासेहिं	चरमोच्छ्वासनिःश्वासैः
सिद्धा वुद्धा ।	सिद्धा वुद्धा ।
अट्ठ य वासा आदी,	अष्ट च वर्षाणि आदिः,
एकोत्तरियाए जाव सत्तरस ।	एकोत्तरिकया यावत् सप्तदशी ।
एसो खलु परियाओ,	एष खलु पर्यायः,
सेणियभज्जाण णायव्वो ।।	श्रेणिक भार्याणां ज्ञातव्यः ।।

इति दशममध्ययनम्

इति अष्टमः वर्गः

एवं खलु जंवू ! समणेणं	एवं खलु जम्बू ! श्रमणेन
भगवया महावीरेणं आइगरेणं	भगवता महावीरेण आदिकरेण
जाव संपत्तेणं अट्ठमस्स	यावत् (मुक्ति) संप्राप्तेन अष्टमस्य
अंगस्स अंतगडदसाणं	अंगस्य अंतकृद्दशानाम्
अयमट्ठे पण्णत्ते त्ति वेमि ।	अयमर्थः प्रज्ञप्तः इति व्रवीमि ।
अंतगड दसाणं अंगस्स	अन्तकृद्दशानाम् अंगस्य
एगो सुयक्खंधो अट्ठवग्गा	एकः श्रुतस्कन्धो अष्ट- वर्गाः ।

[हिन्दी शब्दार्थ]

आर्यचन्दना आर्या को पूछकर यावत् संलेखना की और काल (मृत्यु) को नहीं चाहती हुई विचरने लगी । फिर उस महासेनकृष्णा आर्या ने आर्यचन्दना आर्या के पास सामयिकादि ग्यारह अंगों का अध्ययन किया, पूरे सत्रह वर्ष तक चारित्र्य धर्म को पालन करके एक मास की संलेखना से आत्मा को भावित करके साठ भक्त अनशन को पूर्ण कर यावत् जिस कार्य के लिये संयम लिया था उसकी पूर्ण आराधना करके अन्तिम श्वास उच्छ्वास से सिद्ध बुद्ध मुक्त हुई । एवं श्रेणिक राजा की भार्याओं में से पहली काली देवी की आठ वर्ष की दीक्षा, दूसरी की नव वर्ष इस प्रकार एक एक बढ़ाते हुए यावत् दसवीं रानी का १७ वर्ष दीक्षा काल जानें ।

[हिन्दी अर्थ]

तदनुसार दूसरे दिन सूर्योदय होने पर आर्या महासेन कृष्णा ने आर्या चन्दन बाला के पास जाकर वन्दन नमस्कार करके संथारे की आज्ञा मांगी । आज्ञा लेकर यावत संलेखणा संथारा किया और काल की इच्छा नहीं रखती हुई धर्मध्यान शुक्लध्यान में तल्लीन रहते हुए विचरने लगी ।

उन महासेनकृष्णा आर्या ने आर्य चंदना आर्या के पास सामायिक आदि ग्यारह अंगों का अध्ययन किया । पूरे सत्रह वर्ष तक श्रमणी चारित्र-धर्म का पालन किया अन्त में एक मास की संलेखना से आत्मा को भावित करते हुए साठ भक्त अनशन तप किया । इस तरह जिस लक्ष्य-प्राप्ति हेतु संयम ग्रहण किया था उस की पूर्ण आराधना करके महासेन कृष्णा आर्या अंतिम श्वास-उच्छ्वास में अपने सम्पूर्ण कर्मों को नष्टकर सिद्ध-बुद्ध और मुक्त हो गई ।

इन दसों रानियों के दीक्षापर्याय काल का वर्णन एक ही गाथा में किया गया है । इन में से प्रथम काली आर्या ने आठ वर्ष तक चारित्र पर्याय का पालन किया ।

दसवां अध्ययन समाप्त

आठवां वर्ग समाप्त

इस प्रकार हे जम्बू ! श्रमण भ० महावीर जो कि धर्म की आदि करने वाले यावत् मुक्ति पधारे हैं, ने आठवें अंग अंतगडदशासूत्र का यह अर्थ कहा है, ऐसा मैं कहता हूँ ।
अंतगडदशा अंग में एक श्रुतस्कन्ध और आठ वर्ग हैं ।

दूसरी सुकाली आर्या ने नौ वर्ष तक इस प्रकार क्रमश एक एक रानी के चारित्र पर्याय में एक एक वर्ष की वृद्धि होती गई । अन्तिम दसवी रानी महासेन कृष्णा आर्या ने १७ वर्ष तक दीक्षा पर्याय का पालन किया । ये सभी राजा श्रेणिक की राणियां थीं और कौणिक राजा की छोटी माताएं थी ।

[मूल सूत्र पाठ]	[संस्कृत छाया]
अट्ठसु चेव दिवसेसु उद्दिसिज्जंति ।	अष्टसु चैव दिवसेषु उद्दिश्यन्ते ।
तत्थ पढमवितियवग्गे दस	तत्र प्रथम द्वितीय वर्गयोः दश
दस उद्देसगा, तइयवग्गे	दश उद्देशकाः, तृतीय वर्गे
तेरस उद्देसगा, चउत्थपंचम-	त्रयोदश उद्देशकाः, चतुर्थ-
वग्गे दस दस उद्देसगा,	पंचम वर्गयोः दश दश उद्देशकाः,
छट्ठवग्गे सोलस उद्देसगा,	षष्ठ वर्गे षोडश उद्देशकाः,
सत्तमवग्गे तेरस उद्देसगा,	सप्तम वर्गे त्रयोदश उद्देशकाः,
अट्ठम वग्गे दस उद्देसगा ।	अष्टम वर्गे दश उद्देशकाः ।
सेसं जहा णायाधम्मकहाणं ।	शेषं यथा ज्ञाताधर्मकथानाम् ।

सिरि अंतगडदसांगसुत्तं समत्तं



[हिन्दी शब्दार्थ]

आठ ही दिनों में इनका वाचन होता है। इसमें प्रथम व द्वितीय वर्ग में दस दस उद्देशक हैं, तीसरे वर्ग में तेरह उद्देशक हैं, चौथे और पाचवे वर्ग में दस दस उद्देशक हैं, छठे वर्ग में सोलह उद्देशक हैं, सातवें वर्ग में तेरह उद्देशक हैं, आठवें वर्ग में दस उद्देशक हैं। शेष वर्णन ज्ञाताधर्म कथा में है।

[हिन्दी अर्थ]

श्री सुधर्मा—'हे जम्बू ! अपने शासन की अपेक्षा से धर्म की आदि करने वाले श्रमण भगवान् महावीर, जो मोक्ष पधार गये हैं, ने आठवें अग अन्तगडदशा का यह भाव, यह अर्थ प्रज्ञप्त किया है।

भगवान् से जैसा भाव, जैसा अर्थ मैंने सुना उसी प्रकार मैंने तुम्हें कहा है।"

इस अन्तगडदशा सूत्र में एक श्रुतस्कन्ध है और आठ वर्ग हैं। आठ दिनों में इसका वाचन होता है।

इसमें प्रथम और दूसरे वर्ग के दस दस अध्ययन हैं। तीसरे वर्ग में तेरह उद्देशक (अध्ययन) हैं। चौथे और पाचवें वर्ग में दस-दस उद्देशक (अध्ययन) हैं।

छठे वग में सोलह अध्ययन हैं।

सातवें वग में तेरह और आठवें वग में दस अध्ययन हैं।

शेष वर्णन ज्ञाता धर्मकथाग सूत्र में है।

इस सूत्र में नगर आदि का वणन सक्षेप से किया गया है। नगर आदि से लेकर बोधि-लाभ और अन्त क्रिया आदि का विस्तारपूर्वक वर्णन ज्ञाता धर्म कथाग सूत्र के समान जानना चाहिये।

अतकृद्दशागसूत्र समाप्तम्

शुद्धि-पत्र

पृष्ठ	कालम	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
८	२	१५	कोउर्थ	कोऽर्थ
९	२	१८	पद्य	पद्म
१०	१	१७	असोभवर	असोगवर
१२	१	नीचे से दूसरी	अधगवण्हिहस्स	अधगवण्हिस्स
१४	१	३	सयाणिज्जसि	सयणिज्जसि
१५	२	नीचे से दूसरी	गौतममार	गौतमकुमार
१९	१	७	समाइयमाइयाइ	सामाइयमाइयाइ
१९	२	७	सामयिकादीनि	सामायिकादीनि
३०	१	१२	अजयसेणे	अजियसेणे
३१	२	१८	अनिहतऋप	अनिहतऋपु
४४	१	२१	एसिसए	सरिसए
७०	१	८	गयसुकुमालस्स	गयसुकुमालस्स कुमारस्स
७०	२	८	गजसुकुमालस्य	गजसुकुमालस्य कुमारस्य
७१	१	८	गजसुकुमाल	गजसुकुमाल कुमार
८०	१	७	घ	य
२०६	२	२२ व ३०	श्रवण	श्रमण

पृष्ठ	कालम	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
११०	१	२	संपत्तेण	संपत्तेणं
१२०	२	१६	एतदर्थं	एतदर्थँ
१३६	१	अन्तिम	अरिट्ट	अरिट्ठ
१४६	२	१४	तत्रैव	यत्रैव
१६०	२	२०	पर्सुपासते	पर्युपासते
२००	१	७	च	य
२४०	२	१०	चतस्त्रः	चतस्रः
२५४	१	१०	वीइसमं	वीसइमं
२६४	२	१	पञ्च	पञ्च



टिप्पणियां

१	अभवत्	पेज १	'आसीत' इत्यर्थ।
२	वर्ण्य	पेज १	वर्णक, वर्णयितु योग्य इत्यर्थ।
३	उस समय	पेज १	अवसर्पिणी काल के चतुर्थ आरक में, जब कि भगवान् महावीर अपने चरण विहार से इस भारत भूमि को पावन कर रहे थे।
४	वर्णनीय	पेज ३	वर्णन करने योग्य।
५.	उत्तर पूर्व दिशा भाग में	पेज ३	ईशान कोण में।
६.	महा हिमवान् पर्वत के समान	पेज ३	महान् हिमालय पर्वत जैसे गुणों से सुशोभित। जिस प्रकार महा हिमवान् पर्वत क्षेत्र की मर्यादा करता है, उसी प्रकार राजा प्रजा के लिये मर्यादा, जिसे आज की परिभाषा में आचार संहिता कहा जा सकता है, निर्धारित करता है, एवं जिस पर स्वयं भी आचरण करता है। इस दृष्टि से यह राजा पौराणिक मलय पर्वत के समान कीर्ति रूपी सुगन्ध से सुरभित एवं कर्त्तव्य पालन करने कराने में अत्यन्त जागरूक एवं दृढ होने से मेरु तुल्य अचल था। आज के शासक एवं शासित इससे बहुत कुछ सीख ले सकते हैं।
७-८-९	नगरी चैत्य, राजा	पेज ३	इनके विस्तृत कथात्मक एवं गुणात्मक वर्णन की जानकारी के लिये 'औपपातिक सूत्र' का अवलोकन करें।
१०-११	परिसा णिग्गया जाव परिसा पडिगया	पेज ४	परिसा णिग्गया जाव परिसा पडिगया (परिषद् आई यावत् परिषद् लौट गई) उस काल की प्रचलित भाषा में परिसा-परिषद् शब्द नागरिक अथवा ग्रामीण जनों के अर्थ में प्रयुक्त होता था, जो भगवान् का अथवा धर्माचार्यों एवं धर्मोपदेशकों का धर्मोपदेश सुनने के लिये अपने अपने घरों से निकल कर आते थे एवं धर्म श्रवण के पश्चात् पुनः लौट जाते थे।
१२	यावत्	पेज ५	यह शब्द इस सूत्र-ग्रन्थ में स्थान-स्थान पर बहुलता से प्रयुक्त हुआ है। इस शब्द का सामान्य शाब्दिक अर्थ होता है "——से लेकर—— पर्यन्त"। पर विशेष अर्थ में यह उस काल की सूत्र एवं लेखन पद्धति

की एक शैली के रूप में विकसित हो गया था और बहुलता से प्रयोग में लिया जाता था, जिसके अनुसार 'जाव' (यावत्) शब्द का प्रयोग कथन के संक्षिप्तिकरण का द्योतक समझा जाता था।

जहां-जहां जिस-जिस विषय के निश्चित पाठ होते थे, उनमें से जिस सन्दर्भित विषय के पाठ को कहना होता था तो उसके लिये 'जाव' कहकर या लिखकर यह दर्शा दिया जाता था कि अमुक अमुक पाठ अमुक-अमुक जगह या शब्द से लेकर अमुक-अमुक जगह या शब्द तक समझ लिया जाय। जैसे "आइगरेण जाव सपत्तेणं" वाक्य प्रयोग में यह अर्थ लिया जाना अपेक्षित है कि तीर्थंकर अरिहन्त प्रभु की स्तुति के लिये जो पाठ निश्चित है उसमें से "आइगरेण" शब्द या जगह से लेकर "सपत्तेण" शब्द या जगह तक समझ लिया जाय। इसमें "आइगरेण" से लेकर "सपत्तेण" का पाठ इस तरह से आएगा—"आइगरेणं तित्थयराणं सयं सबुद्धाण, पुरिसुत्तमाण, पुरिससिहाण, पुरिसवर पुंडरियाण,पुरिसवर गन्धहत्थिण, लोगुत्तमाण, लोगनाहाण, लोगहियाणं लोगपइवाण, लोगपज्जोयगराण,अभयदयाण, चक्खुदयाणं, मग्गदयाण,सरणदयाण, जीवदयाण, बोहिदयाण, धम्मदयाण, धम्मदेसियाण, धम्मनायगाणं, धम्मसारहिण, धम्मवर चाउरतचक्कवट्ठीण, दीवोत्ताण, सरणगइ पइट्ठाण, अप्पडिहय वरनाणदसणधराण, विअट्टछउमाण, जिणाणं जावयाण, तिन्नाण तारयाण, बुद्धाण बोहियाण, मुत्ताणं, मोयगाण, सव्वन्नुण सव्वदरिसिण, सिव मयल मरुअमणतमक्खय मव्वाबाह-मप्पुणरावित्ति सिद्धिगइ नामधेयं ठाण सम्पत्तेण"

इस प्रकार जहां जहां जिस जिस सन्दर्भ में "जाव" शब्द का प्रयोग आए वहां वहां वही सन्दर्भित पाठ समझना चाहिये।

२३. पांच सौ साधुओं के परिवार सहित — पेज ५ — कुछ टीकाकारों ने इसका भिन्न अर्थ भी किया है। जैसे पांच सौ साधु उनके अनुशासन में थे, साथ थे—ऐसा नहीं। पर यह अर्थ ठीक नहीं बैठता। पांच सौ साधु साथ लेकर चलना उस वक्त की सामाजिक, भौगोलिक एवं राजनैतिक आदि परिस्थितियों में असम्भव हो, ऐसा नहीं लगता, फिर शब्द स्पष्ट हैं एवं यथार्थसूचक हैं।—(सम्पादक)

२४. पांच वर्ण — पेज ५ — इन्द्र, नील, वैडूर्य, पद्म, रागादि।

२५. मर्यादापालक — पेज ११ — टिप्पण संख्या ६ देखें।

२६. सार्थवाह — पेज १३ — वणिक्, जो उस समय की पद्धति के अनुसार पूरे समूह के साथ व्यापार हेतु देशाटन पर निकलते थे क्योंकि उस युग में आवागमन के साधन आज की तरह उन्नतावस्था में नहीं थे, अतः चोर डाकू

आदि के आक्रमण की सम्भावनाएं निरन्तर रहती थी। उनसे रक्षा करने आदि की व्यवस्थाना पूरा भार भी स्वयं पर लेकर चलता था।

१७ महाहिमवान पेज १३ इसका अर्थ भी टिप्पण संख्या ९ के समान मानना चाहिये।

१८ देवानन्दा की तरह उपासना करती है पेज ४७ भगवान् महावीर स्वामी की माता देवानन्दा रथ पर चढ़कर जिस प्रकार भगवान् के दर्शन हेतु गई एवं वन्दन नमस्कार करके उपासना करने लगी एवं जिसका विस्तार से वर्णन भगवतीसूत्र आदि शास्त्रों में मिलता है, वैसा ही वर्णन यहां भी समझना चाहिये।

१९. यथा अभय पेज ६० (जिस प्रकार अभयकुमार ने) ज्ञाताधर्म कथांग, (घासीलाल जी म०) अध्ययन १ सूत्र १४ पृष्ठ १९८ २००

२० यहां मेघकुमारे पेज ६४ ज्ञाता धर्म कथांग अध्ययन १ सूत्र १७ पृष्ठ २३७-२११ (घासीलाल जी म सा)

२१ यहां मेहे पेज ७२ ज्ञाता धर्म कथांग अध्ययन १ सूत्र ३२-३८, पृष्ठ ३७८ ४३२ (घासी लाल जी म सा)

२२ यहां महाबलस्स पेज ७६ भगवती सूत्र भाग ८ शतक ११, उद्देशक ११ पृष्ठ ४११-५५५ (प्रमानियमितिवचसा)

२३ निक्षेपक पेज १०९ उपसंहारक वाक्य। यह शब्द इस भाव का द्योतक है कि प्रभु महावीर ने इस अध्ययन अथवा वर्ग का यह अर्थ कहा है।

२४ गणहरं सहेच पेज १४१ इन गणधर मुनि का वर्णन भगवती सूत्र में विस्तार से है कि जिस तरह से भगवान् के दर्शनार्थ एवं धर्मोपदेश श्रवणार्थ गये थे। उसी तरह यहां भी मातापति भी गये।

२५ यथा स्कन्दकस्य पेज १४३ भगवती सूत्र में इनका विस्तृत वर्णन है।

२६ जहां पुण्णभद्द पेज १५५ उववाई सूत्र [घासी लाल जी म सा] सूत्र सं २, पृष्ठ सं २०-२६

२७ उत्क्षेपक पेज १७९ प्रारम्भिक वाक्य। उपोद्घात। भूमिका। यह शब्द इस भाव का द्योतक है कि प्रभु महावीर ने पिछले अध्ययन अथवा वर्ग का जो भाव कहा है वह सुना। अब अगले अध्ययन अथवा वर्ग का क्या अर्थ कथन किया है। यह कृपा कर बताइये।

२८ उत्क्षेपक पेज १८३ टिप्पण संख्या २७ देखें।

२९-३० जहां महाबलस्स पेज १९६ १९७ कृपया टिप्पण सं २२ देखें।

३१ जहां पूरिए पेज १९८ उववाई सूत्र (श्री घासी लाल जी म सा सूत्र ११ पृष्ठ ४९ ५७

३२ जहां उदायणे पेज १९८ भगवती सूत्र (श्री घासी लाल जी म) भाग ११, शतक १३, उद्देशक ६, सूत्र ३, पृष्ठ २१-२२

३३.	उक्खेवओ	पेज १६८ टिप्पण सख्या २७ देखें।
३४.	कूणिक के समान	पेज १६६ टिप्पण संख्या ३१ देखें।
३५	उदायन की तरह	पेज १६६ टिप्पण सख्या ३२ देखें।
३६	निक्षेपक	पेज २०३ टिप्पण संख्या ३३ देखें
३७.	पारित्ता	पेज २२८ सैलाना से प्रकाशित सूत्र में यह शब्द नहीं है। सम्भव है कुछ अन्यों में भी न हो, जो हमारी जानकारी मे न आये हो (सम्पादक)।



अस्वाध्याय

निम्नलिखित ३४ कारण टालकर स्वाध्याय करना चाहिये—

अस्वाध्याय के ३४ कारण

(क) आकाश सम्बन्धी	अस्वाध्याय की काल मर्यादा
१ बड़ा तारा टूटे तो	—एक प्रहर तक
२. उदय अस्त के समय लाल दिशा	—जब तक रहे
३ अकाल में मेघ गर्जना हो तो	—दो प्रहर तक
४ अकाल में बिजली चमके तो	—एक प्रहर तक
५ अकाल मे बिजली कड़के तो	—दो प्रहर तक
६ शुक्ल पक्ष की एकम् दूज व तीज की रातें	—एक प्रहर रात्रि तक
७ आकाश में यक्ष का चिन्ह हो तो	—जब तक दिखाई दे
८ काली धूमर हो तो	—जब तक रहे
९ सफेद धूमर हो तो	—जब तक रहे
१० आकाश मण्डल धूलि से आच्छादित हो तो	—जब तक रहे
(ख) औदारिक एवं ग्रहण सम्बन्धी	
११ तिर्यञ्च जीवों के हड्डी रक्त एवं मांस ६० हाथ के भीतर हो तो	—जब तक रहे
१२ मनुष्य के हड्डी, रक्त एवं मांस १०० हाथ के भीतर हो तो	—जब तक रहे
१३ मनुष्य की हड्डी, यदि जली या धुली न हो तो	—१२ वर्ष तक
१४ अशुचि की दुर्गन्ध	—जब तक आए या दिखाई दे तब तक।
१५. श्मशान भूमि	—सौ हाथ से कम दूर हो तो
१६ चन्द्र ग्रहण खण्ड अवस्था में पूर्ण अवस्था में	—८ प्रहर तक १२ प्रहर तक
१७ सूर्य ग्रहण खण्ड अवस्था में पूर्ण अवस्था में	—१२प्रहर तक —१६प्रहर तक

१८.	राजा अथवा गणाधिपति का अवसान होने पर	... जब तक उत्तराधिकारी घोषित न हो तब तक
१९.	युद्ध स्थान के निकट	....जब तक युद्ध चले तब तक
२०.	उपाश्रय अथवा स्वाध्याय स्थान मे पचेन्द्रिय का शव पड़ा होने पर	....जब तक पड़ा रहे तब तक

(ग) अन्य

२१.	आषाढ मास की पूर्णिमा	.... १ दिन रात
२२.	भाद्रपद मास की पूर्णिमा	.....१ दिन रात
२३.	आश्विन मास की पूर्णिमा	.....१ दिन रात
२४	कार्तिक मास की पूर्णिमा	.....१ दिन रात
२५	चैत्र मास की पूर्णिमा	.....१ दिन रात
२६	आषाढ पूर्णिमा के बाद की प्रतिपदा	.....१ दिन रात
२७.	भाद्रपद पूर्णिमा के बाद की प्रतिपदा	.....१ दिन रात
२८.	आश्विन पूर्णिमा के बाद की प्रतिपदा	.....१ दिन रात
२९.	कार्तिक पूर्णिमा के बाद की प्रतिपदा	.....१ दिन रात
३०.	चैत्र पूर्णिमा के बाद की प्रतिपदा	.....१ दिन रात
३१.	प्रात.	.....१ मुहूर्त भर
३२.	मध्याह्न	....१ मुहूर्त भर
३३.	सध्या	.....१ मुहूर्त भर
३४	अर्द्ध रात्रि	.....१ मुहूर्त भर

नोट .—(१) उपरोक्त अस्वाध्याय के ३४ कारणो के समय को छोड़ कर बाकी समय मे स्वाध्याय करना चाहिये। खुले मुह नही बोलना चाहिये एव दीपक के उजाले में नही बांचना चाहिये ।

(२) मेघ गर्जनादि मे अकाल आर्द्रा नक्षत्र से पूर्व और स्वाति नक्षत्र से बाद का माना गया है।

